रामायण के अमर पात्र

मर्यादा पुरुषोत्तम

श्रीराम

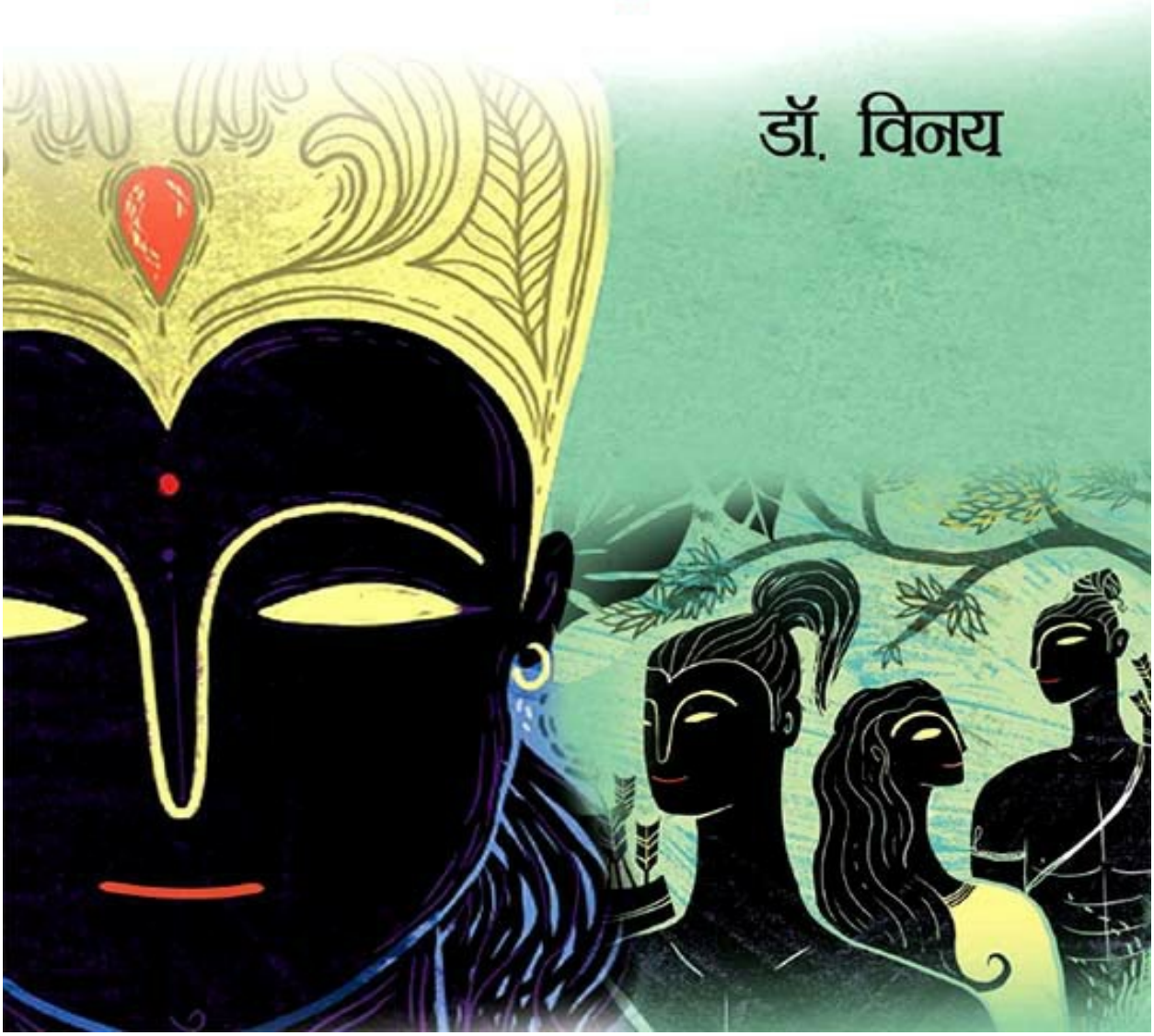

डॉ. विनय

VISIT…

रामायण के अमर पात्र

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

(उपन्यासिक शैली)

eISBN: 978-93-5296-909-8
© प्रकाशकाधीन
प्रकाशक: डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि.
X-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेज-II
नई दिल्ली-110020
फोन: 011-40712200
ई-मेल: ebooks@dpb.in
वेबसाइट: www.diamondbook.in
संस्करण: 2019
मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम
लेखक: डॉ. विनय (पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष
दयालसिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय)

भूमिका

रामायण और महाभारत भारतीय संस्कृति के विरद कोष हैं और इन दोनों में रामायण का सम्मान भक्ति की दृष्टि से महाभारत से अधिक है। यद्यपि रामायण में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का प्रतिपादन है और महाभारत में कौरवों पांडवों की कथा के बहाने कृष्ण का ब्रह्मतत्त्व प्रतिष्ठित किया गया है। रामायण का मान सामान्य जन में इसलिए अधिक है कि उसके चरित नायक राम का जीवन चरित्र व्यक्ति और समाज दोनों के लिए जीवन मूल्य की दृष्टि से अनुकरणीय है।

आदिकवि बाल्मीकि ने सम्पूर्ण रामकथा में राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में प्रतिपादित कर एक महान सांस्कृतिक आधार प्रतिष्ठित किया था और उसके बाद अनेक प्रकार से राम कथा का स्वरूप विकसित होता रहा। जैन धर्मावलंबियों ने अपने ढंग से इस क्या को प्रस्तुत किया और बाद के आने वाले रचनाकारों ने -हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता- के आधार पर राम की कथा को उसके मूल्य की रक्षा करते हुए अपने ढंग से प्रस्तुत किया है। गोस्वामी तुलसीदास ने रामकथा को भक्ति का व्यावहारिक केन्द्रबिन्दु बना दिया। उसके राम भक्ति के आधार हैं और उनका जीवन ही अनुकरणीय है। गोस्वामी तुलसीदास के बाद भी राम कथा को विभिन्न रूपों में अनुभव किया जाता रहा और जहां-जहां इस विराट भावभूमि में कवियों की दृष्टि में, जो स्थल मानवीय दृष्टि से उपेक्षित रह गये उन्हें केन्द्र बनाकर राम की कथा में अन्य आयाम जोड□ने का उपक्रम भी जारी रहा।

रामकथा हमारे सामने जहां भक्ति का बहुत बड□ा मूल्य प्रस्तुत करती है वहां कुछ ऐसे प्रश्न भी छोड□ देती है जिनका कोई तर्कपूर्ण समाधान शायद नहीं मिल पाता। और जब मन किसी बात को मानने से मना कर दे और उसका तर्कपूर्ण समाधान न हो तब तक गहरे रचनात्मक द्वन्द्व की रचना होती है। हमने रामकथा के विभिन्न पात्रों को उस कथा के मूल आदर्शवृत्त में ही रखकर मनन और अनुसंधान से, औपन्यासिक रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है। क्योंकि रामकथा में प्रत्येक पात्र किसी-न-किसी जीवनदृष्टि या जीवनमूल्य को भी प्रतिपादित करता है। राम यदि आदर्श पुत्र, पति हैं तो लक्ष्मण आदर्श भाई के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इसी प्रकार अन्य पात्रों का मूल मूल्यवृत्त भी देखा जा सकता है। अब आधुनिक दृष्टि में यह मूल्यवृत्त कहां तक हमारे जीवन में रच सकता है, यह बहुत बड□ा प्रश्न है और इसलिए किसी भी लेखक का यह रचनात्मक प्रयास कि पुराकथा के पात्रों में क्या कोई मानसिक द्वन्द्व रहा होगा? क्या उन्होंने सहज मानव के रूप में होंठों को मुस्कराने की और आंखों को रोने की आज्ञा दी होगी? और तब हम यह अनुभव करते हैं कि उस विराट मूल्य के आलोक में छोटा-सा मानवीय प्रकाशखण्ड उठाकर अपने दृष्टिकोण से अपने पाठकों के सामने प्रस्तुत कर सकें। रामगाथा के विशिष्ट पात्रों पर औपन्यासिक रचनावली के पीछे हमारा यही दृष्टिकोण रहा है कि हम उस विराट को अपनी दृष्टि से अपने लिए किस रूप में सार्थक कर सकते हैं।

गोस्वामी जी के शब्दों में -

सरल कवित, कीरति विमल, सुनि आदरहिं सुजान।
सहज बैर बिसराय रिपु, जो सुनि करै बखान।।

और हम इस रास्ते पर यदि नहीं चल पाते तो चलने की सोच तो सकते हैं। हमारे सामने सबसे बड□ा प्रश्न यह रहा कि जहां-जहां रामकथा के बड□-बड□ ग्रंथ कुछ नहीं बोलते वहां उसी मूल चेतना में हम गद्य में कैसे उस अबोले के यथार्थ को चित्रित करें। पुराकथा की दृष्टि से जो सच हो सकता हो और आधुनिक दृष्टि से जो स्वीकार भी हो तो ऐसे कथा तंत्रों को कल्पनाशीलता से रचते हुए हमारा हमेशा ध्यान रहता है कि मनुष्य के अंतर का उदात्त भाव भी मुखर हो सके क्योंकि हमने जब-जब इन बड□ पात्रों से साक्षात्कार किया है तब-तब एक उदात्त तत्त्व की आलोक की तरह से दृष्टि के सामने आया है। उस आलोक में से थोड□ा-बहुत अब हमारी ओर से आपके सामने है।

-डॉ. अश्विनी पाराशर

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

जन्म और बाल्यकाल

सरयू नदी के किनारे बसा कौशल नाम से प्रसिद्ध एक बहुत बड□ा जनपद था। धन-धान्य से संपन्न सभी लोग यहां हर प्रकार से सुखी थे। इस जनपद में ही समस्त लोकों में विख्यात अयोध्या नाम की नगरी थी, जिसे स्वयं महाराज मनु ने पुराकाल में बनवाया और बसाया था।

यह सुंदर नगरी बारह योजन लंबी और तीन योजन चौड□ी थी। सुंदर-सुंदर फल देने वाले वृक्षों से सजा राजमार्ग, खिले हुए फूलों से लदे फूलदार पौधे उपवन की शोभा को बढ□ा रहे थे।

बाहर से आने वाले हर यात्री को यह नगरी देवराज इन्द्र की अमरावती के समान लगती थी।

बड□-बड□ फाटक, उन पर खड□ जागरूक पहरेदार भीतर अलग-अलग बाजार, शिल्पी और कलाकार, नाटक-मंडलियां, अप्सरा-सी नृत्यांगनाएं, ऊंची-ऊंची अट्टालिकाएं अयोध्या नगरी की शोभा को बढ□ाने वाले महत्त्वपूर्ण अंग थे। लगता था कि यह स्थान देवलोक की तपस्या से प्राप्त हुए सिद्धों के विमान की भांति भूमंडल में सर्वोच्च हैं।

इसी स्वर्गीय छटा वाली विशाल नगरी में अयोध्या के प्रजापालक कौशल नरेश राजा दशरथ का भी सुंदर भव्य राजभवन था। यह अयोध्या अपनी इसी सुंदरता के कारण कौशल की राजधानी थी। यहां कोई भी तो ऐसा नहीं था जो अग्निहोत्र या यज्ञ न करता हो। महाराजा दशरथ के मंत्रीगण भी योग्य, विद्वान, आचारवान और राजा का प्रिय करने वाले थे। इसीलिए महाराज दशरथ की ख्याति दूर-दूर तक फैली हुई थी। महामुनि वसिष्ठ और वामदेव राज्य में माननीय ऋत्विज् थे। इनके अतिरिक्त भी गौतम, मार्कण्डेय, जाबालि आदि भी सम्मान पाते थे। न्याय, धर्म और व्यवस्था के कारण राज्य में सभी को यथोचित सम्मान प्राप्त होता था।

ऐसे गुणवान मंत्रियों के साथ रहकर अयोध्या के राजा दशरथ उस पृथ्वी पर शासन करते थे। उनका कोई शत्रु नहीं था, सभी सामन्त उनके चरणों में मस्तक झुकाते थे। लेकिन संपूर्ण धर्मों को जानने वाले महात्मा राजा दशरथ फिर भी मन से बहुत चिंतित थे। उनके वंश को चलाने वाला कोई पुत्र नहीं था।

केवल एक पुत्री थी जिसका नाम शांता था। महाराज ने शांता का विवाह मुनि कुमार ऋष्य मृग से कर दिया था। यह विभाण्डक मुनि के पुत्र थे।

पुत्र की कामना जमाता के प्राप्त होने पर भी कम नहीं हुई और राजा की चिंता दिन-प्रतिदिन बढ□ती ही रही।

एक दिन महाराज दशरथ ने विचार किया कि यदि अश्वमेध यज्ञ किया जाए तो अवश्य पुत्र

की प्राप्ति हो सकती है। यह सोचकर महाराज ने विद्वान मंत्रियों और कुल-पुरोहित वशिष्ठ, वामदेव तथा जाबालि आदि तपस्वियों को बुलाकर अपने मन की इच्छा को प्रकट करते हुए कहा-

'मैं सदा पुत्र के लिए विलाप करता रहता हूं। पुत्र के अभाव में यह राज्य-सुख मेरे लिए निरर्थक होकर रह गया है, इसलिए मैंने निश्चय किया है कि शास्त्र के अनुसार इस पावन यज्ञ का अनुष्ठान करूं। आप सभी लोग गुणी महात्मा हैं, कृपया मुझे बताइए कि मेरी पुत्र प्राप्ति की इच्छा किस प्रकार पूर्ण होगी?'

'यह तो बहुत अच्छा विचार है राजन!' महामुनि वसिष्ठ ने उनका अनुमोदन करते हुए कहा और उनकी प्रशंसा की।

जाबालि और वामदेव मुनियों ने, सुमंत आदि मंत्रियों ने भी इस पर अपनी प्रसन्नता प्रकट की और समर्थन करते हुए कहा, 'महाराज! यह बहुत उत्तम विचार है। इसके लिए शीघ्र ही यज्ञ-सामग्री का संग्रह किया जाए।'

यज्ञ के लिए विचार करते हुए सरयू नदी के तट पर यज्ञभूमि बनायी गई। भूमंडल में भ्रमण के लिए यज्ञ का अश्व छोड□ा गया और मुनि कुमार ऋषि मृग को यज्ञ का ब्रह्मा नियुक्त किया गया।

महाराज दशरथ के इस पावन यज्ञ में वेद विद्या के अनेक पारंगत ब्राह्मण और ब्रह्मवादी ऋत्विज उपस्थित हुए।

मुनि वसिष्ठ और ऋषि मृग का दोनों के आदेश से शुभ नक्षत्र वाले दिन महाराज दशरथ ने अपनी पत्नी कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा के साथ यज्ञ की दीक्षा ली। इस समय तक यज्ञ का अश्व भी भूमंडल में भ्रमण करके लौट आया था।

इस यज्ञ में विधिवत आहुतियां दी गई, सभी कार्य बिना बाधा और बिना भूल के सम्पन्न हुए। यज्ञ में प्रतिदिन अनेक ब्राह्मण भोजन करते थे, सभी को उनका यथा अनुरूप यज्ञशेष प्राप्त होता था।

अपने कुल की वृद्धि करने वाले महाराज दशरथ ने यज्ञ पूर्ण होने पर होता को दक्षिणा रूप में अयोध्या से पूर्व दिशा का सारा राज्य सौंप दिया। अध्वर्यु को पश्चिम दिशा तथा ब्रह्मा को दक्षिण दिशा का राज्य दिया और उद्गाता को उत्तर दिशा की सारी भूमि दान की।

यह दान देकर महाराज दशरथ अत्यन्त प्रसन्न हुए किन्तु ब्राह्मणों और पुरोहितों ने उनसे निवेदन किया, 'हे महाराज! हम तो वेदों का स्वाध्याय करते हैं, हम इस भूमि का क्या करेंगे। आप तो हे राजन। हमें इस भूमि के मूल्य के समान कोई राशि दें, वही उपयोगी होगा।'

यह देखकर महाराज ने उन्हें गौएं और स्वर्ण मुद्राएं भेंट कीं।

यज्ञ की समाप्ति पर महाराज दशरथ ने मुनि मृग से अपने लिए पुत्र प्राप्ति के लिए अनुष्ठान करने के लिए निवेदन किया।

'राजन। इस कुल के भार को वहन करने में समर्थ आपके यहां चार पुत्र उत्पन्न होंगे।' यह

कहते हुए महामुनि ऋष्य मृग ने अथर्ववेद के मंत्रों से पुत्रेष्टि यज्ञ का प्रारम्भ किया और विधि के अनुसार उसमें आहुतियां डालीं।

सभी देवताओं, सिद्धों, गन्धर्वों और महर्षिगणों ने विधि के अनुसार अपना-अपना भार ग्रहण करने के लिए ब्रह्मलोक में एकत्रित होकर लोक की रचना करने वाले चतुरानन ब्रह्माजी से कहा-

'हे भगवन्! आपकी कृपा का पात्र होकर राक्षस रावण अपने बल से हम सबको कष्ट दे रहा है। जब से आपने उसे वरदान दिया है, उसने तीनों लोकों के प्राणियों का नाकों दम कर रखा है। वह जिसे भी उभरता देखता है, उससे द्वेष करता है और उसका अनिष्ट करता है। वह इतना उद्दण्ड हो गया है कि किसी का कभी भी अपमान कर सकता है। मनुष्यों की तो उसके सामने गिनती ही कुछ नहीं है।'

जैसे ही ब्रह्माजी ने मनुष्य शब्द सुना, वैसे ही उन्होंने कहा, 'लो उस दुरात्मा के वध का उपाय मेरी समझ में आ गया है। उसने वर मांगते समय कहा था कि मैं गन्धर्व, यक्ष, देवता और राक्षसों के हाथ से न मारा जाऊं। मनुष्यों को तुच्छ जानकर ही उसने मनुष्य से अवध्य होने का वरदान नहीं मांगा, इसलिए निश्चय ही उसकी मृत्यु मनुष्य के सिवा कोई दूसरा नहीं कर सकता।'

अभी ब्रह्माजी ये बातें कह ही रहे थे कि तभी गरुड□ पर सवार हो, शरीर पर पीतांबर धारण किए हाथ में शंख, चक्र और गदा लिए जगत के स्वामी विष्णु उपस्थित हो गए। सबने विष्णु से विनम्र भाव से उनकी स्तुति करते हुए कहा, 'हे सर्वव्यापी परमेश्वर! हम तीनों लोकों के हित के लिए आपसे यह विनती कर रहे हैं।'

'हे प्रभो अयोध्या के राजा दशरथ धर्म के ज्ञानी, उदार और महर्षियों के समान तपस्वी हैं, तेजस्वी हैं। उनकी तीन रानियां ही, श्री, और कीर्ति देवियों के समान हैं। हे देव! आप अपने चार स्वरूप बनाकर इन तीनों रानियों के गर्भ से पुत्र रूप में अवतार ग्रहण करें और मनुष्य रूप में प्रकट होकर संसार के प्रमुख कंटक रूप रावण से पृथ्वी को मुक्ति दिलाए।'

सभी देवों, गंधर्वों आदि को इस प्रकार चिंतित देखकर परम उदारमना विष्णु जी ने कहा, 'आपका कल्याण हो, आपका हित करने के लिए मैं रावण को उसके कुल सहित अवश्य नष्ट कर डालूंगा।' इसके पश्चात् विष्णु ने अपने को चार स्वरूपों में प्रकट करके महाराज दशरथ को पिता बनाने का निश्चय किया।

वहां से तत्काल अन्तर्ध्यान होकर विष्णु पुत्रेष्टि यज्ञ कर रहे महाराज दशरथ के यज्ञ में अग्निकुंड से एक विशालकाय पुरुष के रूप में प्रकट हुए और राजा दशरथ से बोले, 'हे राजन! मैं प्रजापति की आज्ञा से यहां आया हूं।' और यह कहते हुए सोने की बनी हुई परात, जिसमें दिव्य खीर भरी हुई थी और वह चांदी के ढक्कन से ढकी हुई थी, उसे अपने हाथ से महाराज को देते हुए कहा, 'यह पुत्र प्राप्त कराने वाली देवताओं की खीर है। यह खीर तुम अपनी योग्य पत्नियों को दो। इसके खाने पर उनको अवश्य पुत्र उत्पन्न होंगे।'

देवताओं द्वारा दिया गया यह प्रसाद पाकर राजा इस प्रकार प्रसन्न हुए मानो किसी गरीब को

बहुत बड□ी सम्पत्ति मिल जाए। खीर देकर वह दिव्य पुरुष वहां से अंतर्ध्यान हो गए और राजा उस खीर को लेकर अन्त:पुर चले आए।

महाराज दशरथ ने उस खीर का आधा भाग महारानी कौशल्या को दे दिया, जो भाग बचा उसका आधा भाग महारानी सुमित्रा को अर्पण किया, जो खीर बच रही उसका आधा भाग तो उन्होंने पुत्र-प्राप्ति के लिए कैकेयी को दे दिया और जो शेष भाग बचा, वह भी महाराज ने सुमित्रा को ही बांट दिया।

उस उत्तम खीर को खाकर महाराज की वे तीनों साध्वी महारानियां शीघ्र ही अलग-अलग रूप में गर्भवती हो गईं। उनके वे गर्भ अग्नि और सूर्य के समान तेजस्वी थे। इस प्रकार अपने मनोरथ में सफल महाराज दशरथ का यज्ञ समाप्त हुआ। देवता लोग अपना-अपना भाग लेकर लौट गए। श्रेष्ठ ब्राह्मण, मुनि और मुनि कुमार ऋष्य मृग भी यथोचित सम्मान पाकर अपने स्थान को लौट गए।

सभी को सम्मानपूर्वक विदा करने के पश्चात समय आने पर जब चैत्र के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि आई तो पुनर्वसु नक्षत्र और कर्क लग्न में ज्येष्ठ महारानी कौशल्या ने दिव्य लक्षणों से युक्त एक पुत्र को जन्म दिया। कौशल्या के गर्भ से उत्पन्न इक्ष्वाकु कुल का आनन्द बढ□ाने वाला यह पुत्र ही विष्णु का अवतार राम कहलाया।

अपने चार पुत्रों के जन्म को देखकर महाराज दशरथ अत्यन्त प्रसन्न हुए। अब उनकी सभी मनोकामनाएं पूरी हो गयी थीं।

प्रजा ने अपने राजा को इस प्रकार प्रसन्न और उल्लासित देखा तो प्रजा की प्रसन्नता का भी कोई ठिकाना नहीं रहा। अयोध्या में बहुत बड□ा उत्सव मनाया गया। इन नक्षत्रों के समान प्रकाशमान पुत्रों के जन्म पर गन्धर्वों ने मधुर गीत गाए। देवों ने दुन्दुभि बजायी। आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी।

ग्यारह दिन बीतने पर महाराज दशरथ ने उन बालकों का नामकरण-संस्कार किया। महामुनि वसिष्ठ ने प्रसन्नतापूर्वक सबके नाम रखे। कौशल्या बड□ी रानी थीं अत: उनके पुत्र का नाम राम रखा। कैकेयी के पुत्र का नाम भरत, सुमित्रा के दोनों पुत्रों का नाम लक्ष्मण और शत्रुघ्न रखा।

इस अवसर पर कारागार से अनेक बन्दी छोड□ दिये गए। सूत, मागध और बन्दीजनों को पुरस्कार स्वरूप भेंट सौंपी गई।

ब्राह्मणों, पुरवासियों और जनपदवासियों को पूरी आस्था और श्रद्धापूर्वक भोजन कराया गया। दान-दक्षिणा से संतुष्ट किया गया।

तीनों माताएं अपने-अपने पुत्रों का मुख निहार-निहार बलिहारी जातीं। अपनी गोद में अपनी संतान को देखकर उन्हें आज अपना नारी होना सार्थक लग रहा था।

पुत्रों के अभाव में महाराज के मन पर दुश्चिन्ता के जो काले बादल घिर आए थे। वे अब छंट चुके थे। अब चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओं के प्रकाश के साथ उदय हो गया था। अयोध्या इस

नामकरण-संस्कार के अवसर पर दुल्हन की तरह सजी हुई थी।

अब धीरे-धीरे ये बालक बड□ होने लगे। महाराज दशरथ का भी अधिक समय अब अपने पुत्रों के साथ ही रमता था। छोटे-छोटे बच्चों की किलकारियों से अयोध्या का राजभवन गूंजने लगा।

धीरे-धीरे ये बच्चे अपने पैरों के सहारे सरकने लगे। देहरी पार कर कुछ बाहर आने लगे। अनेक नौकर-चाकर इनकी सेवा के लिए नियत थे। कितनी ही परिचारिका, दासियां इनकी सेवा-टहल करती थीं।

समय आने पर महर्षि वसिष्ठ ने इन बालकों का जातकर्म-संस्कार सम्पन्न कराया। राम सबसे बड□ थे। गुणों में श्रेष्ठ, उदार और गंभीर प्रकृति के जबकि लक्ष्मण कुछ चंचल थे। भरत और शत्रुघ्न सेवा प्रकृति के थे। राजकुल के ये चार दीपक थे। ज्ञानवान और समस्त सद्गुणों से सम्पन्न-कराने के लिए गुरु वसिष्ठ इन बालकों को शिक्षा देते थे। इनमें राम पराक्रमी और तेजस्वी थे। वे निष्कलंक चन्द्रमा के समान सबके हृदय को शांति देते थे। राम धनुर्विद्या में प्रवीण होने के लिए निरंतर अभ्यास में लगे रहते थे। राम पितृभक्त भी थे। इसीलिए महाराज दशरथ उनसे अधिक प्रेम रखते थे।

लक्ष्मण लक्ष्मी की वृद्धि करने वाले थे। राम के साथ लक्ष्मण सदा उनके साथ ही रहते थे। राम का वे बहुत ध्यान रखते थे। सदा राम की सेवा में ही लगे रहते थे। राम को भी लक्ष्मण के बिना नींद नहीं आती थी।

जब भी राम शिकार के लिए जाते या वन में घोड□ पर सवार होकर जाते, लक्ष्मण सदा उनका अनुसरण करते हुए उनके पीछे उनकी रक्षा के लिए जाते थे। इसी प्रकार भरत को शत्रुघ्न भी प्राणों से अधिक प्यारे थे।

गुरु वसिष्ठ, वामदेव और जाबालि आदि गुरुओं की देख-रेख में ये चारों बालक ही विद्याध्ययन करने लगे। कुशाग्र बुद्धि-वाले ये चारों बालक अपने कर्तव्य में कभी कोई कमी नहीं आने देते थे। बहुत आज्ञाकारी थे। समय पर सारा कार्य करते थे।

बहुत शीघ्र ही इन बालकों ने घुड□सवारी में कुशलता प्राप्त कर ली। चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। धनुर्विद्या में ये प्रवीण हो गए और अनेक अस्त्र-शस्त्र के चलाने का अभ्यास करते हुए ये युद्धकला में चतुर हो गए।

महाराज दशरथ को इनकी प्रगति के समाचार मिलते तो उनका मस्तक गर्व से ऊपर उठ जाता था। उनके पुत्रों की कीर्ति अनेक राज्यों में फैलने लगी। माताएं भी पुत्रों के बारे में जब सुनती कि ये बालक कुल की कीर्ति को बढ□ाने वाले हो रहे हैं तो वे भी गर्व का अनुभव करतीं।

कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी तीनों ने ही समान समय में ही साथ-साथ ही इन पुत्रों को प्राप्त किया था इसलिए सभी पर तीनों का समान स्नेह था। कैकेयी तो भरत की अपेक्षा राम को अधिक मानती व स्नेह करती थीं। किसी रानी में भी विमाता का भाव नहीं था।

इस तरह अयोध्या नगरी क्या पूरा कौशल प्रदेश ही इन पुत्रों के गुणों की चर्चा करते नहीं

थकता था। प्रजा ने तो आने वाले समय में राम को राजा के रूप में देखना भी प्रारम्भ कर दिया था।

महर्षि विश्वामित्र का आगमन

राजदरबार लगा हुआ था। महाराज दशरथ के चारों होनहार पुत्र अब तरुण हो गए थे। महर्षि वसिष्ठ ने राजा दशरथ को बताया-

'महाराज! अब आपके पुत्र सभी विद्याओं में निपुण और कुशल युद्धकला के रूप में महारथ प्राप्त कर चुके हैं'

'आपकी कृपा है, आचार्य!' महाराज ने कहा।

'अब इसका कुशल प्रदर्शन आप देखिए।'

जब मुनि वसिष्ठ ने राम-लक्ष्मण आदि के प्रदर्शन का प्रस्ताव किया तो महाराज दशरथ ने इसके लिए प्रतिहारी को बुलाकर कहा- 'देखो, वीर सुमंत को बुलाओ।'

सुमंत महाराज दशरथ के प्रधानमंत्री थे।

'हे सुमंत! सुनो, महामुनि वसिष्ठ राजकुमारों की शिक्षा-दीक्षा का प्रदर्शन कराना चाहते हैं। तुम सरयू के किनारे इस रंग मण्डप का आयोजन करो।'

'जैसी आज्ञा, महाराज!'

तुरन्त ही आदेशानुसार मण्डप तैयार करा दिया गया, तो एक दिन शुभ मुहूर्त निकलवाकर महाराज के पुत्रों का प्रजा के सम्मुख विशाल युद्ध-कला का प्रदर्शन हुआ।

ज्येष्ठ पुत्र राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न ने धनुष विद्या का कुशल प्रदर्शन किया। लक्ष्मण तो तलवार चलाने की कला में सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हुए। राम का धनुष-प्रदर्शन सर्वोपरि था। भरत और शत्रुघ्न ने भी अपना-अपना कौशल दिखलाया।

तीनों माताएं भी मंडप में उपस्थित थीं। वे तीनों ही अपने पुत्रों का यह चमत्कारी प्रदर्शन देखकर अत्यंत प्रसन्न हुईं। दैव कृपा से आज उनके पुत्र इस योग्य हो गए हैं। यही तो मनाती है हर मां! एक दिन उसका पुत्र बड□ा होकर यश का भागी बने। पिता का सहायक बने। और राम, लक्ष्मण आदि के शारीरिक गठन, उनकी चुस्ती, राज्योचित्त गरिमा, रूप,रंग और पराक्रम तीनों ही माताओं के मन को गौरवान्वित कर रहा था। इस देश के जो राजागण, ऋषि-महर्षि इस आयोजन में सम्मिलित हुए थे, वे भी इन बालकों के प्रदर्शन से अत्यन्त प्रसन्न थे और अपना आशीर्वाद दे रहे थे।

कार्यक्रम समाप्ति पर चारों पुत्रों ने पिता दशरथ और माता कौशल्या आदि के चरण-स्पर्श करते हुए उनका आशीष लिया और इस प्रकार ये सभी लोग उल्लासपूर्वक राजभवन लौट आए।

महर्षि विश्वामित्र ने अयोध्या के राजपुत्रों की यश की गाथा सुनी तो उन्हें अत्यन्त प्रसन्नता हुई। वे अपने कौशिक आश्रम में अपनी साधना में लीन थे और जो यज्ञ वे कर रहे थे, उसमें आसपास में रहने वाले ताड□का, सुबाहु आदि राक्षस अपने दल-बल के साथ कभी भी आक्रमण कर देते थे और विश्वामित्र के यज्ञ को ही क्षति ही नहीं पहुंचाते थे बल्कि आश्रम की

शोभा को भी बिगाड□ जाते थे। परिणाम यह होता था कि बार-बार ऋषि को उनकी इन हरकतों को रोकने के लिए स्वयं उठकर पुरुषार्थ करना होता था और यज्ञ भंग हो जाता था।

बहुत दिनों से विश्वामित्र की अभिलाषा थी कि वीर धनुर्धर राजकुमार यदि उन्हें कुछ समय के लिए उपलब्ध हो जाएं तो वे अपना यज्ञ निष्कंटक रूप से सम्पूर्ण कर सकते हैं।

विश्वामित्र की चिंता सम्पूर्ण आर्यावर्त को राक्षसों से और उनकी आतंककारी प्रवृत्तियों से मुक्त करने की थी। इसीलिए वे यज्ञ के प्रभाव से इस पूरे परिवेश को शान्ति-स्थल बनाना चाहते थे।

विश्वामित्र ने जब महाराज दशरथ के पुत्रों-राम, लक्ष्मण आदि की वीरता और उत्साह के बारे में सुना तो उनके मन में यह भाव जागा कि यदि मुझे इन राजकुमारों को अस्त्र-शिक्षा देने का अवसर मिले तो निश्चय ही मैं इन्हें युद्ध विद्या में पारंगत करके एक निष्कंटक आर्यावर्त की स्थापना कर सकता हूं।

यह विचार करते ही अपने आश्रम में आश्रम-कुमारों और ऋषि-मुनियों को अपना मन्तव्य बताकर गाधिपुत्र महर्षि विश्वामित्र अयोध्या के लिए चल पड□। उनकी दृष्टि में इस समय केवल राम और लक्ष्मण विराजमान थे।

अयोध्या में राजदरबार में अपने मंत्रियों और पुरोहितों के साथ सिंहासन पर विराजे महाराज दशरथ प्रसन्न मुद्रा में अपने पुत्रों के विवाह के विषय में विचार कर रहे थे, तभी प्रतिहारी ने आकर गुहार की-

'महाराज की जय हो, महाराज की जय हो!'

'कहो, क्या समाचार लाए हो?'

'महाराज! कौशिक आश्रम से महातेजस्वी महर्षि विश्वामित्र आए हैं। वे आपके दर्शन के अभिलाषी हैं।'

महाराज दशरथ ने जब यह सुना तो उनके चेहरे पर प्रसन्नता और मस्तक पर चिंता की रेखाएं खिंच आयी। कारण स्पष्ट था, महर्षि विश्वामित्र महातपस्वी और क्रोधी भी थे। प्रसन्न होने पर वे बड□-से-बड□ा वरदान दे सकते थे लेकिन इच्छा पूर्ण होते न देख वे शाप देने में भी संकोच नहीं करते थे।

महर्षि विश्वामित्र के अकस्मात आने पर मुनि वसिष्ठ को भी आश्चर्य मिश्रित प्रसन्नता हुई।

'जाओ, उनको सम्मानपूर्वक राजसभा में बुला लाओ।'

आदेश पाते ही द्वारपाल लौट गया और कुछ ही क्षण बाद अपने तेजस्वी ललाट से प्रकाश फैलाते हुए महर्षि विश्वामित्र राजसभा में पधारे।

महर्षि विश्वामित्र के आगमन को जानकर सभा में उपस्थित सभी राजागण और नगर श्रेष्ठ आदि सावधान हो गए। महाराज दशरथ ने स्वयं महर्षि वसिष्ठ और वामदेव के साथ उनकी अगवानी की। ऐसा लग रहा था कि मानो देवराज इन्द्र ब्रह्मा का स्वागत कर रहे थे।

प्रज्ज्वलित तेज से दीप्त कठोर गति महर्षि विश्वामित्र का दर्शन करके सभी राजाओं का

मुखमंडल प्रसन्नता से खिल उठा। शास्त्रीय विधि से महर्षि का अर्घ्य निवेदन करते हुए उनका स्वागत-सत्कार किया गया। इसके पश्चात् महाराज दशरथ ने उनको उनके सम्मान योग्य प्रतिष्ठित आसन पर सुशोभित कराया और निवेदन किया-

'मुनिवर। आप कुशल तो हैं? आश्रम में सभी आश्रमवासी सुखी होंगे। आज आकस्मिक रूप में आपको यहां पाकर यह कौशल प्रदेश अपना सौभाग्य मानते हुए अत्यन्त प्रसन्नता अनुभव कर रहा है। आपने अयोध्या नगरी को अपने दर्शनों से कृतार्थ किया, हम आपके आभारी हैं।'

महर्षि विश्वामित्र ने कहा, 'हे राजन। हम तो तपस्वी आत्मा हैं। हमारा क्या सुख और क्या दु:ख। जीवन के मोह से दूर, ईश्वर-उपासना और परम तत्त्व की खोज ही हमारा ध्येय है। आप कहिए आपका नगर, आपका राज्य-कोष, बंधु-बांधव सब कुशल तो हैं? अब तो आप अपने योग्य और कुशल पुत्रों के पिता हैं, सम्पूर्ण इच्छाओं के पूर्ण होने पर आपके यहां राज्यलक्ष्मी की कृपा बनी हुई है।'

'आपके राज्य की सीमा के निकटवर्ती राजागण तो आपके सम्मुख नतमस्तक हैं, आपने तो उनको अपने यश से ही जीत लिया है, आपके यहां यज्ञ-यज्ञादि, देवकर्म और अतिथि सत्कार तो विधिपूर्वक होता ही है।'

'यह सब आपकी कृपादृष्टि और आशीर्वाद का ही फल है महात्मन्!'

महाराज दशरथ से उनकी कुशल क्षेम पूछने पर महर्षि विश्वामित्र ने वसिष्ठ आदि मुनियों से उनके कुशल समाचार जाने। इसके पश्चात् सभी लोग प्रसन्नतापूर्वक मुनि की उपदेश भरी बातें सुनते रहे और उनकी जिज्ञासा को शान्त करते रहे।

महाराज दशरथ ने कहा, 'हे मुनि! अब आप कृपया अपने आने का प्रयोजन बताएं क्योंकि आज मुझे ऐसा लग रहा है कि जिस प्रकार किसी मरणधर्मा मनुष्य को अमृत की प्राप्ति हो जाए, सूखे प्रदेश में वर्षा के जल से सिंचन हो जाए, किसी की खोई हुई निधि मिल जाए अथवा किसी संतानहीन को अपनी इच्छा के अनुरूप अपनी पत्नी के गर्भ से पुत्र प्राप्त हो जाए, हे मुनिवर! मुझे आपके आगमन से उसी प्रकार प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है और मैं यह सोच नहीं पा रहा हूं कि किस प्रकार आपका स्वागत करूं। आपके आगमन से यह अयोध्या नगरी धन्य हो गई और आज मेरा जन्म सफल हो गया।' 'अभी कल ही तो हमारे यहां रंग मंडप में चारों राजकुमारों ने अपनी युद्ध विद्या का कुशल प्रदर्शन किया है। आज सौभाग्य से आप यहां पधार गए हैं। आप सरीखे ब्राह्मण शिरोमणि का प्रात:काल दर्शन किसी सौभाग्यशाली को ही होता है जो आपके आगमन से मुझे आज प्राप्त हुआ है। अब आप कृपया यह बताएं कि मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं?'

'आपने आज अपने दर्शन देकर मेरे घर को तीर्थ का रूप दे दिया है। आपने अनेक पुण्य क्षेत्रों की यात्रा की है, आप जहां गए हैं आपके चरणचिह्नों के निशान और उनका प्रभाव आज भी वहां अंकित है। कृपया आदेश करें, मैं आपके आशीर्वाद से और अपनी क्षमता से उसका पालन कर सकूं।'

'हे उत्तम व्रत का पालन करने वाले महर्षि, यदि आपकी कृपा से मैं आपके मनोरथ को जान लूंगा तो निश्चय ही कौशल प्रदेश के अभ्युदय के लिए मैं उसका अक्षरश: पालन करूंगा।'

'यह तो संदेह की गुंजाइश है ही नहीं कि आप अपने मन में यह विचार करें कि कार्य सिद्ध होगा या नहीं, आप तो केवल आज्ञा दें।'

'आज तो निश्चय ही मेरे अभ्युदय का समय आ गया है।'

विश्वामित्र ने महर्षि वसिष्ठ की ओर दृष्टि डालते हुए कहा, 'हे राजन! जिस सभा में ब्रह्मर्षि वसिष्ठ के समान तपोमूर्ति उपस्थित हों, उसके अभ्युदय में क्या संदेह हो सकता है! मैं तुम्हारे विनय-भाव, हृदय के सच्चे उद्‌गारों को सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ हूं। हे राजन! ये बातें आप ही के योग्य हैं, इस पृथ्वी पर आपके समान कोई दूसरा उदार वचन बोलने वाला राजा और कहां है? और आप क्यों न हों जब वसिष्ठ आपके कुल पुरोहित और मार्गदर्शक हैं।'

'तुमने जिस उदारता से मेरा कार्य सिद्ध करने की प्रतिज्ञा की है, तो हे राजन! रघुकुल की आन को ध्यान में रखते हुए तुम्हें उसे पूरा करना होगा।'

'मैं बहुत दिन से एक सिद्धि यज्ञ करने का प्रयास कर रहा हूं मेरा यह यज्ञ इच्छा रूप धारण करने वाले राक्षस बार-बार विघ्न डालकर भंग कर रहे हैं।'

'मेरे इस यज्ञ का अधिकांश भाग पूरा हो चुका है, अब इसकी समाप्ति के समय मारीच और सुबाहु अपने दल-बल के साथ उसमें विघ्न डालने के लिए कटिबद्ध हैं। उन्होंने मेरी यज्ञवेदी पर रक्त और मांस की वर्षा कर दी है और मुझे लग रहा है कि यदि कोई उचित उपाय नहीं किया गया तो मेरा सारा पुरुषार्थ अकारथ हो जाएगा। अत: हे राजन! इस यज्ञ की सुरक्षा के लिए मुझे आपकी सहायता की आवश्यकता है।'

'क्योंकि मैं जानता हूं कि यदि मैंने क्रोध करके उन राक्षसों को शाप दे दिया तो उनका नाश तो हो जाएगा लेकिन मेरा तप भंग हो जाएगा। बड□ कठिन मनोयोग से ही अपने क्रोध को शान्त कर पाया हूं। मेरे सिद्धियज्ञ में किसी को शाप नहीं दिया जाता।'

'इसलिए हे राजन! आप अपने सत्य, पराक्रमी, शूरवीर और ज्येष्ठ पुत्र श्रीराम को मेरी सेवा में भेज दें। मुझे विश्वास है कि मेरी सुरक्षा में रहते हुए वह अपने तेज से, अपने कौशल और पराक्रम से उन विनाशकारी राक्षसों का नाश कर देंगे और इसके प्रतिदान में मैं इन्हें महादेव शंकर द्वारा प्रदत्त दिव्य पाशुपतास्त्र और अनेक अमोघ शक्तिशाली अस्त्रों का ज्ञान दान करूंगा।'

'इस श्रेय को पाकर राम तीनों लोकों में अपनी ख्याति फैलाएंगे। मुझे विश्वास है कि राम के पराक्रम के सामने वे राक्षस किसी भी प्रकार से ठहर नहीं पायेंगे।'

'और यह भी निश्चित है कि श्रीराम के अलावा और कोई वीर उन राक्षसों को मारने का साहस नहीं कर सकता। अपने बल के घमण्ड के कारण ये दोनों पापी राक्षस कालपाश के अधीन हो गए हैं, अत: राम के सामने नहीं टिक पायेंगे।'

'हे राजन! मैं आपसे प्रतिज्ञा करता हूं कि आपके पुत्रों का कोई अनिष्ट नहीं होगा। राम क्या हैं, कितने तेजस्वी और पराक्रमी हैं, यह तो महामुनि विश्वामित्र भी जानते हैं।' महाराज दशरथ

ने जब महामुनि विश्वामित्र के मुख से राम के मांगे जाने की बात सुनी तो वे हतप्रभ रह गये। एक क्षण को लगा कि वे अचेत हो जाएंगे।

दशरथ के सामने राम का सलोना मुखड□ा, कोमल गाल, प्रिय लगने वाली छवि घूम गई। इस बाल किशोर को किस प्रकार वे अपने आंखों से दूर कर पाएंगे, यह उनके सामने एक भीषण समस्या बन गयी थी।

महाराज दशरथ को तो स्वप्न में भी उम्मीद नहीं थी कि महामुनि विश्वामित्र प्राणप्रिय पुत्र की मांग करेंगे। विश्वामित्र ने जब महाराज दशरथ को मोहासक्त जाना तो उन्होंने कहा, 'राजन! अब तो राम बड□ हो गये हैं, आप उनके प्रति इतनी आसक्ति न रखें। आप तो क्षत्रिय हैं और जानते हैं कि क्षत्रिय का दूसरा घर युद्धभूमि होता है और फिर मैं तो केवल कुछ ही समय के लिए इनको ले जा रहा हूं। आप इसमें विलंब न करें क्योंकि यदि विलंब हुआ तो मेरे यज्ञ का समय व्यतीत हो जाएगा।'

यह कहकर महात्मा विश्वामित्र दशरथ के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगे। महाराज दशरथ तो किंकर्तव्यविमूढ□ से हो गए थे।

विश्वामित्र से अपने लिए सम्बोधन सुनकर राजा ने कहा-

'महर्षि! मेरा पुत्र राम तो अभी कठिनता से सोलह वर्ष का हुआ है। वह राक्षसों के साथ युद्ध की क्षमता रखता है, मुझे इसमें संदेह है। मैं आपकी सेवा में अपनी अक्षौहिणी सेना को भेजता हूं जिसका पालक और स्वामी मैं हूं और यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं स्वयं चलकर उन निशाचरों का वध करूंगा। आप निष्कंटक रूप से अपना सिद्धियज्ञ पूर्ण कीजिए। मेरे सैनिक और योद्धा राक्षसों के साथ जूझने की योग्यता रखते हैं।'

'और मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि जब तक शरीर में प्राण रहेंगे तब तक निशाचरों के साथ लड□ता रहूंगा और आपको आश्वस्त करता हूं कि मेरे द्वारा सुरक्षित आपका आश्रम राक्षसों के भय से दूर रहेगा। आप आदेश करें, मैं आपके साथ चलने के लिए प्रस्तुत हूं।' विश्वामित्र ने महाराज दशरथ के इस वक्तव्य में छिपी राम के प्रति उनकी आसक्ति को जानते हुए मुस्कराकर कहा, 'राजन! मुझे कोई आपत्ति नहीं कि मैं आपको साथ ले चलूं लेकिन मैं राम को ले चलने का जो संकल्प ले चुका हूं उसके पीछे मूल उद्देश्य तो यही है कि आपके वह राम अयोध्या के राजसिंहासन को सुशोभित करेंगे, उनमें इतनी क्षमता है, आवश्यकता है उसे धार देने की। अभी उन्हें युद्ध-विद्या के साथ व्यवहार-बुद्धि भी सीखनी है। वह बल एवं बुद्धि से सम्पन्न होकर सम्पूर्ण आर्यावर्त में रघुकुल की मान-मर्यादा को उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित करायेंगे।'

'आप यह संदेह न करें कि राम राक्षसों से युद्ध करने योग्य नहीं हैं। राक्षसों की माया और छल-कपट, दोनों की ही काट मैं राम को सिखाऊंगा। मैं उसे युद्ध-कला में निपुण कर दूंगा राजन।'

विश्वामित्र की यह राम को ले जाने की दृढ□ धारणा को देखकर महाराज दशरथ ने कहा, 'हे मुनि! इस बुढ□ापे में बड□ी कठिनाई से मुझे पुत्रों की प्राप्ति हुई है और इसमें भी राम मुझे

चारों पुत्रों में ज्येष्ठ होने के कारण सबसे अधिक प्रिय हैं।'

'और फिर ये राक्षस कैसे पराक्रमी हैं, कैसा उनका डीलडौल है, राम उन राक्षसों का सामना कैसे कर पायेंगे, यही मेरे लिए चिंता का विषय है।'

दशरथ की यह चिंता देखकर मुनि ने कहा-

'हे राजन। आप जानते होंगे, रावण नाम का एक प्रसिद्ध राक्षसराज लंका का अधिपति है, वह महर्षि पुस्त्य का पौत्र और विश्रवा का पुत्र है। कठोर तपस्या करके उसने ब्रह्माजी से यह वरदान प्राप्त कर लिया है कि उसे देव, गन्धर्व, यक्ष या राक्षस कोई नहीं मार सकता। इस वरदान के प्रभाव से वह दुष्टअभिमानी स्वयं को तीनों लोकों का स्वामी मानने लगा है और मृत्यु से मुक्त अपने को अजर-अमर मानता है। वह अपने समक्ष किसी का भी अपमान करने में नहीं हिचकता, उसका स्वयं का भाई विभीषण उसके-राज्य में इस प्रकार वास करता है, जैसे दांतों के मध्य जीभ।'

'हे राजन! वह महाबली निशाचर स्वयं यज्ञ में विघ्न नहीं डालता बल्कि अपने सहायकों के द्वारा वह यह कार्य कराता है। उसी के बल के घमण्ड में ये मारीच और सुबाहु राक्षस इस स्थान पर अपना आतंक मचाए हुए हैं, जिनको समाप्त करना आवश्यक है, और हे राजन! यह कार्य केवल राम ही कर सकते हैं। अत: आप बिना किसी संशय और संकोच के उन्हें मेरे साथ भेज दें।'

भयग्रस्त हुए महाराज दशरथ ने विनती करते हुए मुनि विश्वामित्र से कहा, 'हे मुनिवर! जब मैं स्वयं को उस दुरात्मा के सम्मुख असमर्थ जान रहा हूं तो फिर बालक राम की तो बात ही क्या? वह दुष्ट तो युद्धभूमि में बड□-बड□ बलवानों का भी बल हर लेता है और मेरा पुत्र राम तो युद्ध की कला से भी अभी पूरी तरह परिचित नहीं है। अभी इसकी अवस्था ही क्या है? इसलिए राम को आपके साथ भेजने में मुझे बड□ा भय लग रहा है।' 'मारीच और सुबाहु जैसे दैत्य तो युद्ध में यमराज के समान हैं, इसलिए यदि वे ही आपके यज्ञ में विघ्न डालने वाले हैं तो मैं उनका सामना करने के लिए अपने पुत्र को नहीं दूंगा।'

'आप अपनी प्रतिज्ञा से विमुख हो रहे हैं। राजन, पहले मेरी मांगी हुई वस्तु को देने की प्रतिज्ञा करके यदि तुम उसे तोड□ना चाहते हो तो इसका अर्थ यह हुआ कि तुम रघुवंशियों की परम्परा को तोड□ रहे हो। तुम्हारा यह व्यवहार तो कुल के विनाश का सूचक है। मुझे लगता है, क्षत्रिय होकर भी तुम्हें अब शायद वृद्धावस्था के कारण पुत्र मोह सता रहा है, तो फिर हे राजन! मैं जैसे आया था, वैसे ही लौट रहा हूं तुम अपनी प्रतिज्ञा को मिथ्या करके अपने प्रियजनों के बीच सुख से रहो।'

महर्षि विश्वामित्र के कुपित होते ही सारी पृथ्वी भय से कांप उठी, देवगण चिंतित हो गए। इस प्रकार संसार को त्रस्त जानकर महर्षि वसिष्ठ ने कहा-

'महाराज! आप तो इक्ष्वाकु वंश में साक्षात धर्म के समान हैं, आपको धर्म का परित्याग नहीं करना चाहिए।'

'आपने प्रतिज्ञा की है और वैसे भी अतिथि-सत्कार के अन्तर्गत यह आता है कि अतिथि को निराश नहीं लौटाना चाहिए। आप नहीं जान रहे, आपका यह अस्वीकार आपके कुल की मर्यादा को नष्ट कर देगा।'

'जो व्यक्ति प्रतिज्ञा करके उसका पालन नहीं करता, उसके यज्ञ-यज्ञादि कर्म का फल समाप्त हो जाता है और पुण्यों का नाश हो जाता है। इससे पहले कि यह स्थिति आए आप हर्ष-पूर्वक श्रीराम को लक्ष्मण सहित महर्षि विश्वामित्र के साथ भेज दीजिए। आप नहीं जानते, कुशिकनंदन विश्वामित्र परम पराक्रमी और महातेजस्वी हैं। राम अस्त्र विद्या जानते हैं या नहीं, लेकिन विश्वामित्र से सुरक्षित राम का राक्षस सामना नहीं कर पायेंगे। राम और स्वयं विश्वामित्र साक्षात् धर्म की मूर्ति हैं, बलवानों में श्रेष्ठ हैं।' 'हे राजन! मैं यह सत्य जानता हूं कि अपने अडिग विश्वास, हठधर्मिता और तप-बल के प्रभाव से ही ये ब्रह्मर्षि पद को प्राप्त हुए हैं। क्षत्रिय के घर में जन्म लेकर भी ये ब्राह्मणत्व प्राप्त किये हैं।'

'हे महाराज। चराचर प्राणियों सहित तीनों लोकों में नाना प्रकार के जितने भी अस्त्र हैं, ये उन सभी को जाते हैं। प्राय: सभी अस्त्र प्रजापति कृशाश्व के परम पुत्र हैं, जिन्हें प्रजाति ने विश्वामित्र को सौंपा था, जब ये राजा थे। दक्ष की पुत्रियों, जया और संप्रभा के सौ परम प्रकाशमान अस्त्र और शस्त्र पुत्र रूप में महर्षि की सेवा में उपस्थित हैं। शायद ही कोई ऐसा अस्त्र है जिसका ज्ञान महर्षि विश्वामित्र को न हो। इसलिए हे बुद्धिमान राजन! आप श्रीराम को महर्षि विश्वामित्र के साथ भेजने में किंचित भी संकोच न करें।'

'महर्षि वैसे स्वयं भी उन राक्षसों का संहार करने में समर्थ हैं, किन्तु ये तो आपके पुत्र का कल्याण चाहते हैं और अयोध्या को अखण्ड आर्यावर्त का विकसित केन्द्र बनाने की कल्पना संजोए हुए आपसे पुत्र की याचना कर रहे हैं।'

महाराज दशरथ ने जब मुनि वसिष्ठ के मुख से यह सुना तो वे प्रसन्न हो गए और विचार करने के बाद अब उन्हें महर्षि के साथ राम का जाना उचित लगने लगा।

अब तो स्वयं महाराज दशरथ ने प्रतिहारी को आज्ञा देते हुए कहा, 'जाओ राम और लक्ष्मण को राजसभा में बुला लाओ।'

आज्ञा पाते ही राम और लक्ष्मण पिता की सेवा में उपस्थित हो गए।

महाराज दशरथ ने पुत्र का मस्तक चूमकर मन से उनकी कुशलता का आशीर्वाद देते हुए महर्षि विश्वामित्र के हाथों में उनका हाथ सौंप दिया और कहा-

'हे ऋषि आपकी कृपा सदा अयोध्या पर इसी प्रकार बनी रहे। ये दोनों अपने प्राणांश मैं आपकी सेवा में भेंट कर रहा हूं।'

विश्वामित्र ने इस प्रकार महाराज दशरथ के दुर्बल मन को विजयी होते देखकर प्रसन्नतापूर्वक उनसे कहा, 'हे राजन! मैं सदा ही इन राजकुमारों को सुरक्षित रखूंगा और शीघ्र ही योग्य प्रशासक बनाकर आपकी सेवा में प्रस्तुत करूंगा।'

लक्ष्मण तो राम की परछाई के समान थे, इसलिए राम के साथ लक्ष्मण का जाना भी तय था।

राज्यसभा में पिता के माथे पर राम ने कुछ चिंता की रेखाएं अवश्य पढ□ ली थीं किन्तु यह भी तत्काल ही जान लिया था कि एक पिता और राजा में राजा का धर्म सर्वोपरि है, पिता के संशय के ऊपर राज-धर्म ने विजय पा ली है, यह उनके लिए अत्यन्त प्रसन्नता की बात थी।

मां कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा आदि से विधिवत विदा लेकर महर्षि वसिष्ठ आदि कुलश्रेष्ठ ब्राह्मणों और ऋषियों का आशीर्वाद प्राप्त करते हुए तात पक्षधारी राम अनुज लक्ष्मण के साथ महर्षि विश्वामित्र के पीछे-पीछे उनके आश्रम की ओर चल दिए।

दोनों भाइयों ने अपनी पीठ पर तरकश बांध रखा था, धनुष उनके हाथों की शोभा को बढ□ा रहा था। वे दोनों भाई विश्वामित्र के पीछे तीन-तीन फन वाले सर्पों के समान चल रहे थे। एक ओर कंधे पर धनुष, दूसरी ओर तरकश और बीच में मस्तक।

सीता से विवाह

जिस प्रकार ब्रह्मा के पीछे दोनों अश्विनी कुमार चलते हैं, उसी प्रकार दोनों भाई राम और लक्ष्मण मुनि का अनुसरण करते हुए चले जा रहे थे।

अयोध्या से डेढ□ योजन दूर जाकर महर्षि ने कहा, 'प्रियवर राम। अब सरयू के जल से आचमन करो। बला और अतिबला नाम से इस प्रसिद्ध मंत्र को ग्रहण करो। इसके प्रभाव से तुम्हें कभी थकावट का अनुभव नहीं होगा, ज्वर नहीं होगा, तुम्हारे रूप में कोई विकार नहीं आएगा।'

'सोते समय अथवा असावधानी में भी राक्षस तुम पर आक्रमण नहीं कर सकेंगे, इस पृथ्वी पर बाहुबल में तुम्हारा कोई सामना नहीं कर पायेगा।'

यह आदेश पाकर राम ने आचमन किया। वे पवित्र हो गए और उनका मुख प्रसन्नता से खिल उठा और उन्होंने शुद्ध अन्त:करण से महर्षि से यह दोनों विद्या ग्रहण कीं। यह विद्या का कमाल था या महर्षि का आशीर्वाद, विद्या से सम्पन्न होकर महापराक्रमी राम सहस्रों किरणों से युक्त, शरद काल के चंद्र के समान शोभायमान हो गए। इस रात्रि को वे सरयू के तट पर ही विश्राम करने के लिए ठहर गए।

यह राजकुमारों का गुरु की शरण में पहला दिन था और पहली रात्रि। आज वे तिनकों की शैया पर सोए थे। महर्षि विश्वामित्र के द्वारा लाड□-प्यार पाकर यह रात उनके लिए बड□ी सुखमय प्रतीत हुई।

प्रभात होने पर महामुनि विश्वामित्र ने तिनकों के बिछौने पर सोए राजकुमारों से कहा, 'हे राम! तुम्हारे जैसे पुत्र को पाकर महारानी कौशल्या सुपुत्र की मां हो गई हैं। देखो, उषाकाल हो गया है और अब उठो, प्रतिदिन के कार्य सम्पूर्ण करो।'

राम और लक्ष्मण ने आदेश पाकर सर्वप्रथम दैनिक कर्म से निवृत्त होकर स्नान-ध्यान किया, देवताओं का तर्पण किया और फिर उत्तम जपनीय मंत्र गायत्री का जाप किया। अपनी यात्रा पर आगे बढ□ते हुए महाबली राजकुमारों ने गंगा और सरयू के शुभ संगम पर पहुंचकर दिव्यसरी गंगा के दर्शन किए। यहीं संगम के पास ही शुद्ध अंत:करण वाले महर्षियों का पवित्र आश्रम था, जहां कई हजार वर्षों से तपस्या कर रहे मुनि वास करते थे।

उस पवित्र आश्रम को देखकर राम और लक्ष्मण बड□ प्रसन्न हुए और गुरु से यह जाना कि यह महामुनि-कन्दर्प का आश्रम है, यहां उन्होंने अपने अंग का त्याग किया था इसलिए इसे अंग देश कहा जाता है, यह उन्हीं महादेव का पुण्य आश्रम है।

यहां इस पवित्र स्थली में पहुंचकर दूसरी रात्रि मुनि विश्वामित्र के साथ राम, लक्ष्मण ने बड□ सुख से बिताई और अगले दिन प्रात: स्नान, जप, हवन करने के बाद एक नाव द्वारा उन्होंने गंगा नदी को पार किया। जहां गंगा और सरयू मिल रही थीं, वहां बड□ा विशाल स्वर उत्पन्न हो रहा

था।

दोनों भाइयों ने दोनों नदियों को प्रणाम किया और धीरे-धीरे उनकी यह नाव दक्षिण किनारे पर पहुंच गई। यह अद्भुत और दुर्गम वन था, यहां अनेक भीषण पशु वास करते थे।

मुनि विश्वामित्र ने बताया- 'बहुत पहले यहां समृद्धिशाली जनपद था। कहते हैं वृत्तासुर के वध करने के बाद देवराज इन्द्र मल से लिप्त हो गए और उन्हें भूख भी सताने लगी तो उनके भीतर ब्रह्म-हत्या प्रविष्ट हो गई। तब देवताओं और तपोवन के ऋषियों ने उनको गंगाजल से भरे हुए कलश द्वारा नहलाकर मल और क्षुधा से उनकी मुक्ति कराई थी। इन्द्र तो निर्मल हो गए और ये दोनों जनपद मलद और कलुष नाम से विख्यात हुए।'

'कुछ समय के बाद यहां एक इच्छा रूपधारी यक्षिणी आई, उसके शरीर में एक हजार हाथियों का बल है, उसका नाम ताड□का है। मारीच उस ताड□का का ही पुत्र है और यह ताड□का इन दोनों जनपदों का विनाश करती रहती है।

'अब हमें उधर ही चलना है, जिधर यह दुराचारिणी ताड□का निवास करती है। हे राम! मेरी आज्ञा से अब तुम इस वन को ताड□का विहीन कर दो ताकि यह प्रदेश पुनः अपनी पूर्व रमणीयता को प्राप्त करे और निष्कंटक हो जाए। उस भयानक यक्षिणी ने इस देश को उजाड□ बना दिया है।

'हे मुनि! जब यक्षिणी अबला होती है तो उसकी शक्ति थोड□ी होनी चाहिए फिर वह एक हजार हाथियों का बल कैसे धारण करती है?'

'जिस कारण से ताड□का अधिक बलशाली हो गई है, वह बल उसे वरदान से प्राप्त हुआ है। राम! अगस्त्य मुनि ने इस ताड□का के पति सुन्द को अपने शाप से भस्म कर दिया था। जब ताड□का ने यह जाना तो वह अपने पुत्र मारीच को साथ लेकर मुनि को ही मार डालने के लिए उनके समीप पहुंची। जैसे ही वह मुनि को खा जाने के लिए दौड□ी, तो मुनि ने मारीच से कहा, तू राक्षस हो जा और ताड□का को विकराल मुंह वाली नरभक्षिणी बना दो। यह शाप मिलने से वह क्रूर स्वभाव वाली नारी अत्यन्त क्रोधित हो उठी और उसने समूचे अगत्स्य आश्रम को ही उजाड□ दिया। अब हे राम! तुम अपने बल और मेरी कृपा से इस राक्षसी का वध करो।'

गुरु का आदेश पाकर राम ने सामने ताड□का को लक्ष्य करके धनुष के मध्य भाग में मुट्ठी भींचकर उस पर प्रत्यंचा की जोरदार टंकार की, जिससे चारों दिशाएं गूंज उठीं। ताड□का ने जब यह झंकार सुनी तो वह क्रोधित हो उठी और जिधर से यह आवाज आई थी, उधर ही दौड□ पड□ी।

अपने सम्मुख अचानक ताड□का को आए देख राम ने कहा, 'लक्ष्मण देखो तो सही इसका शरीर कितना विरूप और भयंकर है। अब मैं इसको नष्ट करता हूं। मेरा विचार है कि स्त्री होने के कारण मैं इसे मारूंगा नहीं बल्कि इसकी चलने की शक्ति का नाश कर दूंगा।'

अभी राम यह कह ही रहे थे कि ताड□का क्रोध में भरकर एक बांह उठाकर गर्जना करती हुई उनकी ओर झपटी।

विश्वामित्र ने हुंकार कर कहा, 'रघुकुल के दोनों राजकुमारों का कल्याण हो।' ताड□का ने उन वीरों पर धूल उड□ाते हुए उनके चारों तरफ धूल के बादल बना दिए और फिर उन पर पत्थरों से वर्षा करने लगी। राम ने जब यह देखा तो वे बहुत कुपित हुए और उन्होंने बाण वर्षा के द्वारा उस राक्षसी के दोनों हाथ काट डाले।

हाथ कट जाने से थकी हुई ताड□का अब एक ही स्थान पर खड□ी हुई जोर से गरजने लगी तो लक्ष्मण ने उसके नाक, कान काट लिए।

लेकिन वह तो इच्छा रूपधारी यक्षिणी थी, वह फिर से राम और लक्ष्मण पर पत्थर बरसाने लगी।

'राम, यह मायावी दुराचारिणी है, यह अपनी माया से प्रबल हो उठे, इससे पहले ही तुम इसे मार डालो, इस पर दया करना व्यर्थ है।'

विश्वामित्र से यह आदेश पाकर राम ने शब्दभेदी बाण चला दिया और उसे सब तरफ से अवरुद्ध कर दिया।

इस प्रकार हताश वह राक्षसी गर्जना करते हुए राम और लक्ष्मण पर टूट पड□ी। इससे पहले कि वह अपने प्रयास में सफल होती, राम के एक बाण से ही उसकी छाती विदीर्ण हो गई। अब वह पृथ्वी पर गिरकर पहले छटपटाई और फिर यमलोक को सिधार गयी। ताड□का के इस प्रकार मृत्यु को प्राप्त होने पर देवताओं ने हर्ष से गदगद होते हुए राम को आशीर्वाद दिया और कहा, 'हे मुनि, तुम धन्य हो! अब रघुकुल तिलक राम पर अपना स्नेह प्रकट करते हुए प्रजापति कृशाश्व के अस्त्र, रूपधारी सत्य, पराक्रमी और तपोवन सम्पन्न पुत्र राम को समर्पित कीजिए। हे महात्मन्, ये राम ही आपके अस्त्रदान के सुयोग्य पात्र हैं।'

इस प्रकार ताड□का-वध से प्रसन्न मुनि ने रामचन्द्र का मस्तक चूमकर उन्हें आशीर्वाद दिया और वह रात्रि उन्होंने उसी वन में बिताई।

प्रात:काल मुनि ने राम से कहा, 'हे यशस्वी राजकुमार! तुम्हारा कल्याण हो। अब मैं तुम्हें बड□ी प्रसन्नता से वे अस्त्र सौंप रहा हूं जिन्हें प्राप्त करके तुम अपने शत्रुओं को, चाहे वे कोई भी हों, रणभूमि में बलपूर्वक अपने अधीन करके उन पर विजय पाओगे। आज मैं तुम्हें दिव्य और महान उण्ड चक्र, धनुर्चक्र, कालचक्र और विष्णुचक्र तथा अत्यन्त भयानक इन्द्रचक्र प्रदान करता हूं। इन्द्र का वज्रास्त्र, शिव का त्रिशूल, ब्रह्मा का ब्रह्मशिर नाम का अस्त्र, ऐशिकास्त्र, परम उत्तम ब्रह्मास्त्र प्रदान करता हूं। मोदकी और शिकरी नाम की दिव्य प्रभाव वाली गदाएं, धर्मपाश, कालपाश, वरुणपाश, सूखी और गीली दोनों प्रकार की अशनी और पिनाक तथा नारायण अस्त्र भी तुम्हें दे रहा हूं। ये सभी अस्त्र एक साथ पूरी तरह से प्राप्त कर लेना देवताओं के लिए भी दुर्लभ है।'

'हे वत्स। अग्नि का प्रिय शिखरास्त्र, अनघ का वायव्यास्त्र आदि क्रौंच और हाईसिरा नाम की शक्तियां, गन्धर्वों का प्रिय सम्मोहन अस्त्र, मानवास्त्र, पिशाचों का मोहनास्त्र और राक्षसों के वध में उपयोगी कंकाल, घोर मूसल, कपाल और किंकणी तुम्हें सौंपता हूं।' 'हे महाबाहु राजकुमार

राम! ये सभी अस्त्र इच्छानुसार रूप धारण करने वाले हैं। तुमने ताड□का-वध करके जिस प्रकार मुझे प्रसन्न किया है, उसके फलस्वरूप ये सभी उत्तम अस्त्र मैं तुम्हें प्रदान करता हूं।'

ऐसा कहते हुए महातेजस्वी मुनि विश्वामित्र ने राम को आचमन कराते हुए ये सभी अस्त्र प्रदान किए। बुद्धिमान विश्वामित्र ने ज्यों ही जप आरम्भ किया त्यों ही ये सभी दिव्यास्त्र स्वत: आकर श्रीराम के पास उपस्थित हो गए और हाथ जोड□कर उनसे कहने लगे- 'हे परम उदार रघुनंदन! आपका कल्याण हो, हम सब तो आपके दास हैं, आप हमसे जो-भी सेवा लेना चाहेंगे, हम सदैव आदेश के अनुगामी होंगे।'

यह सुनकर राम मन-ही-मन प्रसन्न हुए और उन्हें ग्रहण करने के पश्चात उनका स्पर्श करके बोले- 'आप मेरे मन में निवास करें।'

इसके पश्चात् राम ने प्रसन्नचित्त होकर महामुनि विश्वामित्र को प्रणाम किया और आगे की यात्रा आरंभ की।

परम पवित्र अस्त्रों को प्राप्त करके राम का मुख प्रसन्नता से खिल उठा और वे विश्वामित्र से बोले, 'हे महामुनि। आपकी कृपा से इन अस्त्रों को प्राप्त करके मैं देवों के लिए भी दुर्जेय हो गया हूं। अब मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप मुझे इन अस्त्रों की संहार-विधि से भी परिचित कराएं।'

यह जानकर महर्षि विश्वामित्र ने राम से कहा, 'हे वत्स। धैर्य रखो। मैं अभी तुम्हें इनकी संहार-विधि भी बताता हूं और अन्य उपयोगी अस्त्र भी प्रदान करता हूँ।' यह कहते हुए महर्षि विश्वामित्र ने कुछ क्षण के लिए मौन रहते हुए स्वयं को केन्द्रित किया और इसके पश्चात् राम को उन अस्त्रों की संहार-विधि का उपदेश दिया।

इसके पश्चात् विश्वामित्र ने उनसे कहा, 'हे राम। तुम अस्त्र-विद्या के सुयोग्य पात्र हो अत: जो अस्त्र मैं दे रहा हूं उन्हें भी ग्रहण करो। सत्यवान, सत्यकीर्ति, घृष्ट, प्रतिहारतर, लक्ष्य-अलक्ष्य, शतोदर, पद्मनाभ, मानाभ, ज्योतिष, शकुन, दैत्य नाश यौगंधर, विनिद्र, शुचिबाहु, घृति, माली, सोमनस, कामरूप, कामराचि, द्रिम्भक, सर्पनाद और वरुण आदि ये सभी प्रजापति कृशाश्व के पुत्र हैं, परम तेजस्वी हैं और इच्छा अनुसार रूप धारण करने वाले हैं, तुम इन्हें धारण करो।'

ये सभी अस्त्र मूर्तिमान, दिव्य तेज से प्रकाशित हो रहे थे, कितने ही अग्नि के समान तेजस्वी, धूम्र के समान काले, सूर्य और चन्द्रमा के समान प्रकाशमान थे। ये सभी राम के समक्ष हाथ जोड□कर खड□ हो गए और बोले-

'हे राम। हम लोग आपके दास हैं, आज्ञा करें कि हम आपकी क्या सेवा कर सकते हैं।'

राम ने उनको इस प्रकार करबद्ध सेवा में जानकर कहा, 'हे मूर्तिमान अस्त्रों इस समय तो आप लोग अपने अभीष्ट स्थान को जाए परन्तु आवश्यकता के समय मेरे मन में स्थित होकर मेरी सहायता करते रहें।'

राम से यह आज्ञा लेकर वे सभी अस्त्र राम की परिक्रमा करते हुए उनसे विदा लेकर आज्ञा के अनुसार कार्य करने की प्रतिज्ञा करते हुए अपने स्थान को लौट गए।

आगे चलने पर राम ने मृगों के झुंड से भरा एक मनोहर स्थान देखा और मुनि से पूछा, 'हे मुनि। लगता है कि अब हम ताड□का वन से बाहर आ गए हैं। अब आप कृपया यह बताएं कि आपका आश्रम कहां है, जहां हमें उन राक्षसों का वध करना है।'

'यह जो सामने वन प्रदेश दिखलाई दे रहा है, बस वहीं सिद्ध आश्रम है और हे वत्स। यह आश्रम जैसा मेरा है वैसा ही तुम्हारा भी है।' ऐसा कहते हुए विश्वामित्र के साथ राम और लक्षण दोनों भाई आश्रम की ओर बढ□ने लगे।

आश्रम में महर्षि विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण को आया देखकर वहां रहने वाले सभी तपस्वी जनों ने बड□ उत्साह के साथ इनका स्वागत किया।

कुछ देर विश्राम करने के बाद राम ने कहा, 'हे मुनिश्रेष्ठ। आपका यह आश्रम तो यथा नाम तथा गुण है। आप हमें यह बताएं कि वे निशाचर किस समय यहां आते हैं ताकि हम यज्ञभूमि की रक्षा के लिए तैनात हो जाएं। कहीं ऐसा न हो, हमारी असावधानी से वह समय हाथ से निकल जाए।'

मुनि विश्वामित्र यज्ञ की दीक्षा ले चुके थे अत: वे मौन रहे, लेकिन वहां उपस्थित तपस्वियों ने बताया कि आप लोग छह दिन-छह रात इनके यज्ञ की रक्षा करें।

राम और लक्ष्मण ने बड□ी सावधानीपूर्वक मुनि के पास खड□ होकर उनके यज्ञ की रक्षा की। जैसे ही छठा दिन प्रारम्भ हुआ एक ओर तो वेद-मंत्रों के उच्चारण के साथ यज्ञ आरम्भ हुआ और दूसरी ओर आकाश में बड□ी भयानक गर्जना हुई।

जैसे बादल सारे आकाश को घेर लेते हैं उसी प्रकार मारीच और सुबाहु अपनी माया फैलाते हुए यज्ञमंडप की ओर दौड□ते हुए आए।

राम ने जब दो भयानक राक्षसों को अपने दल के साथ यज्ञ की ओर आते देखा तो लक्ष्मण से कहा, 'देखो, मांस भक्षण करने वाले दुराचारी राक्षस आ पहुंचे हैं, मैं मानवास्त्र से इनका बल छिन्न-भिन्न करता हूं।'

यह कहते ही राम ने बड□ रोष में मारीच की छाती में उस बाण का प्रहार किया। मारीच उस बाण के प्रभाव से सौ योजन दूरी पर समुद्र में जाकर गिरा। इस सीतेषु नामक मानवास्त्र ने मारीच को अचेत-सा करके चक्कर खिला दिया। वह मरा नहीं लेकिन मूर्च्छित अवस्था में उसे उस स्थान से बहुत दूर जा फेंका और तभी शीघ्र ही आग्नेय अस्त्र का संधान करके राम ने सुबाहु की छाती पर वार किया, वह पृथ्वी पर गिरते ही मृत्यु को प्राप्त हुआ।

यज्ञ पूर्ण होने पर जब महात्मा विश्वामित्र ने यह देखा कि राम ने विघ्न डालने वाले सभी निशाचरों का संहार कर दिया है तो उनकी प्रसन्नता का कोई ठिकाना नहीं रहा। विश्वामित्र ने कहा, 'हे राम! तुमने गुरु की आज्ञा का पूर्णरूप से पालन किया है, वास्तव में तुमने इस सिद्ध आश्रम का नाम सार्थक कर दिया है।'

इस प्रकार महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करके राम और लक्ष्मण ने वह रात उस यज्ञशाला में ही बिताई।

प्रात:काल होने पर जब वे दोनों भाई महर्षि के पास पहुंचे तो उन्हें प्रणाम करके राम ने कहा, 'हे मुनिवर। हम आपकी सेवा में उपस्थित हैं, अब आज्ञा कीजिए, हम क्या सेवा करें?'

महर्षि विश्वामित्र के पास जो अन्य महर्षि खड□ थे उन्होंने कहा, 'हे राम। मिथिला के राजा जनक का परम धार्मिक यज्ञ प्रारम्भ होने वाला है। हम वहां जायेंगे। वहां एक अद्भुत धनुष रत्न है। पहले कभी यज्ञ में पधारे हुए देवताओं ने महाराज जनक के किसी पूर्व मनुष्य को यह धनुष दिया था। वह कितना भारी है, इसका कोई माप-तौल नहीं है, किन्तु वह बड□ा ही प्रकाशमान और भयंकर है, मनुष्य क्या, उसकी प्रत्यंचा तो देवता और दैत्य तक नहीं चढ□ा पाते।'

'हे राम। तुम मिथिला नरेश के इस धनुष को भी वहां जाकर देख सकोगे।' 'मिथिला नरेश ने अपने यज्ञ के फल रूप में उस उत्तम धनुष को मांगा था, भगवान शंकर ने उस धनुष को प्रदान किया, जो बहुत ही सुंदर है।'

मिथिला के लिए चलते समय महर्षि विश्वामित्र ने वन-देवताओं से आज्ञा ली और कहा, 'मैं अपना यज्ञ कार्य सिद्ध करने इस सिद्ध आश्रम से जा रहा हूं। आप लोगों का कल्याण हो।'

मार्ग में शोणभद्र प्रदेश पड□ा जहां कभी राजा कुशनाभ राज्य करते थे। उन्हीं कुशनाभ के यहां गाधि नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। वे परम धर्मात्मा राजा गाधि ही मेरे पिता थे और कुश के कुल में उत्पन्न होने के कारण मैं कौशिक कहलाता हूं।

यहां से होते हुए विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण चलते हुए उस स्थान पर भी पहुंचे, जहां कभी राम के पूर्वज इक्ष्वाकु के परम धर्मात्मा पुत्र विशाल ने विशालापुरी बसाई थी और एक रात उन्होंने वहीं शयन भी किया।

प्रात:काल उठकर राम ने फिर मुनि के साथ यात्रा आरम्भ की और वे चलते हुए जनकपुरी के समीप पहुंच गए।

जनकपुरी की शोभा देखकर उन सबका मन बड□ा प्रसन्न हुआ।

'लेकिन, गुरुदेव। इतने सुंदर नगर में, इतने सुंदर उपवन में यह पुराना आश्रम, यह रमणीय होकर भी सूना क्यों दिखलाई दे रहा है?' आश्चर्य में राम ने पूछा।

'हे राम! यह गौतम मुनि का आश्रम है और यहां उनकी शापग्रस्त पत्नी अहिल्या वास करती है, जिन्हें मुनि ने शिला होने का शाप दे दिया था।'

महर्षि विश्वामित्र ने उन्हें अहिल्या और इन्द्र प्रसंग को विस्तार से बताते हुए कहा- 'कामलोभी इन्द्र ने अहिल्या को छल कर उसके साथ दुराचारपूर्ण व्यवहार किया और जब मुनि गौतम को यह ज्ञात हुआ तो उन्होंने इन्द्र को सहस्र आंखों वाला हो जाने का शाप दिया जिसके प्रभाव से इन्द्र के दोनों अण्डकोष पृथ्वी पर गिर पड□ साथ ही इन्द्र के साथ समागम की अपराधिनी अहिल्या को भी यह शाप दिया कि तू भी यहां हजारों वर्ष तक केवल हवा पीकर या उपवास करके कष्ट उठाती हुई राख में पड□ी रहेगी।'

'हे राम। यह उसी शापग्रस्त अहिल्या का सुनसान आश्रम है। हे महा तेजस्वी राम। अब तुम इस पुण्यभूमि में आ ही गए हो तो महर्षि गौतम के आश्रम में भी चलो और उस देवी अहिल्या का

उद्धार करो।'

राम ने आश्रम में प्रवेश करके देखा, महा सौभाग्य-शालिनी अहिल्या अपनी तपस्या से प्रकाशमान हो रही हैं। उन्हें मनुष्य या देवता कोई भी नहीं देख सकता था, केवल राम ही तीनों लोकों में उन्हें देख सकते थे।

राम का दर्शन मिल जाने से अहिल्या के शाप का अंत हो गया, अब वे सबको दिखलाई देने लगीं। अहिल्या ने महर्षि गौतम के वचनों को याद करके बड□ी सावधानी से उन दोनों भाइयों को आदरणीय अतिथि के रूप में सत्कृत करते हुए अर्घ्य अर्पित किया और राम ने उनका यह आतिथ्य स्वीकार किया।

अहिल्या अपनी तप:शक्ति से विशुद्ध स्वरूप को प्राप्त हुईं और तब राम ही की कृपा से महर्षि गौतम उसे अपने साथ पाकर सुखी हुए।

इसके पश्चात् ये सभी लोग मिथिला के राजभवन की ओर चल दिए।

वहां यज्ञ-मंडप बहुत सुंदर सजा हुआ था।

राजा जनक को जब यह ज्ञात हुआ कि मुनि विश्वामित्र पधारे हैं और उनके साथ दो क्षत्रिय राजकुमार भी हैं तो उन्होंने मुनि का स्वागत करते हुए उन्हें सम्माननीय पद पर सुशोभित किया। यहीं महाराज जनक के राज्य में गौतम पुत्र शतानंद कुलगुरु के रूप में सम्मानित थे। शतानंद को जब अपनी माता के उद्धार का समाचार मिला तो उन्होंने श्रीराम का विशेष पूजन करते हुए उनका आदर-सत्कार किया।

यहां महाराज जनक ने उन्हें इस बात से परिचित कराया कि सीता उनके द्वारा खेत में हल के अग्रभाग से जोती गई भूमि से प्रकट हुई हैं। अपनी इसी अयोनिजा पुत्री के लिए उन्होंने यह व्रत लिया कि जो भी पराक्रमी शिव-प्रदत्त इस धनुष की प्रत्यंचा को चढ□ा देगा उसी के साथ मैं इसका विवाह करूंगा।

'हे मुनि! सभी राजा मिलकर मिथिला में आए लेकिन शिव का धनुष चढ□ाना तो दूर, कोई हिला भी नहीं सका।'

'हे मुनिवर! जब किसी के साथ भी मैंने अपनी पुत्री का विवाह नहीं किया तो वे सभी राजा मुझ पर कुपित हुए और इकट्ठे होकर उन्होंने मिथिला को घेर लिया। वे पूरे एक वर्ष तक घेरा डाले रहे। इस बीच युद्ध के सारे साधन क्षीण होने से मुझे बड□ा दु:ख हुआ तब मैंने तपस्या से देवताओं को प्रसन्न करके उन राजाओं को पराजित किया।'

'हे मुनिश्रेष्ठ! यदि राम इस धनुष की प्रत्यंचा को चढ□ा दें तो मैं अपनी पुत्री सीता का विवाह इन दशरथ कुमार के साथ कर दूं।'

मुनि के कथन पर महाराज जनक ने राम को वह धनुष दिखाया।

जब राम ने वह धनुष देखा तो आज्ञा के लिए मुनि की ओर निहारा।

विश्वामित्र ने तब राम से कहा, 'हे वत्स! इस धनुष को देखो।'

महर्षि की आज्ञा पाकर राम ने पहले वह संदूक खोला, जिसमें वह धनुष रखा था। उसके बाद उन्होंने यह कहते हुए- 'अच्छा, अब मैं इस दिव्य धनुष को हाथ लगाता हूं और फिर इसे चढ□ाने का भी प्रयत्न करूंगा।' लीला पूर्वक बीच से पकड□कर उस धनुष को उठा लिया और खेल-सा करते हुए उसकी प्रत्यंचा चढ□ा दी।

राम का यह अभूतपूर्व चमत्कारी करतब देखकर हजारों नर-नारियों ने उन पर अपनी दृष्टि जमा दी।

और जैसे ही राम ने उस धनुष को खींचकर प्रत्यंचा को कान के समीप लाना चाहा वैसे ही वह धनुष बीच से टूट गया।

धनुष के टूटते ही वज्रपात के समान एक भारी आवाज हुई। ऐसा लगा मानो भूकम्प आ गया हो या कोई भयानक पर्वत फट पड□ा हो।

राम, लक्षण, राजा जनक और विश्वामित्र के अतिरिक्त जो लोग भी वहां खड□ थे-धनुष टूटने का शब्द सुनकर वहीं मूर्च्छित होकर गिर पड□।

धनुष का टूटना जानकर विश्वामित्र के सामने हाथ जोड□ महाराज जनक ने कहा, 'मुनि। मैंने दशरथ नन्दन श्रीराम का पराक्रम अपनी आंखों से देख लिया है। आज मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण हो गई है। सीता मेरे लिए प्राणों से भी बढ□कर है। अपनी यह पुत्री मैं श्रीराम को समर्पित करूंगा।'

'हे मुनि! अब यदि आप आज्ञा दें तो मैं अपने मंत्री को शीघ्र ही महाराज दशरथ के यहां जनकपुरी का न्यौता भिजवा दूं ताकि वे यहां रामचन्द्रजी के विवाह की राजसी बारात लेकर पधारें। उन्हें यह समाचार भी मिल जाए कि उनके पुत्र राम और लक्ष्मण महर्षि विश्वामित्र के साथ सुरक्षित मिथिला पहुंच गए हैं।'

महाराज दशरथ ने जब विदेह राज जनक का न्यौता प्राप्त किया तो उनकी प्रसन्नता की कोई सीमा न रही।

अपनी चतुरंगिणी सेना के साथ महाराज दशरथ चार दिन का मार्ग तय करके जनकपुरी पहुंच गए। यहां राम का सीता के साथ, लक्ष्मण का उर्मिला के साथ विवाह करा दिया गया।

महर्षि विश्वामित्र से परामर्श कर भरत और शत्रुघ्न के विवाह के लिए राजा जनक के छोटे भाई कुशध्वज की पुत्री मांडवी और श्रुतिकीर्ति को भी चुन लिया गया और इस प्रकार दशरथ के चारों पुत्रों का जनक की और कुशध्वज की पुत्रियों के साथ बड□ स्नेहपूर्वक विवाह सम्पन्न हुआ।

महाराज जनक ने अपनी पुत्रियों के विवाह के उपलक्ष्य में बहुत-सा धन, सामग्री, रत्न आदि भेंट किए।

महामुनि विश्वामित्र अब राजा जनक और दशरथ से विदा लेकर हिमालय की उत्तर शाखा पर्वत पर, जहां कौशिकी के तट पर उनका आश्रम था, वहां चले गए और महाराज दशरथ अपने पुत्रों, पुत्र-वधुओं और कुल पुरोहित महर्षि वसिष्ठ आदि के साथ महाराज जनक द्वारा भेंट की गई अथाह सामग्री को लिए प्रसन्न मन से अयोध्या लौट आए।

अभी यह दल मार्ग में ही था और परस्पर बातचीत करते हुए जनकपुरी की शोभा का वर्णन और उनके आतिथ्य की चर्चा करते हुए बड□ प्रेम-पूर्वक लौट रहे थे कि तभी बड□ जोर की आंधी उठी और लगा कि पृथ्वी कांप रही है, सेना अकस्मात मूर्च्छित होने लगी।

महाराज दशरथ ने देखा कि जमदग्नि कुमार महर्षि परशुराम सामने से आ रहे हैं। परशुराम उस समय त्रिपुर विनाश करने वाले महादेव शंकर के समान लग रहे थे। ऐसा लगता था कि आज वे फिर अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करने के उद्देश्य से एक बार फिर पृथ्वी को क्षत्रियों से खाली कर देंगे।

महर्षि परशुराम को इस प्रकार क्रोधी मुद्रा में देखकर वसिष्ठ आदि मुनि भी भयभीत हो गए और उनको अर्घ्य प्रस्तुत करते हुए मधुर वाणी में उनका सत्कार किया।

परशुराम ने शिव-धनुष के तोड□ जाने का समाचार सुन लिया था।

वे बोले, 'हे राम! तुमने शिव के धनुष को तोड□ा है, तुम्हारा अद्भुत पराक्रम मैं सुन चुका हूं इसीलिए मैं एक दूसरा उत्तम धनुष लेकर आया हूं। यह परशुराम का विशाल धनुष है। लो, इस धनुष की प्रत्यंचा चढ□ाओ, इसके बाद ही मैं तुमसे द्वन्द्व युद्ध करूंगा।' श्रीराम ने महाराज दशरथ को भय से व्यथित होते देखकर शीघ्र ही उनके भय का उपचार करने के खयाल से परशुराम जी से कहा, 'हे आदरणीय, मैं क्षत्रिय हूं फिर भी आप मुझे पराक्रमहीन जानकर मेरा तिरस्कार कर रहे हैं। लाइए मुझे यह धनुष दीजिए।' राम ने परशुराम का वह धनुष लेकर उसकी प्रत्यंचा पर बाण रखा और बोले, 'हे देव, आप ब्राह्मण होने के नाते मेरे पूज्य हैं और महर्षि विश्वामित्र के संबंधी। अत: यह प्राण संहारक बाण तो मैं आप पर नहीं छोड□ सकता, मेरे विचार में या तो मैं इससे आपकी शीघ्रतापूर्वक इधर से उधर जाने की शक्ति को नष्ट कर सकता हूं या आपने जो अपने तप के बल से अनुपम पुण्य-लोक प्राप्त किए हैं, उन्हें नष्ट कर सकता हूं।' परशुराम जी के लिए यह आश्चर्य का विषय था। उन्होंने तो सोचा भी नहीं था कि यह सोलह वर्षीय राजकुमार भगवान महादेव द्वारा दिये गए इस धनुष की प्रत्यंचा को छोड□ पाएगा, लेकिन उसने तो उस पर बाण चढ□ाकर अपने शौर्य को सार्थक ही नहीं किया बल्कि परशुराम स्वयं भी वीर्यहीन हो गए।

परशुराम ने राम से कहा, 'हे राम। आप मेरी गमन शक्ति को नष्ट न करें, मैं मन के समान वेग से अभी महेन्द्र पर्वत पर चला जाता हूं। हां, मैंने अपनी तपस्या से जिन अनुपम लोकों पर विजय पाई है, आप उनका इस बाण से नाश करके इसे शान्त करें। मुझे पूरी तरह से यह ज्ञात हो गया है कि आप ही मधु-कैटभ को मारने वाले साक्षात विष्णु हैं, मुझे इसमें कोई अपमान अनुभव नहीं हो रहा क्योंकि स्वयं नारायण ने मुझे बताया है।'

राम ने वह बाण छोड□कर परशुराम के पुण्य को नष्ट कर दिया और महर्षि परशुराम राम की परिक्रमा करके महेन्द्र पर्वत पर चले गए और राम महाराज दशरथ तथा बंधुओं आदि के साथ अयोध्या लौट आए।

वन गमन

कैसा संयोग था, महाराज दशरथ ने राम के गुण, शौर्य और पराक्रम को देखते हुए उन्हें राज्यसिंहासन पर आसीन करने का विचार किया, लेकिन इसकी घोषणा से पहले वह कैकेयी से इस बारे में परामर्श नहीं कर सके और सारा आयोजन बिना हुए बिखर कर रह गया।

कितने चाव से राम के विवाह के बाद अयोध्या नगरी सजायी गई थी, कितनी आशाएं थीं महाराज दशरथ को कि उनका पुत्र राम राजा होगा और सारी प्रजा राम के राजा बनने से अपूर्व सुख का अनुभव करेगी।

नगर में पताकाएं फहरायी जायेंगी, सूर्योदय होते ही स्वस्तिवाचन होगा, नगर के हर दरवाजे पर चंदन की मालाएं सुशोभित होंगी, राज नर्तकियां उल्लास में नृत्य करेंगी, राजपुरोहित राम के मस्तक पर मंत्रोच्चार करते हुए राजमुकुट पहनाएंगे।

अभी-अभी जब राम को यह ज्ञात हुआ कि पिता ने उन्हें बुलाया है तो वे उनके पास आए थे, दोनों हाथ जोड□कर राम ने पिता के चरण छुए और जब स्वयं दशरथ ने उनको सोने से सजे सिंहासन पर बिठाया तो वे स्वयं राम की शोभा को देखकर चमत्कृत रह गए थे। अभी वे उनसे केवल इतना ही कह पाए थे कि हे वत्स! मैंने तुम्हें अयोध्या का राजा बनाने का निश्चय किया है, तुम अपनी माताओं से आशीर्वाद ले लो, कल तुम्हारा राज्याभिषेक हो जाएगा। लेकिन लगता है कि राम की उस छटा को देखकर स्वयं समय की नजर लग गई।

अभी राम महाराज दशरथ से विदा होकर माता कौशल्या के कक्ष में पहुंचे थे कि तभी राजा दशरथ को कैकेयी का स्मरण हो आया और एकदम मन में यह खयाल आया कि यह सूचना उन्होंने अब तक कैकेयी को क्यों नहीं दी।

और राजा दशरथ कैकेयी को राम के राजतिलक की सूचना देने उनके निजी महल में पहुंचे।

आवाज देने पर भी यहां तो कोई नहीं बोलता, महाराज यह सोच ही रहे थे कि तभी उन्हें कैकेयी की निजी दासी दिखलाई पड□ी।

'अरी मंथरा! आज तेरी रानी नहीं दिखाई दे रही हैं, कहां हैं?'

'हमको क्या मालूम राजाजी! क्या बात हुई है। और रानी तो आज बहुत देर से अपने कोप भवन में गुस्सा किये बैठी हैं।'

'अच्छा, तो हमने यह समाचार महारानी कैकेयी को सबसे पहले नहीं दिया इसीलिए वे हमसे नाराज हैं। अच्छा, चलो हम स्वयं देखते हैं।'

'आज तुम्हारे तेवर बदले हुए हैं कैकेयी! क्या तुम्हें वास्तव में राम के राजतिलक की प्रसन्नता नहीं हुई?'

'आज मैं बहुत खुश हूं राजन! लेकिन इस खुशी के अवसर पर मुझे अपने पुत्र भरत की याद आ रही है, जिसे आपने अपने उद्देश्य में बाधा जानकर पहले ही ननिहाल भेज दिया, लेकिन...'

'रानी! तुम ये कैसी बहकी-बहकी बातें कर रही हो।'

'आपको याद है, रानी कैकेयी ने महाराज की बात टालते हुए कहा...'

'एक बार आपने युद्ध में, जब मैंने आपके रथ की धुरी को गिरते जानकर अपनी उंगली से उसे रोका था और मेरी उंगली विजय पाने के बाद जब आपने लहू से सनी देखी तो अपनी विजय में मेरा योगदान स्वीकार करते हुए आपने मुझे दो वरदान दिए थे।' 'हां दिए थे, मुझे अब भी याद है और तुमने कहा था कि समय आने पर मांग लूंगी।'

'तो आज वह समय आ गया है महाराज! राम को राज्य तिलक देने से पहले मेरे दो वरदान दे दीजिए।'

'इसमें इतनी जल्दी की क्या बात है, क्या तुम्हें हमारा विश्वास नहीं है?'

'नहीं, विश्वास है लेकिन राम के राजा बनने के बाद आप तो तपस्या के लिए वन में चले जायेंगे, तब मेरे वरदान देने का आपके पास कौन-सा खजाना रह जाएगा। यह जो आज रात्रि है, राम के राजा बनने से पहले की रात और आपके राजा होने की अंतिम रात है। इससे पहले कि यह रात समाप्त हो जाए मुझे अपना हिसाब पूरा कर लेना होगा क्योंकि कौन जाने कि आप मेरे वरदान देने की स्थिति में भी रहें या न रहें।'

'अच्छा रानी, मांगो क्या मांगती हो?'

'देख लीजिए महाराज! यदि आप न देने की स्थिति में हों तो।'

'नहीं, हम क्षत्रिय अपने मुंह से निकली हुई बात पत्थर की लकीर मानते हैं, चाहे स्वप्न में ही कही हो।'

'तो फिर, मैं पहले वरदान में यही मांगती हूं कि राम की जगह मेरे पुत्र भरत का राजतिलक हो, क्योंकि आपने मेरे पिता कैकेय महाराज से यह कहा था कि कैकेयी का ही पुत्र राज्य का उत्तराधिकारी होगा।'

'इसमें महाराज को बीच में क्यों लाती हो रानी! हमने तुम्हारी बात स्वीकार की, भरत को ही अयोध्या का राजा बनायेंगे। और बोलो, क्या चाहती हो?'

'दूसरे वरदान स्वरूप आप राम को चौदह वर्ष के लिए वनवास दे दीजिएगा, वह अयोध्या की सीमाओं से बाहर वन में रहेगा।'

कैकेयी के मुख से यह निकलना था कि महाराज दशरथ स्वप्नलोक से धरती पर आ गए और अचेत होकर गिर गए।

राम के स्थान पर भरत का राजतिलक सामान्य बात थी। चारों भाइयों में परस्पर इतना प्रेम था कि कोई भी राजा बने, कोई अन्तर नहीं पड□ता, भरत भी प्रजावत्सल हैं, आज्ञाकारी हैं।

दशरथ जानते थे कि राजा होकर भी भरत राम की अवज्ञा नहीं करेंगे, पर राम को चौदह वर्ष का वनवास...

कुछ चेत आने पर महाराज ने कहा, 'हे देवी! तुम वरदान मुझसे मांग रही हो, राम ने तो

तुम्हारा कोई अपराध भी नहीं किया फिर तुम वरदान को अभिशाप में क्यों बदलना चाहती हो?'

'ठीक है, यदि आपको इसमें आपत्ति है तो मैं अपने वरदान नहीं मांगती।'

'तुम हमारी रघुकुल की रीति को चुनौती दे रही हो रानी।'

'नहीं महाराज! मैं चुनौती नहीं दे रही बल्कि भरत की राज्य की सुरक्षा की स्थितियां चुन रही हूं। राम जब वनवास में रहेंगे तो प्रजा उन्हें भूल जाएगी और तब भरत सरलता से, बिना किसी विद्रोह के अयोध्या का शासन चलायेंगे।'

दशरथ के लिए यह हृदय को चीर डालने वाली यातना थी।

पल भर में यह समाचार सारे राजभवन में फैल गया, प्रजा भी यह सुनकर बिलख उठी, आखिर महारानी कैकेयी को यह क्या सूझी।

राम अपनी मां कौशल्या का आशीर्वाद ले भी नहीं पाए थे कि आशीर्वाद का उद्देश्य ही बदल गया। अब राम मां कौशल्या से वन जाने के लिए आशीर्वाद मांग रहे थे। 'वत्स!' कौशल्या ने कहा- 'यह आदेश वरदान रूप में तुम्हारी मां कैकेयी ने दिया है, इसलिए तुम्हें वन जाना है। यदि यह आदेश तुम्हारे पिता स्वयं देते तो मैं मां होकर उनके आदेश को रद्द कर सकती थी, पर अब तो तुम्हें वन जाना ही है।'

सबसे बड□ा वज्राघात पिता को हुआ, उस पिता को, जो पुत्र को राज्य-सिंहासन सौंप रहे थे, अब उसे वल्कल वस्त्र पहने वन जाते हुए देख रहे थे।

महाराज दशरथ की आंखें राम को वल्कल पहने वन जाता नहीं देख सकीं और दशरथ अचेत हो गए।

भला परछाई शरीर का साथ कैसे छोड□ सकी है, इसलिए जनक राज-दुलारी सीता जिसने पांव कभी जमीन पर भी नहीं रखे थे, राम के साथ वल्कल पहनने को आतुर थीं। पति की अनुगामिनी होकर उन्हीं का अनुसरण करने के लिए तत्पर और ऐसे में निजी सहायक की भूमिका में लक्ष्मण कैसे भाई का साथ छोड□ सकते थे। वन जाने के लिए लक्ष्मण भी तैयार हो गए।

महाराज दशरथ को सारा घटनाक्रम घटता दिखलाई नहीं पड□ रहा था, केवल सुनाई पड□ रहा था और विडंबना यह कि वे वचन से बंधे राम को वनगमन से रोक नहीं सकते थे और लक्ष्मण और सीता को रोक पाने की उनमें सामर्थ्य नहीं थी। उनके शब्द की शक्ति चुक गई, एक बेचैनी थी, कलपता हृदय था, डूबती आंखें थीं और मद्धिम होती सांस। दो दिशाएं अपनी-अपनी ओर विपरीत दिशा में चल दीं।

राम, सीता और लक्ष्मण के साथ वन के लिए चल दिए और दशरथ राम के वियोग में जीवन के अंतिम प्रयाण पर चल दिए।

वे तो इतनी भी प्रतीक्षा नहीं कर सके कि ननिहाल से भरत लौट आएं और वे अपने पहले वरदान को अपने सामने पूरा कर पाएं।

डूबती आंखों से महाराज दशरथ कैकेयी को निहारने लगे, मानो कह रहे थे कि हे देवी। मैंने तुम्हारे दोनों वचन स्वीकार किए। राम वन चले गए हैं, राज्य भरत का हो गया है, शायद मैं भरत का राजतिलक अपनी आंखों से न देख पाऊं।

दुविधा में थी कैकेयी, उसे लग रहा था, शायद कोई बड□ी भूल हो गई। राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास, बड□ी कड□वी और कठोर मांग हो गई।

और इसका वास्तविक अर्थ महारानी कैकेयी ने तब जाना, जब महामंत्री सुमंत अगले दिन राम को सरयू पार कराकर अकेले रथ लेकर वापिस लौट आए। सुमंत का उतरा हुआ चेहरा महाराज दशरथ अपनी आंखों से नहीं देख पाए उन्हें तो केवल सुमंत के आने की सूचना मिली थी और जब साथ में राम के आने की चहल-पहल नहीं सुनाई दी तो वे समझ गए कि अपने प्रण के पक्के राम पिता की मर्यादा के कारण वन को चले गए। और इधर दशरथ के प्राण चले गए।

कोई कुछ नहीं जान पाया, यह भाग्य-चक्र इतनी तेजी से कैसे घूम गया।

इस भाग्यचक्र ने मुझे क्या दिया, ननिहाल से लौटे भरत सोच रहे थे। न पिता, न भाई और माता के रूप में विमाता, जो अपने ही पुत्र का सुख नोंच-नोंच कर खा गई। अब तुम और क्या चाहती हो मां?

कैकेयी के पास इसका कोई जवाब नहीं था, और कहती भी क्या। वह तो स्वयं अनुभव कर रही थी, राम के प्रति किये गए अपने कठोर आचरण को। और सोच रही थी, किस प्रकार राम ने वचन की मर्यादा को रखते हुए क्रोधी लक्ष्मण को भी शान्त किया था और कहा था-

'लक्ष्मण! लक्ष्मी के इस उलटफेर के विषय में तुम कोई चिंता न करो, मेरे लिए राज्य अथवा वनवास दोनों ही समान हैं और यदि गंभीरता से विचार करो तो यह वनवास ही महान अभ्युदयकारी लग रहा है।'

'हे लक्ष्मण! मेरे राज्याभिषेक में जो विघ्न आया है, इसका कारण माता कैकेयी हैं, यह शंका मत करो, यह तो दैव की रचना है।'

कितनी उदारता से राम ने एक मां के कलुष को प्रक्षालित कर दिया था अपने सद्भाव से। कैसा बुद्धि पर पर्दा पड□ गया था उस समय, यह सोच रही थी कैकेयी और भरत व्यथित भाव से खड□ देख रहे थे-राजभवन में गहराते सन्नाटे को।

राम को वन जाना था, वे गए और इस प्रकार उन्होंने माता के वचनों को पूरा किया, लेकिन अब तो वे लौट सकते हैं। प्रतिज्ञा-पालन के लिए जो कदम आगे बढ□ गए उससे प्रतिज्ञा तो पूरी हो गई, यह सोचकर भरत ने वन में राम से भेंट करने का मन बना लिया। इधर भरत राम से मिलन की योजना बना रहे थे, दूसरी ओर राम अपने लक्ष्य की ओर आगे बढ□ रहे थे।

'पीछे मुड□कर मत देखो प्रिय लक्ष्मण! अब हम लोग वन की ओर आगे बढ□ रहे हैं। अब तुम्हें नगर की ओर इच्छा-भरी दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। इस समय मुझे पिता और अपनी माताओं के लिए बड□ा शोक हो रहा है, मुझे विश्वास है कि धर्मात्मा भरत हमारी अनुपस्थिति में अपने कोमल स्वभाव से माता-पिता को पूरी तरह संतुष्ट रखेंगे।'

और इस प्रकार राम ने वह पहली रात तमसा नदी के तट पर, पत्तों से बनी हुई शैया पर बिताई।

उनके साथ कितने ही पुरवासी आए थे। सुमंत ने कितना अनुरोध किया था उनसे लौटने के लिए लेकिन राम तो दृढ□निश्चय थे। प्रात:काल होने से पूर्व ही पुरवासियों को सोता छोड□कर वे अपने लक्ष्य की ओर बढ□ गए।

अयोध्या की सीमा पार करते हुए उन्होंने कहा था, 'हे इक्ष्वाकुवंशी राजाओं से पालित अयोध्या नगरी। मैं तुमसे आज वन जाने की आज्ञा चाहता हूं।'

'चौदह वर्ष की अवधि पूरी होने पर लौटकर फिर तुम्हारे दर्शन करूंगा। देखना, अपने वैभव को किसी भी प्रकार कम न होने देना।'

और इस प्रकार कोशल जनपद को लांघते हुए राम, लक्ष्मण और सीता सहित आगे बढ□ गए। कहीं सरोवरों में हंस और सारस कलरव कर रहे थे, कहीं बड□-बड□ वृक्ष छाया कर रहे थे, कहीं नदी तट पर सुंदर आश्रम बने हुए थे। ऐसे ही आगे बढ□ते हुए राम ऐसे राज्य में होकर निकले, जो सुख-सुविधा से सम्पन्न राजाओं के क्षेत्र में था। वहीं उन्हें देवी गंगा के दर्शन हुए।

कितना रमणीय स्थान था गंगा का, जिसके जल में देवता सदा गोता लगाते हैं। श्रृंग्वेश्वर में गुह नाम का राजा रहता था। वह राम का भक्त और उनका परम मित्र था। उसका जन्म निषाद कुल में हुआ था और वह निषादों का शक्तिशाली और विख्यात राजा था।

राजा गुह ने जब सुना कि राम उनके राज्य में पधारे हैं तो उसके हर्ष की कोई सीमा न रही, लेकिन जब उनके समीप आकर उन्हें भार्या और बंधु सहित वल्कल वस्त्रों में देखा तो वह ठगा-सा रह गया।

जिनके लिए सदैव चाकर और सेवक आदेश-पालन के लिए तत्पर रहते थे, वे इस पृथ्वी के स्वयंभू सम्राट पैदल चलते हुए वल्कल पहने वन में विचर रहे हैं। यह परिवर्तन कैसा।

राजा गुह को यह पहेली समझ में नहीं आई।

राम ने गुह को देख लिया और उसकी भक्ति पाकर उसे अपने हृदय से लगा लिया। 'हे राम! मैं भी आपका एक छोटा-सा सेवक हूं। आपके लिए जैसा अयोध्या का राज्य, वैसा ही यह राज्य भी है। बताइए कि मैं आपकी क्या सेवा करूं?'

लेकिन राम ने गुह द्वारा प्रस्तावित सारा राजसी वैभव लौटा दिया और वे एक सघन वृक्ष के नीचे फूस के बिछौने पर विश्राम करने चल दिए।

लक्ष्मण राम की सेवा के लिए जाग रहे थे।

गुह ने भाई के प्रति भाई का यह अनुराग देखा तो वह आश्चर्यचकित रह गया। इस पृथ्वी पर ऐसा भाव अन्यत्र दुर्लभ है।

रात बीतने पर जब सूर्योदय हुआ तो राम ने सुमंत को रथ सहित वापिस लौटने के लिए कहा

और स्वयं अपनी यात्रा पर आगे बढ□ते हुए वे नाव से पार जाने को तैयार हो गए।

नदी के तट पर सामने खड□ी नाव पर लक्ष्मण ने सीता को पकड□कर धीरे से ऊपर बैठाया, स्वयं बैठे और अंत में राम उस नाव पर आरूढ□ हो गए।

नाव धीरे-धीरे आगे बढ□ चली।

किनारे पहुंचकर राम ने वह नाव छोड□ दी और सीता और लक्ष्मण के साथ आगे बढ□ चले। सबसे आगे राम थे, बीच में सीता और पीछे उनकी सेवार्थ लक्ष्मण चल रहे थे। राम ने पीछे मुड□कर देखा कि नदी के उस पार एक परछाई अब भी तृष्णा भरी दृष्टि से राम को निहार रही थी, ये सुमंत थे जो अभी उन्हें देख रहे थे।

सुमंत वही थे जिन्होंने राम को पलने से, पैरों चलते और फिर दौड□ते, बढ□ते राजकुमार को पूर्ण पराक्रमी होते देखा था। वह वत्सलता की मूर्ति आज राम को वनवासी के रूप में एकान्त वन में जाते देखते रह गए। वे भी मर्यादा से बंधे हुए थे।

यह राम का पहला दिन था, जब वे अपने जनपद से बाहर थे और सुमंत उनके साथ नहीं थे।

'भ्राता श्री आज महाराज दु:ख से सो रहे होंगे और माता कैकेयी सफल मनोरथ होने के कारण संतुष्ट होंगी।'

'नहीं अनुज! ऐसा मत कहो, महाराज इस समय अनाथ की तरह अचेत होंगे और महारानी कैकेयी मतिभ्रम के कष्ट से दु:खी होंगी।'

'यह भी मेरा सौभाग्य है लक्ष्मण! कि मुझे पिता की आज्ञा-पालन करने का अवसर मिला। मुझे तो कष्ट यह है कि मेरे कारण माता सुमित्रा को भी तुम्हारा वियोग अनावश्यक सहना पड□गा। मेरा तो यह कहना है कि प्रिय लक्ष्मण। अब तुम भी यहां से वापिस लौट जाओ। मैं अकेला ही सीता के साथ दण्डक वन की ओर निकल जाऊंगा।'

'ऐसा मत कहिए तात! मैं जिस व्रत को लेकर आपके लिए यहां तक आया हूं वह अपूर्ण नहीं होगा। माता सुमित्रा की ममता और उर्मिला का स्नेह मेरे व्रत का ही एक अंग है। उन्हें त्यागकर मैं आपके साथ होने का सुख प्राप्त कर रहा हूं।'

यहां से राम, सीता और लक्ष्मण आगे बढ□ते हुए भागीरथी-यमुना के संगम पर पहुंचे। इस समय वे घने जंगल से होकर गुजर रहे थे।

रास्ते में कितने ही रमणीय स्थल देखने को मिले जो पहले कभी नहीं देखे। और चलते-चलते उन्होंने देखा-सामने अग्निदेव की ध्वजा रूप उत्तम धूम उठा रहा है।

राम ने कहा, 'मालूम होता है, महर्षि भारद्वाज का आश्रम आ गया है। उन्हें यहां दो नदियों के जलों के परस्पर टकराने से जो शब्द प्रकट होता है, वह सुनाई देने लगा था।'

सूर्यास्त हो चुका था। आश्रम की सीमा में पहुंचकर अपने धनुर्धर वेश से वहां के पशु-पक्षियों को जाते हुए दो ही घड□ी में वे भारद्वाज मुनि के समीप पहुंच गए।

महर्षि भारद्वाज अग्निहोत्र करके शिष्यों से घिरे बैठे थे। महर्षि को देखते ही राम, सीता और

लक्ष्मण ने उनके चरण स्पर्श किया।

'हे मुनिश्रेष्ठ! ये मेरे अनुज लक्ष्मण हैं, ये भार्या सीता और मैं अयोध्या नरेश दशरथ पुत्र राम। पिता की आज्ञा से हम वन में रहने का व्रत लेकर यहां आए हैं। अपना परिचय देते हुए राम ने कहा।'

'मैं तो बहुत पहले से तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा कर रहा था वत्स! आज मेरा मनोरथ सफल हुआ।'

भारद्वाज मुनि ने कहा, 'मैंने सुना है, तुम्हें अकारण ही वनवास दे दिया है?' 'वन की ओर प्रस्थान करते समय तो मुझे भी क्षण भर को यही लगा था मुनिवर। किन्तु यहां आपके आश्रम में आते-आते लग रहा है, इस जगत में अकारण कुछ भी नहीं होता। राजा का धर्म यही होता है न, कि वह प्रजा का समुचित पालन करे लेकिन राजधानी में रहकर वह याद नहीं कर पाता इसीलिए वन प्रदेश में घूमते हुए जो अनुभव मैं कर रहा हूं जन प्रदेश को जानने का, प्रजा के स्वरूप को पहचानने का, वह अयोध्या में रहकर कहां संभव था।'

'कितने ही नए स्थल हमने अब तक देखे हैं और कितने ही अभी देखने हैं, कितना अधिक जान पाऊंगा मैं अपने राज्य की सीमाओं को, लगता है चौदह वर्ष तो इस कार्य में लग ही जाएंगे। सच, माता कैकेयी ने कितने कुशल आकलन का परिचय दिया है। राज-धर्म के लिए अपने प्रदेश के विस्तार को पूरा समझे बिना कोई राजा सफल राजा हो ही कैसे सकता है।'

'तो फिर प्रिय राम। अब तुम इस आश्रम को ही अपनी वन-स्थली बनाकर यहीं रहो।'

'यह कैसे हो सकता है मुनिवर। मेरी कर्मस्थली तो यहां रहकर राजधानी की भांति ही सीमित होकर रह जाएगी। सम्पूर्ण आर्यावर्त के दर्शन करने का अभिलाषी मेरा मन यहां आश्रम की सीमाओं में अब नहीं बंध पाएगा मुनिवर। मैं तो यहां कुछ देर विश्राम करके आपका आशीर्वाद लेकर आगे अपने गन्तव्य की ओर ही बढ□ूगा। पूरा प्रदेश मुझे पुकार रहा है।'

'और हे मुनिवर। मेरे नगर और जनपद के लोग यहां से बहुत निकट पड□ते हैं। यहां मुझसे मिलना सुगम समझकर लोग इस आश्रम में हमसे मिलने आते रहेंगे, जिससे हमारा उद्देश्य शिथिल पड□ सकता है और मन का लक्ष्य कमजोर।'

'तो फिर वत्स। ऐसा करो कि यहां से लगभग तीस कोस दूर बड□ा सुंदर, मनोहारी और पवित्र पर्वत है, जहां तुम निवास कर सकते हो।'

'गंधमादन के समान विख्यात और मनोहर वह चित्रकूट नाम का स्थल तुम्हारे लिए बड□ा उपयोगी रहेगा। जब मनुष्य चित्रकूट के शिखर का दर्शन कर लेता है तो ऐसा लगता है मानो उसने पुण्य कर्मों का फल पा लिया है। यहां कितने ही ऋषि तपस्या करते हुए सैकड□ों वर्षों तक पुण्य-लाभ करके स्वर्ग की यात्रा करते हैं।'

'मैं तुम्हारे एकान्त वास के योग्य उस पर्वत को पूरी तरह से उपयोगी मानता हूं।' यह कहते हुए मुनि भारद्वाज ने तीनों आगन्तुकों का बड□ स्नेह और वत्सल भाव से आतिथ्य सत्कार किया।

यह रात्रि राम ने- मुनि भारद्वाज के आश्रम में बड□ सुखपूर्वक बिताई।

प्रात:काल अपने मार्ग पर आगे बढ□ने के लिए तत्पर श्रीराम ने महर्षि से आज्ञा ली। भारद्वाज ने उन्हें बताया- 'गंगा और यमुना के संगम पर पहुंचकर यमुना नदी के निकट जाकर वहीं से पार उतरने के लिए घाट से तुम यमुना पार कर लेना। वहां एक बहुत बड□ा बरगद का वृक्ष है, यह श्यामवट नाम का वृक्ष है। इसके नीचे बहुत से सिद्ध पुरुष निवास करते हैं। यहां तुम श्यामवट से आशीर्वाद प्राप्त करना। एक कोस दूर और आगे बढ□ने पर तुम्हें चीड□ और बेर के पेड□ मिलेंगे, यह नीलवन है, बड□ा रमणीय स्थान है। यहीं से चित्रकूट के लिए सीधा रास्ता जाता है।'

मुनि से आज्ञा लेकर राम अपने गन्तव्य की ओर बढ□ गए।

यहां उन्होंने देखा कि वन का यह भाग बड□ा ही रमणीय है, ऐसा लग रहा था मानो फलों की वर्षा-सी हो रही है, चातक और कोयल की गूंज वातावरण में मधुरता घोल रही थी। अनेक प्रकार के पक्षियों से परिपूर्ण यह प्रदेश मनोरम चित्रकूट का पर्वतीय प्रदेश था। यहां स्वादिष्ट जल भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध था।

'हे लक्ष्मण! यह पर्वत तो बड□ा ही मनोहर है, यहां नाना प्रकार के वृक्ष और लताएं इसकी शोभा बढ□ा रही हैं, बड□ ही उत्तम फल-फूल हैं। हमें लगता है कि यहां पर बड□ सुख से जीवन-निर्वाह हो सकता है। इस पर्वत पर बहुत-से महामुनि निवास करते हैं, यही स्थान वास के योग्य है।'

ऐसा निश्चय करके कुछ देर के लिए उन्होंने वहां विश्राम किया और फिर लक्ष्मण से कहा, 'हे सौम्य। तुम जंगल से अच्छी और मजबूत लकडि□यां ले आओ। मेरा मन करता है कि यहीं एक कुटी तैयार की जाए। यहां हम कुछ समय के लिए सरलता से रह सकते हैं।'

राम की आज्ञा पाकर लक्ष्मण ने तुरंत ही अनेक प्रकार के वृक्षों की डालियां काटकर देखते-ही-देखते एक पर्णकुटी तैयार कर डाली।

वह कुटी बाहर-भीतर से लकड□ी की दीवार से स्थिर बनी थी और उसे ऊपर से घास-फूस से ढक दिया था जिससे वर्षा का निवारण हो सके।

कुटिया को सीता ने अपने अनुकूल बनाने के लिए उसे वन के ही अवयवों से सजा दिया था। आज पहली बार सीता ने अपनी कुटिया में रसोई पकाई और गजकंद का भोजन तैयार किया। यह गजकंद एक प्रकार का जंगली कंद होता है।

सभी देवताओं का पूजन करके राम ने पवित्र भाव से उस कुटिया में प्रवेश किया। यह मनोहर कुटिया देखकर सीता को लगा मानो राजमहल उसकी इस कुटिया में सिमट आया है। आसपास की लताएं, सुंदर फलदार वृक्ष, पास में सरिता का बहता जल का मधुर कलरव, पक्षियों की मनभावनी चहचहाहट सभी कुछ तो प्रसन्नतादाई था, उस पर चित्रकूट का रमणीय वातावरण माल्यवती की जलधारा उन्हें प्रसन्न कर रही थी।

ऐसे कितने ही दिन बीतते रहे पर्णकुटी में रहते हुए।

एक लाख घुड□सवार के साथ महर्षि वसिष्ठ और वामदेव आदि के नेतृत्व में माताओं को साथ लेकर रथ पर आरूढ□ होकर श्रीराम को वापिस अयोध्या लौटाने के लिए भरत बड□ वेग से बढ□ रहे थे।

भारद्वाज मुनि से उन्हें यह ज्ञात हो गया था कि श्रीराम यहां से चित्रकूट की ओर गए हैं। वे चित्रकूट की ओर बढ□ गए।

राम सीता के साथ बैठे हुए बातचीत कर रहे थे कि तभी उन्हें वातावरण में कोलाहल और धूल एक साथ अनुभव हुए। वहां भयभीत हाथियों के झुण्ड अचानक इधर से उधर भागने लगे।

राम ने कहा, 'लक्ष्मण! तनिक देखो तो सही, इस विशाल वन में हाथियों के झुण्डों का और इन पशुओं के भय का कारण क्या है? कहीं कोई राजकुमार शिकार तो खेलने नहीं आ गया।'

एक विशाल वृक्ष पर चढ□कर लक्ष्मण ने पूर्व दिशा की ओर देखा तो वे अचम्भे में रह गए।

यह तो एक विशाल सेना है, हाथी, घोड□ों और रथों से युक्त पैदल सैनिक किस प्रकार दौड□ लगाते हुए आगे बढ□ रहे हैं?

संध्या का समय था। तेजी से लक्ष्मण ने आकर कहा, 'आप यह आग बुझा दें आर्य! और हे मैथिली देवी। आप अपनी गुफा में प्रवेश कर जाएं और आप महाराज अपने धनुष पर प्रत्यंचा चढ□ा लें और कवच धारण कर लें।'

'यह तुम युद्ध की तैयारी के लिए क्यों कह रहे हो भाई! क्या कोई शत्रु की सेना है, अच्छी तरह से देख भी लिया है?'

'हे तात। मुझे निश्चय है कि यह भरत की सेना है जो अयोध्या में अपना राज्याभिषेक कराकर राज्य को निष्कंटक बनाने के भाव से हम दोनों को मार डालने के लिए यहां आ रही है।'

'यह भरत हमारा शत्रु है आर्य। आज मैं अपने रोके हुए क्रोध को शत्रु की सेना पर सूखी घास पर आग की तरह उड□ल दूंगा तात। भरत को भी यह ज्ञात हो जाएगा कि राज्य कैसे किया जाता है।'

'तुम्हारा विवेक तो नष्ट नहीं हो गया, तुम अभी तक माता कैकेयी पर कुपित हो। अपने क्रोध को शान्त करो और तनिक संतुलित होकर विचार करो।'

'जिस मर्यादा की रक्षा के लिए मैं विनम्र भाव से राज्य का त्याग करके वन में रहने के लिए आया हूं, अब यदि मैं भरत को युद्ध में मारकर उसका राज्य छीन लूं तो अनचाहे मिली यह निंदा क्या अच्छी रहेगी? देखो, अपने बंधु-बांधवों अथवा मित्रों का विनाश करके जिस धन की प्राप्ति होती है, वह विष के समान होती है।'

'प्रिय भाई। मैं तुमसे प्रतिज्ञा करके कहता हूं कि मैं यह पृथ्वी का राज्य अपने भाइयों के सुख के लिए करता हूं, उन्हें मार्ग से हटा देने के लिए नहीं और मैं जानता हूं कि समुद्र से घिरी यह पृथ्वी मेरे लिए कोई दुर्लभ नहीं है। मैं अधर्म से इन्द्र का पद भी प्राप्त नहीं करना चाहता।'

'तुम शायद भूल गये हो कि भरत हमारे लिए प्राणों से प्रिय है, तुम तो कल्पना नहीं कर सकते

भाई। तुम्हारे और सीता के साथ जिस प्रकार माता की आज्ञा स्वीकार करके वल्कल पहनकर हम लोग वन में आ गए हैं, तभी से उनकी मन:स्थिति दु:ख से भर गई है। वे तो कुल धर्म का विचार करके प्रेम से, श्रद्धा और भक्ति से हमसे मिलने आ रहे हैं।'

'तुम्हें नहीं मालूम कि भरत का हम लोगों से मिलने के लिए आना सब प्रकार से समयोचित है, वे हमारा अहित करने नहीं बल्कि अपना दायित्व पूरा करने आ रहे हैं। हे लक्ष्मण। मैं भरत को जानता हूं, ननिहाल से लौटकर और सारा घटनाक्रम जानकर वह अवश्य ही माता पर कुपित हुए होंगे और अब पिता की आज्ञा से वे मुझे राज्य लौटाने आ रहे हैं।'

'आपकी उदारता की भी कोई सीमा नहीं है आर्य। आपको किसी के मन का कलुष ज्ञात ही नहीं होता।'

'इसे ज्ञात करने की आवश्यकता नहीं होती लक्ष्मण! यह रोमछिद्रों से चेहरे के बाहर झलक उठता है और यदि तुम अभी भी संयत नहीं हो पा रहे हो तो मैं भरत के आने पर उससे यह कह दूंगा कि तुम यह राज्य लक्ष्मण को दे दो भाई और यदि उन्होंने अच्छा कहकर मेरी बात स्वीकार कर ली, तब तो तुम मेरी बात मानोगे ना। देखो! तुम भरत के आने पर उससे कोई कठोर या अप्रिय वचन न कहना, यदि तुमने ऐसा किया तो मैं यह समझूंगा कि तुम मुझे ही अप्रिय वचन कह रहे हो।'

राम के शान्त भाव से ऐसा कहने पर लक्ष्मण को अपने दृष्टिकोण के दूसरे हिस्से के दर्शन हो गए। वे पेड□ से नीचे उतर आए और भरत के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। सेना को दूर छोड□कर निषादराज गुह के साथ राम की तलाश करते हुए वे जब राम की पर्णकुटी के समीप आए तो सामने वल्कलधारी राम को देखकर क्षणभर के लिए हतप्रभ रह गए।

'क्या दुर्भाग्य है, मेरे कारण राम इस निर्जन वन में, पृथ्वी के खुले आंगन में, एक तपस्वी के रूप में जीवन काट रहे हैं। मेरे ऐसे जन्म को धिक्कार है, कितना निंदनीय हो गया हूं मैं। यदि मैं न होता तो मां किसके लिए राज्य की याचना करती और क्यों राम को राज्य-वैभव छोड□कर इस रूप में आना पड□ता।'

भरत राम को इस अवस्था में देख शोक और मोह में डूबे बड□ वेग से उनकी ओर दौड□ पड□।

आर्तभाव से विलाप करते हुए नहीं रोक पाए भरत अपने धैर्य को, नहीं रोक पाए अपने आंसुओं को, उनकी वाणी भी तो उनका साथ छोड□ गई, शब्द मानो तालु में अटक कर रह गए।

भरत ने कुछ नहीं देखा, वे सिर्फ राम के चरणों में लोटपोट होते हुए अपने संतप्त हृदय से मानो अपनी मां के दुष्कृत्य का पाप धो रहे थे।

राम ने बड□ी कठिनता से भरत को अपनी भुजाओं से उठाया, अश्रुओं से भीगी आंखों से भरत को एक पल के लिए देखा और अपने कंठ से लगा लिया।

राम भरत को सांत्वना दे रहे थे और लक्ष्मण पास ही खड□ अपने मन में कुविचार के

पश्चाताप की आग में पिघल रहे थे। राम से अलग हुए भरत का लक्ष्मण ने अभिवादन किया और इस तरह मेल-मिलाप का जो सिलसिला शुरू हुआ तो पता ही नहीं चल पाया कि कब रात्रि घोर अंधकार की गोद में पहुंच गई।

कुछ विश्राम पाकर राम ने लक्ष्मण की ओर संकेत से देखा, लक्ष्मण स्वयं को उनसे आंख मिलाने योग्य नहीं पा रहे थे।

'सुनो भरत। हमारे आने के बाद हमारे पिता स्वस्थ तो हैं?'

'किस पिता की बात कर रहे हो आर्य। उन्हें तो मैं भी नहीं देख पाया। वह तो आर्य सुमंत की आपको विदा करके लौट आने की भी प्रतीक्षा नहीं कर पाए। देखिए- माताओं के मध्य में खड□ी महाराज की प्रिय रानी कैकेयी की सूनी मांग क्या आपको नहीं बता रही कि इन्होंने युद्ध में महाराज के प्राण बचाकर अपनी घायल उंगली का मूल्य उनके अंतिम क्षणों में पूरा चुका लिया। बेबस थे पिता अपने प्रण के समक्ष, मेरे पहुंचने पर ये मुझे सिर्फ उनके दर्शन करने का अवसर ही प्राप्त हुआ। संवाद करने का नहीं। कितना दुर्भाग्यशाली हूं मैं, जिसके सिर से असमय ही पिता का साया उठ गया और शुभेच्छु भाई का सान्निध्य छिन गया।'

'हे तात। आपने कभी सोचा कि आपके बिना भरत कैसे जीवित रह पाएगा। आपकी मर्यादा और पिता के प्रण के बीच में मेरी भावना, मेरी श्रद्धा, भक्ति कितनी कुचली गई है, इसे किसी ने नहीं सोचा आर्य।

'अपने मोहान्धकार में मां कैकेयी ने वरदान मांगकर आपके लिए वनवास निश्चित कर दिया और मेरे लिए राज्याभिषेक, बिना यह अनुमान लगाए कि राम के बिना भरत का अस्तित्व अधूरा है। राज्य-उपभोग तो बहुत दूर की बात है आर्य। राम के बिना तो जीने की कल्पना करना भी संभव नहीं। मैं आपसे कुछ नहीं कह सकता, केवल अपने दुर्भाग्य पर रो सकता हूं मुझे किस अपराध का दंड मिला जो मैं सनाथ होकर भी बलात् अनाथ बना दिया गया। एक स्त्री-बुद्धि जड□ता के अंधेरे में डूबती चली गई और प्रकाश की किरणों ने इसे उसकी नियति बना दिया, यह तो कोई न्याय नहीं हुआ आर्य। यदि आप वास्तव में मुझे सुखी देखना चाहते हैं तो...।'

'ठहरो भरत! एक क्षण के लिए ठहरो। तुम भावना में इतना आगे बढ□ गए कि मुझे पीछे छोड□कर कम-से-कम पिता के अवसान पर दो क्षण के लिए अपने श्रद्धा सुमन समर्पित करने के लिए मुझे तनिक तो विश्राम दो।'

एक क्षण को राम ने आंखें बंद कीं और फिर आंखें खोलकर तीनों माताओं की ओर दृष्टिपात किया। राम ने उन्हें देखते ही जो अनुमान लगाया था, वह सत्य था। उस रोज जब संध्याकाल में एक पक्षी बहुत देर तक पेड□ की टहनी पर चीं-चीं करता रहा और उसके बाद उड□ गया और फिर सन्नाटा छा गया था वृक्ष पर, तभी राम को संदेह हो गया था कि यह छटपटाहट और यह नीरव सन्नाटा निश्चय ही किसी अनिष्ट का संकेत है, लेकिन पिता नहीं रहे, यह समाचार कितना पीड□ादायी था, इसे लक्ष्य करना सरल नहीं।

अपने-आपको संभालते हुए राम ने कहा, 'प्रिय भरत! अब तुम्हें शांत होना चाहिए। तुम्हारे

पीछे कुल की मर्यादा, राज्य की रक्षा, राज-परिवार की समस्या और प्रजा का हित- सभी का दायित्व है।'

'इसी के लिए तो मैं आपसे कहता हूं राघव। आपके चरणों में अपना मस्तक रखकर याचना करता हूं कि मुझ अनाथ को सनाथ करें और दुर्बुद्धि मां को क्षमा करते हुए अपना राज्य ग्रहण करें। मैं आपका अनुज, शिष्य और दास हूं।'

एक बार फिर भरत को सांत्वना देते हुए राम ने कहा, 'देखो। मुझे वन में जाने की आज्ञा माता और पिता दोनों ने दी थी और तुम्हारे लिए राज्य का अभिषेक क्योंकि पिता अब हमारे मध्य नहीं हैं, हमारे मध्य है केवल उनकी आज्ञा, मेरे लिए वन की आज्ञा और तुम्हारे लिए राज्य की आज्ञा। हम दोनों ही इस आज्ञा से बंधे हुए हैं भाई। मुझे तो अब चौदह वर्ष तक दण्डकारण्य में रहना ही है, इसलिए मैं नहीं लौट पाऊंगा।'

'तो फिर अयोध्या के राज्य के लिए प्रतीक रूप में आप अपनी पादुकाएं मुझे दें जिससे मैं आपके आदेश का पालन कर सकूं। राजा तो आप ही हैं राघव। मैं तो आपका अनुचर हूं।'

राम के समक्ष उनके दृढ□ संकल्प के सामने आंसुओं का एक अपार समुद्र हिलोरें ले रहा था। सबके मन से यही भाव प्रकट हो रहा था कि किसी भी प्रकार राम वापिस लौट चलें।

लेकिन शायद होनी को यह स्वीकार नहीं था।

अब राम ने सीता और लक्ष्मण के साथ कुल गुरु वसिष्ठ के आदेश से रमणीय मंदाकिनी के तट पर पवित्र जल को लेकर अपने स्वर्गलोकी पिता के लिए अंजलि भर जल दिया। पिता को जलांजलि देकर वे लोग आगे बढ□। वह रात्रि पिता की मृत्यु के दु:ख, शोक से स्मरण करते हुए व्यतीत हुई।

प्रात:काल स्नान होम आदि करने पर सभी लोग राम के पास आकर बैठ गए। सभी ने राम से पुन: राज्य-ग्रहण की प्रार्थना की, लेकिन राम उसे मर्यादा के कारण स्वीकार नहीं कर सके। राम ने समझा-बुझाकर भरत को वापिस अयोध्या लौटा दिया। माताएं जिस आशा को लेकर आई थीं, अब वे एक गहरे अंधेरे में वियोगी भाव लिए लौट रही थीं। अविचल राम वन के लिए दृढ□ संकल्पी थे।

भरत राम की पादुकाएं लेकर बड□ बोझिल मन से लौट रहे थे, पूरी सेना में चित्रकूट आते समय जो उत्साह था, अब ऐसा लग रहा था मानो कई-कई मन के पत्थर पैरों से बंध गए हों। किसी का भी मन अयोध्या लौटने के लिए नहीं तैयार था लेकिन भरत की लाचारी थी, पिता के बाद अब राम की ही सर्वोपरि आज्ञा थी इसलिए वे अयोध्या लौट तो आए पर नगर में फिर दुबारा नहीं लौटे। अयोध्या से बाहर नंदी ग्राम में राम ही की तरह कुटिया बनाकर राजसी सुविधाएं होने पर भी वल्कल धारण किए भरत ने भी राम की वनवास अवधि को नंदी ग्राम में काटने का निश्चय किया।

और राम भरत को विदा करके अपने वनवास काल को आगे किस प्रकार बिताया जाए इस पर विचार करने लगे।

महर्षियों से उन्हें यह ज्ञात हुआ कि यहीं पास के वन प्रान्त में रावण का छोटा भाई खर बड□ा उद्दंडी हो गया है, वह नरभक्षी वहां के जन समुदाय को आहत करता था, इसलिए धीरे-धीरे वह तपस्वियों से सुशोभित प्रदेश खाली होने लगा।

साथ ही राम को यह भी लगने लगा कि इसी स्थान पर भरत का बड□ा भावपूर्ण मिलन हुआ है, वह स्मृति बराबर यहां बनी रहेगी, यह सोचकर राम, सीता और लक्ष्मण के साथ चित्रकूट की यह पर्णकुटी छोड□कर किसी दूसरे पड□ाव की तलाश में आगे बढ□ गए।

दण्डकारण्य में प्रवेश

महर्षि अत्रि के यहां से होते हुए अब श्रीराम दण्डकारण्य में प्रवेश कर गए।

यहां के आश्रम प्राणियों को शरण देने वाले थे। ऋषियों की ब्रह्मविद्या के अध्यास से विलक्षण तेज के कारण यहां राक्षस आदि का आना भी वर्जित था। स्वच्छ आंगन, वन्य पशुओं से भरा मनोरम प्रदेश, जहां अप्सराएं प्रतिदिन आकर नृत्य करती थीं, अग्निशालाएं, यज्ञपात्र, मृगचर्म, जलपूर्ण कलश, फल देने वाले बड□-बड□ वृक्ष से भरा आश्रम किसी देवस्थान से कम नहीं था।

जब वहां के अग्नि के समान तेजस्वी और धर्मपरायण महाभाग मुनियों ने श्रीराम को देखा तो अतिथि के रूप में उनका विधिवत् सम्मान किया, कंद-मूल आदि से उनका सत्कार किया।

राम के चेहरे की आभा को देखकर वे यह पहचान गए कि रघुकुल के कुलभूषण राम ये ही हैं।

'हम आपके राज्य में निवास करते हैं अत: हे राजन! आपको हमारी रक्षा करनी चाहिए। आप नगर में रहें या वन में, हम लोगों के राजा ही हैं, आप ही समस्त जनसमुदाय के शासक हैं।'

'हमने क्रोध और इन्द्रियों को जीतकर जीवमात्र को दंड देना छोड□ दिया है। अब तो तपस्या ही हमारा धन है और आप हमारे राजा हैं। इसलिए हमारी रक्षा करना आपका धर्म है।' राम ने एक रात दण्डक वन के उन महर्षियों का आतिथ्य स्वीकार करके उस आश्रम में ही बिताई और प्राप्त-काल होने पर उनसे विदा ली।

अभी ये लोग मध्य भाग में भी नहीं पहुंचे थे कि भयंकर जंगली पशुओं से भरे उस दुर्गम वन में एक राक्षस दिखलाई दिया।

खून से भीगा और चर्बी से गीला व्याघ्र चर्म पहने यह राक्षस इनके सम्मुख यमराज के समान मुंह बाएं खड□ा हो गया।

राम और लक्ष्मण को सीता के साथ देखकर उसने चिंघाड□ कर कहा, 'तपस्वी आदमी का स्त्री से क्या काम? मैं विराध हूं और प्रतिदिन ऋषियों के मांस का भक्षण करता हुआ इस दुर्गम वन में विचरता हूं।'

सीता को देखकर वह दुष्ट राक्षस मोहासक्त हो गया और बोला 'सुंदरी! तुम जैसी सुंदर नारी इनके साथ शोभा नहीं देती, तुम तो मेरी पत्नी होने योग्य हो और राम-लक्ष्मण की ओर इंगित करता हुआ वह बोला, 'ठहरो, तुम दोनों को तो मैं अभी मारकर तुम्हारा रक्तपान करता हूं।'

जैसे ही वह दुष्ट सीता को अपनी ओर खींचने का प्रयास करने लगा, वैसे ही राम चिंतित हो उठे, उन्हें लगने लगा कि शायद वन में हमारे लिए ये भी दु:ख माता कैकेयी को अभीष्ट था, इसके लिए भी उसने वर मांगे थे। मुझे तो पिताजी की मृत्यु और राज्य के त्याग से भी उतना

दु:ख नहीं हुआ, जितना अब हो रहा है।

विराध ने गरजते हुए कहा, 'अरे, मैं पूछता हूं बताओ कि तुम दोनों कौन हो?' 'तुझे मालूम होना चाहिए दुष्ट, हम इक्ष्वाकु वंशी क्षत्रिय हैं। मैं राम हूं और ये मेरे भाई लक्ष्मण। अब तू बता, तू कौन है जो दण्डक वन में स्वेच्छा से विचरण कर रहा है?' 'मैं जव नाम के राक्षस का पुत्र हूं। मुझे ब्रह्मा ने वरदान दिया है कि मेरा वध किसी भी शस्त्र से नहीं होगा, कोई भी मेरे शरीर को छिन्न-भिन्न नहीं कर सकता।' 'तो ले, अब तू मेरा शाप भी ग्रहण कर नीच!' और यह कहते हुए राम ने अपने उस वनवास काल में पहली बार दिव्य आग्नेय तेजस्वी बाणों का प्रयोग किया। गरुड□ के समान वेग वाले और स्वर्ण पंखों से सुशोभित बाण उस विराध के शरीर को भेदकर रक्त से सने पृथ्वी पर गिर पड□।

अब वह राक्षस पीड□ा से अत्यन्त कुपित हो गया, सीता उसके चंगुल से छूट गयी थीं, अब उसने लक्ष्मण पर अपना प्रहार करना शुरू कर दिया।

यमराज के समान उस भयंकर राक्षस के ऊपर दोनों ही भाइयों ने प्रज्ज्वलित बमों की वर्षा की, यह देख वह अट्टहास करके खड□ा हो गया और अंगड□ाई लेने लगा जिससे वे सभी बाण उसके शरीर से निकलकर बाहर गिर पड□। उसके फेंके शूल को राम ने कष्ट डाला। यह देखकर आघात से घायल वह राक्षस उन दोनों को भुजाओं से पकड□कर भागने की योजना बनाने लगा। उसने दोनों भाइयों को बालकों की तरह उठाकर कंधे पर डाल लिया।

सीता ने जब यह देखा तो विलाप करने लगीं और उसने कहा, 'हे राक्षस। तुम इन दोनों को छोड□ दो क्योंकि वैसे भी मुझ अकेली को जंगली पशु खा जायेंगे। तुम मुझे अपने साथ ले चलो।'

वह राक्षस उसकी बात सुनकर जैसे ही रुका, कंधों पर बैठे राम और लक्षण ने उसकी दोनों भुजाएं तोड□ डालीं।

भुजाओं के टूटते ही वह टूटे पहाड□ की तरह गिर पड□ा।

राम यह जान गए कि यह युद्ध में नहीं जीता जा सकेगा क्योंकि इसे वरदान प्राप्त है, इसलिए अच्छा यही होगा कि तुम इसके लिए एक गड्ढा खोद दो। यह कहते हुए राम ने अपने पैर से विराध का गला दबा दिया।

अब विराध को यह प्रकट हो गया कि मुझे इस प्रकार परास्त करने वाले कोई और नहीं, राम ही हैं। तो उसने विनती करते हुए कहा, 'हे महाभाग। कृपया मेरी सुनें।' राम ने उसके अचानक इस बदले व्यवहार को देखकर उसका गला छोड□ दिया और बोले, 'कहो, क्या कहना चाहते हो?'

'मुझे कुबेर के शाप के कारण इस राक्षस योनि में आना पड□ा। मैं तो तुम्बरू नाम का गन्धर्व हूं। मेरी यह दशा रम्भा पर आसक्त होने के कारण हुई। आपकी कृपा से ही मेरा उद्धार होना था, अब आप यहां से डेढ□ योजन की दूरी पर महामुनि शरभंग के निवास पर शीघ्र चले जाइए। मुझे मेरे इस शरीर को आप इस गड्ढे में ही गाड□ दीजिए। मैं यह शरीर छोड□कर स्वर्ग

वापिस लौट जाऊंगा।'

राम ने ऐसा ही किया।

आश्रम का तो दृश्य ही निराला था। वहां आकाश में एक श्रेष्ठ रथ पर देवराज इन्द्र विराजमान थे और अनेक महात्मा उनकी पूजा कर रहे थे और देवराज इन्द्र स्वयं शरभंग मुनि के साथ बातचीत कर रहे थे।

लक्ष्मण को सीता के साथ वहीं छोड□कर राम मुनि के आश्रम के भीतर गए।

इन्द्र ने उन्हें कहा, देखो आपके आश्रम में राम आ रहे हैं, अब आप उनसे वार्ता करें। यह कहकर इन्द्र विदा हो गए क्योंकि इस समय वे राम से मिलना नहीं चाहते थे। इन्द्र के चले जाने पर मुनि ने तीनों अतिथियों का स्वागत किया और राम से कहा, 'हे राम! ये इन्द्र मुझे ब्रह्मलोक ले जाना चाहते हैं लेकिन जब मैंने आपको अपने आश्रम में आते देखा तो मैंने निश्चय किया कि मैं आप जैसे प्रिय अतिथि का दर्शन किए बिना ब्रह्मलोक नहीं जाऊंगा।'

'हे महामुनि। इन सब लोकों की प्राप्ति तो आपको मैं करा दूंगा, आप तो इस समय यह बताइए कि मैं अपना निवासस्थान कहां बनाऊं?'

'इसके लिए आप समीप ही स्थित जो रमणीय वन प्रान्त है, वहां मुनि सुतीक्ष्ण के पास चले जाइए वे आपकी पूरी व्यवस्था करेंगे।'

'और ये जो फूलों के समान छोटी डोंगियां हैं, उनके सहारे नदी के विपरीत दिशा में किनारे-किनारे चलकर आप वहां पहुंच जायेंगे।'

और इसके बाद शरभंग मुनि ने अपने प्राण त्याग दिए।

मुनि के द्वारा बताए मार्ग से राम, सीता और लक्ष्मण तीनों ही सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम में पहुंचे।'

राम का स्वागत करते हुए सुतीक्ष्ण ने कहा, 'हे वीरों, मैं आप ही की प्रतीक्षा में था। यही आश्रम सब प्रकार से आपके सुखपूर्वक निवास के लिए उपयुक्त है, यहां सदा ही ऋषि मुनियों का समुदाय आता रहता है और बड□-बड□ मृगों के झुण्ड यहां क्रीड□ा करते हैं लेकिन किसी को कष्ट नहीं देते। यहां केवल मृगों के उपद्रव का ही संकट है और कोई दोष नहीं है।'

'हे महामानव! यदि मैंने उन उपद्रवी मृगों को मारा तो इसमें आपका अपमान होगा, इसलिए मैं इस आश्रम में अधिक समय नहीं निवास करना चाहता।' और यह कहते हुए वे अन्य दण्डकारण्यवासी मुनियों के रमणीय आश्रमों का दर्शन करने के लिए चलने को तत्पर हो गए।

तो मुनि ने कहा, 'अन्य आश्रमों का दर्शन करके आप यहीं लौट आइए श्रीराम!' राम ने कहा, 'मुझे तो शरभंग मुनि के आश्रम पर धर्म के ज्ञाता समागत ऋषि समुदाय के कथन का ध्यान आ रहा है, जिन्होंने मुझे बताया था कि इस वन में रहने वाला वानप्रस्थ महात्माओं का समुदाय राक्षसों के द्वारा अनाथ की तरह मारा जा रहा है। चम्पा सरोवर और उसके निकट रहने वाले तुंगभद्रा नदी के तट पर जिनका निवास है, जो मंदाकिनी के पास रहते हैं और चित्रकूट के पास अपना निवास बना लिया है, यह सभी ऋषि, महर्षि राक्षसों के द्वारा संतप्त अनुभव कर रहे हैं।

मुझे तो इन्हीं मुनियों की रक्षा करनी है जिसके लिए मैं यहां आया हूं।'

राम के इस दृढ□ निर्णय को देखकर सीता ने उनसे कहा, 'हे स्वामी! आपको बिना बैर के दण्डकारण्य वासी राक्षसों के वध का विचार नहीं करना चाहिए। इस समय हम वन यात्रा पर हैं और अहिंसा ही हमारा धर्म है।'

'तुमने जो कुछ कहा है सीता, वह ठीक है, लेकिन ये शरणागत वत्सल जानकर ही मेरे पास आए थे, निरपराध को मृत्यु के मुंह में जाते हुए देखकर भला कोई क्षत्रिय रोक पाया है अपने-आपको, और फिर मैं तो राजकुल से हूं, तुम तो जानती हो कि शेर अपनी मांद में हो या जंगल में, वह तो शेर होता है, इसलिए मुझे, चाहे मैं अयोध्या में रहता या यहां वनवासी के रूप में हूं, अपने आश्रम में आए ब्राह्मणों की रक्षा करना तो मेरा धर्म है और इसके लिए मैं अपने प्राण छोड□ सकता हूं लेकिन अपना कर्तव्य नहीं। तुम्हारी बातें बड□ी प्रिय हैं और तुम्हारे अनुकूल भी, लेकिन मुझे अपना धर्म करना ही होगा।' यह निश्चित विचार करके ये लोग मुनि के आश्रम से चल पड□। संध्या होने पर उन्हें अपने सम्मुख एक बहुत बड□ा तालाब दिखलाई पड□ा, यह लाल और सफेद कमल पुष्पों से भरा हुआ था, सारस, हंस और कलहंस पक्षी वहां क्रीड□ा कर रहे थे।

राम ने कौतूहलवश अपने साथ आए धर्मव्रत मुनि से पूछा, 'हे महात्मन्। ये हम कहां पहुंच गए?'

'यह माण्डकर्णी मुनि का आश्रम है, इस जलाशय में ही उन्होंने दस सहस्र वर्षों तक तपस्या की थी, यह पंचाप्सर सरोवर तीर्थ के नाम से जाना जाता है।'

'कहते हैं कि मुनि की तपस्या से भय खाकर देवराज इन्द्र ने अपनी पांच प्रधान अप्सराओं को मुनि का तप भंग करने के लिए यहां भेजा था।'

'लौकिक और अलौकिक, धर्म-अधर्म का ज्ञान प्राप्त किए उन माण्डकर्णी मुनि को उन पांचों अप्सराओं ने अपनी अंगकांति के वैभव से प्रभावित करते हुए काम के वशीभूत बना दिया।'

'मुनि की पत्नी बनी हुई वे पांचों ही अप्सराएं तालाब के भीतर बने घर में वास करने लगीं और वहीं से मुनि को अपनी सेवाओं से संतुष्ट करती रहीं।'

यह तो बड□ आश्चर्य की बात है, राम ने सोचा। वहीं उन्हें एक आश्रम मंडल दिखाई पड□ा।

सीता और लक्ष्मण के साथ श्रीराम ने आश्रम मंडल में प्रवेश किया और यहां सुखपूर्वक निवास किया।

इस प्रकार कुछ समय-कहीं दस महीने, कहीं साल भर, कहीं पांच-छह महीने, कहीं इससे भी अधिक बिताते हुए श्रीराम ने विभिन्न आश्रमों में घूमते हुए दस वर्ष बिता दिए और घूम-फिरकर वे लौटकर सुतीक्ष्ण के आश्रम पर ही आ गए।

अब राम के मन में यह विचार उठा- कि इस वन में मुनि श्रेष्ठ अगस्त्य जी भी वास करते हैं, इनकी इच्छा थी कि वे महर्षि का दर्शन करें।

सुतीक्ष्ण मुनि ने उन्हें बताया कि नाना प्रकार के पक्षियों के कलरव से गुंजित उस रमणीय आश्रम के पास भाति-भांति के कमल युक्त सरोवर हैं। यह आश्रम यहां से चार योजन दूर दक्षिण में स्थित है। यह उनके भाई का आश्रम है और वही से एक संयोजन आगे आपको अगस्त्य मुनि का आश्रम मिलेगा।

पकी हुई पीपल युक्त गंध से राम को यह आभास हो गया कि वे अपने गंतव्य की ओर आ गए हैं। वहां उन्हें जंगल के बीच में अग्नि का धुआं दिखलाई दिया। राम ने सोचा, यही अगस्त्य जी के भाई का आश्रम होगा और यहीं अगस्त्य जी ने वातापि और इल्वल नाम के राक्षसों का दमन करके इस प्रदेश को तपस्या के योग्य बना दिया था।

अभी वे सोच ही रहे थे कि संध्याकाल हो आया।

सन्ध्योपासना करके राम ने आश्रम में प्रवेश किया। मुनि के भाई ने उनका यथोचित सत्कार किया और रात्रि-विश्राम के बाद वह स्वयं उन्हें प्राप्त: महर्षि अगस्त्य के आश्रम में ले गए। क्या शोभा थी आश्रम की! यहां के वन यज्ञ के धूम्र से व्याप्त थे, शान्त मृग-झुंड, नाना प्रकार के पक्षियों का कलरव, सुंदर सरोवर ... ऐसे मुनि के पुण्याश्रम में पधारकर वे अपने को धन्य अनुभव करने लगे। यहां न बैर था, न क्रूर कर्म और सब प्रकार के आतंक से मुक्त यह दिशा दक्षिणा कहलाई। यहीं महात्मा अगस्त्य अपनी अखण्ड तपस्या में लीन विद्यमान थे। मुनि के प्रभाव से यहां न कोई झूठ बोलने वाला था, न कोई पापाचारी। कितने ही सिद्ध महात्मा यहां तपस्या करके स्वर्ग को प्राप्त हुए हैं।

यहां आकर राम ने कहा, 'हे लक्ष्मण! तुम भीतर महामुनि को जाकर हमारे आगमन की सूचना दो।'

अगस्त्य जी ने जब यह सुना तो कहने लगे, 'क्या सौभाग्य की बात है कि आज चिरकाल के बाद स्वयं राम मुझसे मिलने आए हैं, स्वयं मेरी भी यह अभिलाषा थी कि एक बार वे मेरे आश्रम पर पधारते। जाओ प्रिय वत्स! उन्हें आदरपूर्वक आश्रम में ले आओ।'

राम सीता के साथ जैसे ही मुनि के आश्रम में पहुंचे, अपने शिष्यों के साथ घिरे हुए मुनि अग्निशाला से बाहर आए। राम ने आते हुए मुनि को देखकर श्रद्धापूर्वक उनके दोनों चरण पकड□ लिए।

यह भी क्या संयोग था, जो भक्तों को आनन्द प्रदान करने वाले हैं, वे श्रीराम महर्षि के चरणों को पकड□ प्रणाम की मुद्रा में उनसे आशीर्वाद मांग रहे थे।

गदगद भाव से अभिभूत होकर अगस्त्य मुनि ने राम को हृदय से लगा लिया फिर अर्ध्यपाद्य देते हुए उनका आतिथ्य किया। पहले अगस्त्य बैठे और फिर राम आसन पर विराजमान हुए।

अगस्त्य मुनि ने राम का पूजन करते हुए उन्हें विश्वकर्मा का बनाया हुआ स्वर्ण और हीरे जटित भगवान विष्णु का दिया हुआ वह धनुष दिखाया, जो सूर्य के समान देदीप्यमान था। उसके साथ इन्द्र के दिए दो तरकश थे जो कभी खाली नहीं होते थे और एक तलवार सोने की म्यान में सजी, सोने की मूठ वाली, ये सभी अस्त्र-शस्त्र महर्षि अगस्त्य ने राम को देते हुए कहा, 'आप

इन्हें ग्रहण कीजिए भगवन्! ये राक्षसों पर विजय पाने के लिए आपके काम आयेंगे।'

यहां राम ने एक रात्रि विश्राम किया। प्रात:काल मुनि ने कहा, 'यहां से दो योजन दूरी पर एक बहुत ही रमणीय स्थान पंचवटी है। आप वहां जाकर लक्ष्मण के साथ अपना आश्रम बनाएं।'

'आपने तपोवन में मेरे साथ रहने की और वनवास का शेष समय यहीं बिताने की जो अभिलाषा प्रकट की है और यहां से अन्यत्र रहने योग्य स्थान के विषय में मुझसे पूछा है, मैंने अपने तपोबल से यह जान लिया है कि आप ऋषियों की राक्षसों से रक्षा करने के लिए यहां पधारे हैं, इसलिए आपका उद्देश्य जानकर ही मैंने यह निवेदन किया है क्योंकि आपकी प्रतिज्ञा का निर्वाह अन्यत्र रहने से नहीं हो सकेगा।'

पंचवटी जाते समय राम को एक विशालकाय गिद्ध मिला। भूल से राम ने उसे इच्छाधारी राक्षस जानकर पूछा, 'आप कौन हैं?'

'बेटा! मुझे अपने पिता का मित्र समझो।'

पिता का मित्र जानकर राम ने कहा, 'हे महाभाग! कृपया हमें अपने परिचय से अवगत कराइए।'

'मेरा नाम जटायु है।' और इस प्रकार अपना पूरा परिचय देते हुए जटायु ने कहा, 'मैं श्येनी का पुत्र हूं। विनतानंदन गरुड□ के छोटे भाई अरुण मेरे पिता हैं, मेरा बड□ा भाई संपाति है। यह वन मृगों और राक्षसों से सेवित है यदि आप चाहें तो मैं आपके निवास पर आपका सहायक हो सकता हूं। लक्ष्मण सहित यदि आप अपनी पर्ण शाला से कहीं बाहर जाएं तो उस समय मैं देवी सीता की रक्षा करूंगा।'

यह सुनकर राम ने मानो बिना मांगे ही पिता समान अपना हितैषी पा लिया। और अब वे पंचवटी की ओर आगे बढ□ गए।

पंचवटी पहुंचकर समतल और सुंदर स्थान देखकर उन्होंने वहां एक सुंदर आश्रम का निर्माण किया। यहां फूले-फूले वृक्षों से घिरी गोदावरी नदी शोभायमान थी।

यह स्थान देखकर राम का मन रमने लगा और उन्होंने कहा, 'लक्ष्मण! हम यहीं अपना आश्रम बनायेंगे।'

राम का संकेत पाते ही लक्ष्मण ने कुछ ही समय में एक उत्तम निवास गृह बना दिया। आश्रम तैयार करके लक्ष्मण ने थकान मिटाने के उद्देश्य से गोदावरी नदी के तट पर स्नान किया और फिर कमल के फूल एवं फल लेकर वे वहीं लौट आए। शास्त्रीय विधि से यह उपहार सामग्री भेंट की और फिर श्रीराम को वह आश्रम दिखाया।

राम और सीता वह सुन्दर आश्रम देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। कुछ समय तक तो वे उसके भीतर ही खड□ रहे और फिर हर्ष से भरकर दोनों भुजाओं से लक्ष्मण को हृदय से लगा लिया।

अब राम वहां सीता और लक्ष्मण के साथ सुखपूर्वक वास करने लगे।

पता नहीं कहां से दुष्टा राक्षसी शूर्पणखा एक दिन घूमती हुई उधर आ निकली। रावण की यह

एक मात्र बहन इस दण्डक वन की अकेली स्वामिनी थी। यहां सदा ही तपस्वी गण रहा करते थे अत: उसने कभी इस ओर मुंह ही नहीं किया, किन्तु आज यहां अचानक सुन्दर पर्णकुटी में दो सुन्दर से राजकुमार सरीखे तपस्वियों को देखकर उसका मन इधर आने का हो गया।

राम को देखकर उस रूक्ष स्वभाव वाली नरभक्षिणी राक्षसी के मन में काम जाग उठा। राम का मुख सुन्दर मनोहारी था जबकि वह स्वयं बहुत कुरूप थी। राम की कमर का भाग बड□ा ही क्षीण था जबकि शूर्पणखा बेडौल लम्बे मोटे पेट वाली थी। राम की आंखें लुभावनी और मनोहर थीं जबकि शूर्पणखा के नेत्र डरावने, कुरूप और भद्दे थे। राम के केश चिकने और सुन्दर थे किन्तु उस निशाचरी के केश काले, भद्दे और ताम्बे जैसे कड□ थे। राम बड□ प्यारे रूपवान कुमार थे जबकि शूपर्णखा वीभत्स और विकराल थी।

दोनों ही रूप, रंग और सज्जा में एक दूसरे के बिलकुल विपरीत थे। राम मधुरभाषी थे जबकि शूर्पणखा कर्कशा थी। राम तो तरुण ही थे किंतु वह दुष्टा तो हजारों वर्ष की बुढि□या थी। वे उदार थे तो वह कुटिलता से भरी थी। राम सदाचारी थे और वह दुराचारिणा थी।

जब ऐसी जटिल स्वभाव वाली वह राक्षसी काम से दग्ध होकर राम के पास आयी तो राम और लक्ष्मण दोनों ही उसे देखकर आश्चर्यचकित रह गए। वे सोचने लगे, यह बला कहा से आ टपकी?

वह कुछ पूछते, इससे पूर्व ही उस राक्षसी ने कहा, तपस्वी के वेश में मस्तक पर जटा धारण किए साथ में यह स्त्री लिए हाथ में धनुष-बाण संभाले इस राक्षसों के प्रदेश में तुम कैसे चले आए? क्या तुम्हें मालूम नहीं है कि यहां हमारा राज्य चलता है। यहां किसी का बिना आज्ञा आना मना है।

राम ने उसके स्वभाव की उद्दण्डता पढ□ ली और यह जान लिया कि यह उच्छृंखल दुष्टा नारी है। यद्यपि अवध्य है लेकिन कुछ तो उपाय करना ही है। यह सोचते हुए विनम्र होकर राम ने कहा-

'देवी! हम अयोध्या के महाप्रतापी राजा दशरथ के पुत्र हैं। मेरा नाम राम है और ये मेरी पत्नी सीता है, साथ में भाई लक्ष्मण है। हम अपने पिता की आज्ञा से ही वनवास के लिए यहां आए हैं।'

'अब तुम अपना परिचय दो। तुम किसकी पुत्री हो? तुम्हारा नाम क्या है?' 'मेरा परिचय क्या, मैं तो तुम्हारे रूप पर आसक्त रावण की बहन, विश्रवा की पुत्री शूर्पणखा हूं। मैं इच्छानुरूप रूप धारण कर लेती हूं। यह वन मेरे भाई ने मेरे ही अधिकार में दे रखा है। समस्त प्राणियों के मन को भयभीत करती हुई यहां अकेली ही विचरण करती हूं।'

'और सुनो हे राम! बल में मैं अपने सभी भाइयों से बढ□कर हूं। तुम्हें देखकर ही मेरा मन तुम्हारे प्रति आसक्त हो गया। वैसे भी मैंने इससे पहले कभी ऐसे रूपवान युवक नहीं देखे इसीलिए तुम्हारी सुकुमारता ने मुझे आकर्षित किया। इसीलिए तुम्हें मैं अपना पति बनाने के लिए तुम जैसे पुरुषोत्तम के प्रति पति की भावना रखकर बड□ प्रेम से तुम्हारे पास आई।'

'देखो, मैं बल में अद्वितीय हूं, मुझमें अनुराग भी है, और अपनी इच्छाशक्ति से मैं किसी भी रूप में ढल जाती हूं। इसलिए अब तुम मेरे पति बन जाओ। तुम इस अबला सीता का क्या करोगे?'

'मेरी दृष्टि में तो यह सीता कुरूप, विकृत, धंसे हुए पेट वाली मानवी है, मैं इसे तुम्हारे भाई के साथ ही खा जाऊंगी।'

'इसके बाद तुम स्वतंत्र होकर सुखपूर्वक मेरे साथ वन में विहार करना।'

राम ने बड□ मनोयोग से इस राक्षसी का यह अनर्गल प्रलाप सुना और फिर बड□ संयत होकर बोले-

'देवी, मैं तो विवाहित हूं। मेरे भाई लक्ष्मण बड□ शीलवान, देखने में प्रिय और बड□ बली हैं। ये युवा तो हैं ही, यदि इन्हें भार्या की चाह है तो ये तुम्हारे साथ तुम्हारे मन की इच्छा पूर्ण कर सकेंगे और फिर इनसे विवाह करके तुम्हें सौत का भय भी नहीं रहेगा।' राम से यह प्रस्ताव पाकर बड□ी प्रसन्न शूर्पणखा तुरन्त लक्ष्मण की ओर आकृष्ट होकर उनके निकट आई और कहने लगी-'हे लक्ष्मण! तुम्हारे योग्य वास्तव में मैं ही हूं और भार्या बनने योग्य हूं। मुझे स्वीकार करके तुम इस दण्डकारण्य के अखंड स्वामी हो जाओगे।'

लक्ष्मण ने मुस्कुराते हुए शूर्पणखा के प्रस्ताव को फिर राम की तरफ मोड□ दिया और कहा, 'देवी। मैं तो उनका दास हूं। तुम मेरी स्त्री होकर दासी क्यों बनना चाहती हो? मेरे बड□ भाई सभी ऐश्वर्यों से सम्पन्न हैं। इनसे विवाह करके तुम्हारे सभी मनोरथ पूरे हो जाएंगे। तुम सदा प्रसन्न रहोगी। तुम्हारा रूप-रंग उन्हीं के योग्य है। अपनी कुरूप, ओछी, विकृत, धंसे पेट वाली भार्या को त्यागकर तुम्हें ही ये सादर ग्रहण करेंगे।'

अत: हे सुन्दर कटि प्रदेश वाली, वर चाहने वाली, ऐसा कौन बुद्धिमान मनुष्य होगा जो तुम्हारे इस श्रेष्ठ रूप को छोड□कर मानव कन्याओं से प्रेम करेगा।

अब वह दुष्टबुद्धि महिला फिर राम के निकट आई और कहने लगी, 'या तो मेरा पति होना स्वीकार करो वरना मैं तुम्हारी इस पत्नी को खा जाऊंगी फिर तो तुम स्वतंत्र रूप से मेरे हो जाओगे?'

उसे गले पड□ी जानकर राम से असह्य हो गया तो उन्होंने कहा, 'अरे लक्ष्मण? इस क्रूरकर्मा के अभिमान को खत्म करना होगा। तुम इस कुरूप को अंगहीन बना दो।' राम का आदेश पाकर लक्ष्मण ने शूर्पणखा के नाक-कान काट लिए।

नाक-कान कट जाने पर वह और चिढ□ गई और बिलखती हुई वहां से भाग खड□ी हुई। उस समय ऐसा लग रहा था मानो आकाश में बादल जोरों से गरज रहे हों। एक तो वह राक्षसी देखने में थी ही भयानक और कुरूप, इस पर लक्ष्मण ने उसके नाक-कान काट लिए तो लहूलुहान दशा में वह और अधिक विकराल हो गई।

खून की बहती तेज धारा देखकर वह दोनों हाथ ऊपर उठाकर चिंघाड□ती हुई विशाल वन के भीतर घुस गई।

शूर्पणखा के भाई खर ने जब यह सुना कि किसी तपस्वी ने उनकी बहन के नाक-कान काट लिए हैं तो यह बड□ा अपमान का विषय हो गया।

खर ने कहा, 'ऐसा कौन मूर्ख यहां आ गया जिसने विषैले सांप के मुंह में हाथ डाल दिया है। अवश्य ही उसकी मृत्यु उसे यहां खींच लाई है।'

अब तो शूर्पणखा खर की सेना सहित राम पर चढ□ाई करती हुई वहां आ गई। 'ये रहे भाई, ये रहे। ये ही हैं दोनों दुष्ट जिन्होंने मेरा शील भंग करने का प्रयास किया और मेरे विरोध करने पर मुझे अंगहीन बना दिया।'

राम ने पंचवटी के बाहर जैसे ही शोर सुना तो वे बाहर आए। देखा, राक्षसों का बड□ा भारी समूह उन्हें ललकार रहा है।

'लक्ष्मण, देखो तुम सीता के पास खड□ हो जाओ और उनकी सुरक्षा करो, मैं अभी इन राक्षसों को जीवन से मुक्ति दिलाता हूं।'

और यह कहते हुए राम ने अपने दिव्य धनुष की प्रत्यंचा चढ□ा दी। प्रत्यंचा की आवाज होते ही आकाश में गूंज हो गई, लगने लगा कि कहीं बहुत तेज बिजली की कड□कड□ाहट हुई है या घने बादल छा कर बरसना चाहते हैं।

राक्षस वीर ने क्रोधित होकर शूर्पणखा की ओर देखकर कहा, 'तो ये हैं वो बलशाली जिन्होंने तुम पर प्रहार किया। क्यों, तुम्हें अपना जीवन प्यारा नहीं है?'

'यह तो समय बताएगा।' राम ने कहा- 'अगर अपना भला चाहते हो तो लौट जाओ।'

यह सुनकर उन राक्षसों के साथी ने कहा, 'अरे मूर्ख। तूने हमारे स्वामी को क्रोध दिलाया है। अब तू मरने के लिए तैयार हो जा।' और यह कहते ही वे राक्षस राम पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ□ आए।

राम ने उनके इस दुस्साहस को देखते हुए अपने हाथ में चौदह नाराच उठा लिए और फिर धनुष कान तक खींचकर राक्षसों को लक्ष्य करके इस प्रकार छोड□ दिया मानो इंद्र ने वज्र का प्रहार किया हो और वह राक्षस अपनी छिदी हुई छातियां लिए बांबी से आए सर्पों की भांति तत्काल पृथ्वी पर धराशायी हो गए। उनके प्राण-पखेरू उड□ गए। शूर्पणखा यह दृश्य देखकर भौचक रह गई और फिर आर्तभाव से दौड□ती हुई खर के पास पहुंची।

'यह क्या, तुम अब भी रो रही हो, मेरे उन वीरों का क्या हुआ? क्या उन्होंने मेरी आज्ञा का पालन नहीं किया?'

'तुम्हारे भेजे सारे सैनिक और वीर उस तपस्वी के एक ही वार से जमीन सूंघ गए। यदि तुममें राम और लक्ष्मण को मारने की शक्ति नहीं है तो फिर तुम किस बात का अभिमान करते हो।'

बहन को इस प्रकार उनका अपमान करते देख खर का क्रोध उबाल खा गया और उसने कहा, 'अच्छा, चलो अब यह घबराहट और अपने आंसू रोको, मैं तुम्हारे साथ चलता हूं।'

अब खर, दूषण अपनी सेना के साथ बहन के अपमान का बदला लेने के लिए पंचवटी की

ओर कूच कर गए।

राम के आश्रम की ओर क्रोध में भरे हुए बढ□ता राक्षसों का यह समूह जब राम के पास पहुंचा तो राम के क्रोध की सीमा न रही।

'ये जो बड□-बड□ उत्पात हो रहे हैं, हे लक्ष्मण! उनकी ओर देखो। आकाश में धूल भरे बादल खिंच रहे हैं और देखो, ये जो वनचारी पक्षी बोल रहे हैं, ये राक्षसों के प्राण पर संकट की सूचना है। तुम सीता को साथ लेकर पर्वत की गुफा में चले जाओ जो वृक्षों से घिरी है।'

लक्षण को कुछ बोलता देख राम ने कहा, 'इस समय कहो कुछ मत, केवल मेरे आदेश का पालन करो।' और फिर राम उन दुष्ट राक्षसों की सेना के सामने अपने धनुष के साथ आ खड□ हुए।

अपने तरकश से बाण निकालते हुए राम ने खर की सेना का निरीक्षण किया और फिर धनुष को खींचकर क्रोध प्रकट करते हुए अपना लक्ष्य साध लिया।

खर ने देखा कि राम हाथ में धनुष लिए खड□ हैं तो वह अपने रथ को उनके सामने ले आया। खर ने सहस्रों बाणों द्वारा राम को पीडि□त करके बड□ जोर की गर्जना की। इसके साथ ही सभी राक्षस राम पर अनेक प्रकार से बाण चलाने लगे, ऐसा लग रहा था कि वे राम को मार डालना चाहते थे।

राम ने राक्षसों के छोड□ हुए सभी अस्त्रों को अपने बाणों द्वारा प्रभावहीन कर दिया, यद्यपि उनका शरीर काफी घायल हो गया था फिर भी वे तनिक भी विचलित नहीं हुए। राम अकेले थे और उनके सामने हजारों राक्षसों का समूह था।

राक्षसों के प्रभाव को बढ□ता देख राम ने अपने प्रखर बाणों को तेजी से छोड□ना आरम्भ कर दिया। उनके मण्डलाकर धनुष से जब बाण निकलने प्रारम्भ हुए तो राक्षसों का समूह मूली-गाजर की तरह कट-कटकर जमीन पर गिरने लगा।

यह देखकर कुछ बलशाली राक्षस कुपित होकर राम पर फरसों का प्रहार करने लगे। राम ने उनको अपने अस्त्रों से सर विहीन कर दिया। और इस प्रकार खर की सेना धराशायी हो गई। अब दूषण क्रोध में भरकर राम पर टूट पड□ा।

यह राक्षस अपनी शक्ति के अभिमान में थे और जानते थे कि जिस प्रकार ये अहिंसक तपस्वियों को दु:ख देकर जीत लेते थे, शायद राम को भी उसी प्रकार जीत लेंगे। ये राम की शक्ति का अनुमान ही नहीं लगा पा रहे थे।

अपनी सेना को बुरी तरह मारी जाती देखकर दूषण ने अपने पांच हजार राक्षसों को राम पर आक्रमण बोलने के लिए आगे बढ□ा दिया लेकिन राम के क्रोध के सामने वह सारी सेना गाजर-मूली की तरह कटकर गिर गई। स्वयं दूषण का विशाल धनुष कट गया, उसके घोड□ मर गए, सारथी का सिर धड□ से अलग हो गया। अब निरुपाय होकर दूषण ने चारों ओर से नुकीली लोहे की कीलें लगी हुई एक परिधि अस्त्र राम पर छोड□ दिया। राम ने दूषण की परिधि फेंकने वाली दोनों भुजाओं को काट दिया। कटी भुजाएं देखकर वह भयानक राक्षस

चीख-पुकार करता हुआ धरती पर गिर गया। अब तो राक्षसों की सेना में भगदड□ मच गई। खर का सेनापति त्रिशिर भी राम का वेग न सह सका और मारा गया। अब तो खर के सामने राम से युद्ध करने के अलावा कोई दूसरा उपाय ही नहीं बचा।

खर को सामने देखकर राम ने कहा, 'दुष्ट! मैं यहां इस वन में तुम जैसे पापी राक्षसों को ही दंड देने के लिए आया हूं, तुमने अब तक कितने ही निर्दोष, धर्मपरायण महाभाग मुनियों की हत्याएं की हैं।'

'अरे मूर्ख! जिनकी जड□ खोखली हो गई है, वे वृक्ष अधिक समय तक खड□ नहीं रह सकते। हे कुलाधम जिन ऋषियों का तूने वध किया है, वही आज स्वर्ग से तेरे मरण का हृदय-विदारक दृश्य देखेंगे। मैं आज तेरे इस मस्तक को ताड□ की तरह काटकर गिरा दूंगा। हे राक्षस! जितना तेरे में बल हो, उसका प्रयोग कर ले।'

'तुम बहुत देर से अपनी प्रशंसा कर रहे हो राम! अभी तुमने मेरा क्रोध नहीं देखा, लो मेरी गदा का वार संभालो।'

गदा को विदीर्ण करते हुए राम ने कहा, 'बस यही बल था, अब तो सिद्ध हो गया कि तू शक्तिहीन मेरे सामने खोखली डींग हांक रहा था, ले अब मेरा वार संभाल।' और राम ने देवराज इन्द्र का दिया दिव्य बाण चला दिया। यह ब्रह्म दंड के समान भयानक था। बाण के छाती में धंसते ही वह दुष्ट राक्षस खर अचेत होकर जमीन पर गिर पड□ा और उसके प्राण-पखेरू उड□ गए।

इधर खर ने अपने प्राण त्यागे, दूसरी ओर बहुत से राजर्षियों के साथ अगस्त्य मुनि ने वहां पधारकर राम से कहा, 'हे रघुनंदन! इसीलिए पाक शासन इन्द्र ने कार्यसिद्धि के लिए महर्षि शरभंग द्वारा आपको मेरे आश्रम पर पहुंचाया था, आपका पंचवटी में आगमन भी इन ही राक्षसों के पराभव के लिए हुआ था।'

'हे दशरथ नंदन आपने यहां पधारकर सत्य ही हमारा बड□ा उपकार किया है, अब यह दंडकारण्य प्रदेश महात्माओं और ऋषियों, तपस्वियों के लिए धर्मानुष्ठान का केन्द्र हो जाएगा।' इसी बीच लक्ष्मण भी सीता के साथ पर्वत-कंदरा से निकलकर प्रसन्नतापूर्वक आश्रम में आ गए।

महर्षियों को सुख देने वाले और क्षत्रियों पर मारक विजय पाने वाले पति का स्वागत करती हुई सीता को बड□ा हर्ष हुआ। उन्होंने आनन्द में निमग्न होकर अपने स्वामी का आलिंगन किया। राक्षस समूह मारा गया और राम को जो बाणों का घाव हुआ था, वह सीता के आलिंगन से स्वत: ही भर गए। यह देखकर सीता को परम संतोष हुआ।

प्रसन्नता से भरे हुए महात्मा राम की प्रशंसा कर रहे थे, जिन्होंने अपनी वीरता से इस प्रदेश के समूचे राक्षस समूह को मार भगाया था। उधर सीता अपने प्राणवल्लभ राम का बार-बार आलिंगन करके हर्षातिरेक में परम सुख का अनुभव कर रही थीं।

आज उन्हें अपने पति पर गर्व हो रहा था, वह राम को देखते हुए अनुभव कर रही थीं, वास्तव में वह एक चक्रवर्ती सम्राट की पत्नी हैं। अखिल विश्व में शायद ही कोई राम पर विजय पा सके! और क्यों न हो, जब स्वयं देवराज इन्द्र, महादेव शंकर और ब्रह्मा उनके शुभचिंतक हों।

महर्षि विश्वामित्र ने जो युद्ध-विद्या का ज्ञान राम को कराया, आज राम को भी यह लग रहा था कि वास्तव में वन का आगमन उनके लिए वरदान सिद्ध हुआ।

महर्षि उन्हें आशीर्वाद देकर विदा हो गए और राम, लक्ष्मण और सीता के साथ अपनी कुटिया के भीतरी प्रकोष्ठ में आ गए।

आज कितना बड□ा युद्ध जीता है हमने, जितने लोग मारे गए हैं, उनसे कहीं अधिक लोग स्वतंत्र अनुभव कर रहे होंगे। इन राक्षसों ने सबका जीवन दूभर कर रखा था। अब कम-से-कम कोई सरलता से यहां पर उत्पात नहीं मचायेगा।

और लक्ष्मण को इंगित करते हुए राम ने कहा, 'क्यों भाई! अब तो तुम्हें माता कैकेयी पर क्रोध नहीं है न। क्या अयोध्या में रहकर प्रजा को सुख देने का यह अनोखा अनुभव तुम कर सकते थे!'

'देखो सौम्य! मैं आज भी यही स्वीकार करता हूं कि चाहे दैवी प्रभाव से अथवा किसी निजी भाव से, निर्णय का कारण कोई भी हो लेकिन जो निर्णय लिया गया, वह आज अपनी सार्थकता सिद्ध कर रहा है।'

सीता को लग रहा था, उसके लिए पंचवटी मात्र एक कुटिया नहीं है बल्कि एक सम्पूर्ण राज्य की राजधानी है, जिसके सम्राट उसके पति और स्वयं महारानी और देवर सचिव हैं। आज इस पंचवटी में वह राजभवन का-सा सुख अनुभव कर रही थीं।

रावण का छल और सीता-हरण

खर की मृत्यु का समाचार राक्षसों के समाज में बड□ा तेजी से फैल गया और इस जनस्थान से अकंपन, जो स्वयं बड□ा ही बलशाली राक्षस था, अपने-आपको निरुपाय जानकर यहां से भाग खड□ा हुआ। अब उसके सामने एक मात्र रास्ता था। वह दण्डकारण्य से सीधा लंकापुरी पहुंच गया। इस समय उसके मन में केवल एक ही भाव था कि वह किसी प्रकार महाबली रावण को यह समाचार दे।

रावण के दरबार में पहुंचकर अकंपन ने बताया-

'महाराज! जनस्थान में जो बहुत से राक्षस रहते थे, वे सभी मारे गए, खर भी मारा गया है, मैं किसी प्रकार जान बचाकर यहां आया हूं।'

रावण के क्रोध की सीमा न रही, उसकी आंखें लाल हो गयीं, मानो वह अपने तेज से सबको भस्म कर डालेगा।

अकंपन के मुंह से अपनी सेना का इतना बड□ा विनाश सुनकर लगभग चिल्लाते हुए रावण ने कहा, 'किसकी मौत आ गई, जिसने मेरे भयंकर जनस्थान का नाश किया है, कौन है वह दुस्साहसी?'

'हे महाराज! कहते हैं अयोध्या के राजा दशरथ के दो बालक अपनी पत्नी के साथ पंचवटी में रहते हैं, बड□ा भाई राम, उसकी पत्नी सीता और छोटा भाई लक्षण। महाराज! ये बड□ यशस्वी और तेजस्वी दिखाई देते हैं, देखने में तो पतले-दुबले से हैं, लेकिन जिस प्रकार इन्होंने खर और दूषण का वध किया है, त्रिशिर सहित पूरी सेना को स्वर्गलोक पहुंचा दिया है, निश्चित ही ये चमत्कारी बालक हैं।'

'तो क्या राम सम्पूर्ण देवताओं और देवराज इंद्र के साथ जनस्थान में आए हैं?' 'नहीं महाराज! वे तो अकेले रहते हैं, उनके साथ तो केवल उनके छोटे भाई हैं और पत्नी सीता है।'

'अच्छा, तो फिर मैं अभी चलता हूं और दोनों को मारकर उन्हें यह बताता हूं कि राक्षसों पर विजय पाना नानी जी का खेल नहीं है।'

'कुपित न हों महाराज। राम को पराक्रम से कोई काबू नहीं कर सकता। वे समुद्र में डूबती हुई पृथ्वी को ऊपर उठा सकते हैं, वे अपने बाणों से नदी के वेग को रोक सकते हैं। पराक्रम से सम्पूर्ण लोगों का संहार करके प्रजा की नयी सृष्टि कर सकते हैं। मैं तो यह समझता हूं कि सभी देवता और असुर मिलकर भी चाहें तो उनका वध नहीं कर सकते। लेकिन हे महाराज! मुझे एक दूसरा उपाय सूझता है,' अकंपन ने कहा।

'बोलो, क्या उपाय है? हमें तो अपनी बहन के अपमान के साथ जनस्थान में मारे गए अपने वीर सैनिकों के वध का बदला भी लेना है।'

'वही तो कह रहा हूं।'

'तो शीघ्र कहो न पहेली क्यों बुझा रहे हो?'

'महाराज! राम की पत्नी सीता अद्वितीय सुन्दरी है, उसने अभी यौवन में पदार्पण ही किया है। उसका हर अंग, प्रत्यंग बड□ा सुडौल, चिकना और कामलिप्सा के लिए परिपूर्ण है। सच, सीता तो सम्पूर्ण स्त्रियों में एक रत्न है, रत्न।'

'उसकी सुन्दरता की समानता इन्द्र की सभा की अप्सराएं भी क्या करेंगी! मनुष्य जाति की स्त्रियां तो फिर उनका मुकाबला क्या करेंगी?'

आप तो किसी प्रकार से राम को भुलावे में डालकर उसकी उस प्रिया पत्नी का अपहरण कर लें। बस, सीता आपके कब्जे में आ गई तो समझिए अपमान का बदला ले लिया। राम उसके बिना जीवित नहीं रह पाएगा। वह यहां सात समुद्र पार लंका तक पहुंच ही नहीं पाएगा।'

रावण को अकंपन का यह तर्क समझ में आ गया।

'अच्छा ठीक है, कल प्रात: अपने पुष्पक विमान पर सवार होकर मैं अकेला ही उधर निकलूंगा।'

अब तो रावण के मन में कुटिलता का वास हो गया। एक ओर तो प्रतिशोध सता रहा था दूसरी ओर सीता की तरुणाई उसके मन में काम-भाव को उद्दीप्त कर रही थी। प्रात: होते ही राक्षसराज अपने गन्तव्य की ओर बढ□ गया। मार्ग में रावण अपने मामा मारीच के पास कुछ देर के लिए रुका।

रावण को अपने यहां इस प्रकार बिना पूर्व सूचना के आया देख मारीच पहले तो घबरा गया फिर भक्ष्य भोज्य प्रस्तुत करते हुए उसने रावण का पूर्ण स्वागत किया और कहा, 'कहो, आज्ञा करो राजन। मेरे लिए क्या आदेश है? कुशल तो है?'

'मामा! तुम तो यहां छिपे रहते हो, कुछ ज्ञात भी है, संसार में क्या हो रहा है? खर-दूषण मारे गए। जनस्थान राक्षसों से खाली हो गया है। हमारे चौदह हजार राक्षस वीर मारे जा चुके हैं और इन्हें मारा है, अयोध्या के दो राजकुमारों ने। हमारे जैसे विपुल बल के धनी राजाओं के सामने इन छोकरों की यह मजाल! मुझे उनसे अपने अपमान का बदला लेना है। मालूम है? उन्होंने शूर्पणखा के नाक-कान काट डाले हैं और खर-दूषण को भी मार दिया है। अकंपन कह रहा था कि ये राम बड□ पराक्रमी हैं और दिव्य गुणों से सम्पन्न हैं। यदि इनसे सीधे भिड□ा जाए तो इनसे जीतना संभव नहीं है। इसीलिए मैंने सोचा है कि इन्हें अपनी माया से छल कर ही बदला लिया जा सकता है। देखो मामा! मैं बदला लेने के लिए उसकी स्त्री का अपहरण करना चाहता हूं।'

'क्या नाम बताया तुमने उन छोकरों का? और कहां के रहने वाले हैं वे?' मारीच ने अपनी याद को कुरेदते हुए रावण से पूछा।

'अभी मैंने तुम्हें उनका नाम बताया कहां है? वे दोनों बालक राजा दशरथ के पुत्र राम और लक्ष्मण हैं।'

राम का नाम सुनते ही मारीच को मानो सांप सूंघ गया।

उसने मन का डर छिपाते हुए कहा, 'मुझे लगता है, हे लंकापति! अकंपन की बुद्धि भ्रष्ट हो

गई है, जो उसने तुम्हें सीता को हर लेने की सलाह दी है। उसने तो तुम्हारे साथ शत्रुता का व्यवहार किया है। वह तो तुम्हारे कुल का नाश करने के लिए तुम्हें कुमार्गी बना रहा है। हे अजेय सम्राट! राम वह गंधयुक्त गजराज हैं, जिनकी गंध सूंघकर ही हाथी-रूपी योद्धा दुम दबाकर भाग जाते हैं। उनका प्रताप मद के समान है, युद्ध में तो उनकी ओर देखना भी कठिन है, लड□ना तो बहुत दूर की बात है। मैं तो कहता हूं कि जितना अनिष्ट हो गया है, उसे अपना दुर्भाग्य मानकर चुप बैठ जाओ। राम से बैर बांधने का अभिप्राय है मृत्यु को निमंत्रण देना। तुम उन्हें छेड□ कर सोए हुए शेर को मत जगाओ। वह पाताल तक फैला महासागर है और धनुष उसमें रहने वाला ग्राह, बाण उसमें उफान खाती लहरें हैं, जिसकी चपेट में आकर कोई नहीं बच पाया है।'

रावण सोचने लगा, राम के पास ऐसा कौन-सा अस्त्र है, जिससे सारे राक्षस मारे गए।

एक क्षण के लिए रावण के मन में यह विचार आया कि मारीच ठीक कह रहा है, क्यों सोए हुए शेर को जगाया जाए लेकिन तभी उसे शूर्पणखा का रक्तरंजित चेहरा ध्यान आ गया और उसने हुंकारते हुए मारीच से कहा, 'तुम बूढ□ हो गए हो और सठिया गाए हो मामा! मैं तुम्हारी सहायता लेने आया था और तुम मुझे धर्म का उपदेश देने लगे। वह कितना भी बलशाली हो, मैंने भी अपने शीशों को काट-काटकर भगवान महादेव की पूजा करके नाभि में अमृत-कुंड प्राप्त किया है, तो मैं भी अजेय हूं, मुझे न देवता मार सकते हैं, न गन्धर्व, न यक्ष मार सकते हैं, न दैत्य, तो फिर मनुष्य की तो बिसात ही क्या।'

'शायद तुमने शूर्पणखा का नाक-कान कटा चेहरा नहीं देखा, नहीं तो तुम्हारा भी रक्त खौल जाता।'

मारीच सोच रहा था मैंने सब कुछ देखा है भांजे। बरसों पहले राम के एक ही बाण से मैं सौ योजन दूर समुद्र पार फेंक दिया गया था, तब से अब तक मेरी कमर का दर्द बार-बार मुझे राम के पौरुष की याद दिलाता है। सुबाहु और मेरी मां इन्हीं राम के हाथों से मारे गए थे।

लेकिन मारीच रावण के सामने यह बात छुपा गया। उसका साहस ही नहीं हुआ कि वह राम के बल का प्रदर्शन रावण के बल के सामने कर सके।

और इसके ठीक विपरीत रावण राम से तिरस्कृत होने के कारण प्रतिशोध की आग में जल रहा था।

वह भरी सभा में शूर्पणखा के उन हृदय बेधी शब्द-बलों को याद कर रहा था जब उसने कहा था कि मैं स्वेच्छाचारी और निरंकुश होकर भोग में लिप्त हो गया हूं। वह मुझे लोभी, मलेच्छ और आसक्त कहती हुई कायर तक कह गई। यदि मैं राम से उसके अपमान का बदला न लूं तो...।

उसने कहा था, मैं गंवार मंत्रियों से घिरा हुआ अपने बल के अभिमान पर तुला बैठा हूं और राम ने मेरी सेना को गाजर-मूली की तरह काटकर फेंक दिया। लोभ और प्रमाद के मोह में मैं अपने ही राज्य में उत्पन्न भय से अनभिज्ञ हूं।

शूर्पणखा द्वारा कहे गए अपने दोषों पर बुद्धिपूर्वक विचार करके ही रावण ने अंकपन से परामर्श करके राम की पत्नी सीता को चुराने की योजना बनाई थी, लेकिन यह मारीच तो बड□ा कायर निकला, यानि सीधी उंगली से घी नहीं निकलेगा।

सीता की सौन्दर्य-प्रशंसा शूर्पणखा ने भी की थी, इसलिए भी उसके मन में सीता के हरण का विचार प्रबल हो गया था।

अब रावण ने कहा, 'हे मामा। मेरी बात ध्यान से सुनो और जिस दु:ख-अवस्था में मैं भीतर-ही-भीतर जल रहा हूं, अपना व्याख्यान बंद करके मेरी सहायता करो। तुम इच्छा रूप धारण कर सकते हो और वह जनस्थान भी अच्छी तरह से जानते हो जहां राम ने पंचवटी बनाई है। चंपा सरोवर तो तुम कई बार गए हो।'

'देखो तुम्हें सिर्फ इतना करना है कि एक सुंदर स्वर्ण मृग बनकर पंचवटी में ऐसे स्थान पर विचरण करो, जहां से सीता तुम्हें सरलता से देख सके। सौन्दर्य की धनी सीता तुम्हें देखकर अवश्य ही राम से तुम्हारे मृगचर्म लाने के लिए कहेगी और राम सीता का विरोध करते हुए पहले मना करेंगे और फिर तुम्हें मारने के ख्याल से लक्ष्मण को सीता के पास छोड□कर उस मृग के पीछे दौड□ जायेंगे।'

'तुम्हें करना सिर्फ यह है कि तुम अपने भुलावे में राम को उस पंचवटी के आश्रम से कई योजन दूर ले जाओगे। तुम उत्तर दिशा की ओर जाओगे, वहां राम के बाण से आहत होकर तुम लक्ष्मण का नाम लेकर पुकारोगे।'

'निश्चय ही सीता लक्ष्मण शब्द सुनकर यह अनुमान लगा लेगी कि राम पर भयानक विपत्ति आ गयी है और वह लक्ष्मण को बलात् राम की खोज में कुटी से भेज देगी। सीता जब कुछ समय के लिए अकेली रह जाएगी, उसका हरण करने के लिए मेरे पास तब काफी समय होगा, बाकी सारी बातें मैं स्वयं देख लूंगा, तुम केवल स्वर्ण मृग बनकर वहां जाने की तैयारी करो।'

रावण के मुख से यह सुनकर मारीच ने सोच लिया, अब मृत्यु अवश्यंभावी है क्योंकि यदि अस्वीकार किया तो रावण के क्रोध का भागी बनना होगा और यदि स्वीकार किया तो राम के बाण का प्रभाव झेलते हुए यह शरीर त्यागना होगा। तो फिर जब मरना ही है तो परम प्रतापी राम के हाथों ही क्यों न मृत्यु को प्राप्त किया जाए।

यह निश्चय करके मारीच ने कहा, 'हे राक्षसराज! मैं जानता हूं कि यह व्यर्थ का उद्योग करके इस भयानक संकट में पड□ रहे हो क्योंकि जब भी युद्ध में राम की दृष्टि तुम पर पड□गी, तो वह दिन तुम्हारा अंतिम दिन होगा। तुम नहीं मानोगे, तुमने कभी विभीषण की सलाह पर भी कोई कार्य नहीं किया, तुम्हें अब जीवन सुख का भी कोई प्रलोभन नहीं रहा। लगता है अब तुम्हारी आयु पूरी हो रही है। मैं जानता हूं कि तुम्हारा राम से टकराना शेष राक्षस कुल के लिए विनाश का काला बनेगा।'

'शायद तुम्हें यह नहीं मालूम लेकिन तुम्हारे ज्ञान के लिए यह बात और कह दूं कि मैं एक बार राम के पराक्रम का सामना पहले भी कर चुका हूं अब तुम्हारे आदेश पर मैं यह भी करने के

लिए तैयार हूं।'

अब मारीच उछलता-कूदता अपनी भूमिका में आ गया और सीधा जनस्थान पहुंच गया, जहां वह एक स्वर्ण मृग के रूप में विचरण करने लगा।

सीता ने वह मायावी मृग देखा तो वह आश्चर्यचकित रह गयी और राम से बोलीं, 'आर्य आप मेरे लिए यह स्वर्ण मृग लेकर आइए। इसकी मृग-छाला हमारे आश्रम के लिए बड□ा अच्छी लगेगी।'

राम ने वह मृग देखा लेकिन जब लक्ष्मण ने उसे देखा तो उन्हें मन में संदेह हो गया और लक्ष्मण ने राम से कहा-

'भैया, मैं तो समझता हूं कि इस मृग के रूप में वह मारीच नाम का राक्षस ही आया है। अपनी इच्छा से रूप धारण करने वाले इस पापी ने कपट वेश बनाकर कितने ही राजाओं का वध किया है। यह अनेक प्रकार की माया जानता है। मृग के रूप में यह वही मायावी है।'

लेकिन सीता के मन पर मृग की सुंदरता का जो प्रभाव जम गया था, लक्ष्मण के संदेह का उन पर कोई असर नहीं हुआ। वे उसे वास्तविक मृग जानकर ही उसके मृगचर्म की प्रशंसा करती रहीं।

'देखो लक्ष्मण, राम ने कहा, 'सीता के मन में मृग को पाने के लिए कितनी लालसा है, वास्तव में यह है भी बहुत सुंदर। आज यह मेरे हाथ से मारा जाएगा। देवराज इन्द्र के नंदन वन में भी ऐसा मृग नहीं होगा, इसका मुख इन्द्र नीलमणि के समान, उदर शंख के समान सफेद है और फिर राजा लोग तो शिकार खेलने का शौक रखते ही हैं। इस रत्न स्वरूप श्रेष्ठ मृग के बहुमूल्य सुनहरे चर्म पर वैदेही राजनंदिनी सीता मेरे साथ विराजमान होंगी।'

'यह दिव्य मृग है। हे लक्ष्मण! यदि तुम्हारा संदेह सही भी है तो भी मुझे इसका वध तो करना ही है क्योंकि इस कुकर्मा मारीच ने वन में विचरण करते हुए अनेक ऋषि-मुनियों की हत्या की है, मैं इसे अवश्य ही मारूंगा।'

'और देखो, इस मृग का चर्म लेने के लिए विदेहनंदिनी सीता मन में कैसी उत्कंठा लिए हैं, इसलिए मैं उसे लेने जा रहा हूं। तुम आश्रम में सीता के साथ सावधान रहना। तुम्हारे साथ जटायु इसकी रक्षा में सहायता करेंगे।'

अपनी लोहे की तलवार और धनुष लेकर राम उस मृग के पीछे चल दिए।

राम को आते देख कुलाचें भरता हुआ वह मृग डर गया और एक झाड□ी में छिप गया। राम उसे ढूंढ□ते रहे।

कभी वह उनके सामने पड□ जाता था और कभी छिप जाता था। वह तो दुष्ट मायावी था इसलिए अपनी योजना के अनुसार वह राम को पंचवटी की कुटिया से बहुत दूर ले गया।

वास्तव में मृग ने अब राम को बहुत थका दिया था, इसलिए वे एक वृक्ष की छाया का आश्रय लेकर खड□ हो गए।

मृग रूपधारी मारीच ने वो चक्कर लगाए कि अब तो राम को भी यह विश्वास हो गया कि यह तो मायावी मारीच ही है। फिर भी उसे मारना तो है ही, यह देखकर राम ने उसे मारने का निश्चय कर लिया और क्रोध में भरकर अपने तरकश से सूर्य की किरणों के समान एक तेजस्वी बाण निकालकर धनुष पर चढ□ाया और उस मृग को लक्ष्य करके जैसे ही छोड□ा, सांप की तरह फुफकारता हुआ वह बाण मृग-रूपधारी मारीच को छेदता हुआ उसके हृदय को बेध गया।

मारीच उछला, छटपटा कर तड□पा और भूमि पर गिर गया।

मारीच ने मरते समय अपने उस कृत्रिम शरीर को त्याग दिया और तब अपनी योजना के अनुसार रावण का खयाल करके उसने लक्ष्मण को पुकारना प्रारम्भ किया।

दूर से हाय सीते, हाय लक्ष्मण की आवाज सुनकर सीता को लगा कि राम किसी विपत्ति में फंस गए हैं।

उधर राम ने जब भयंकर दिखाई देने वाले उस राक्षस को भूमि पर लोट-पोट होते देखा तो उन्हें लक्ष्मण की बात याद आ गई और मन-ही-मन वे अब सीता की चिंता करने लगे। राम को आभास हो रहा था कि यह मारीच मरते-मरते भी सीता और लक्ष्मण को आवाज क्यों दे रहा था।

यदि आवाज सीता ने सुन ली तो वह तो व्याकुल हो जाएगी और अगर उसने मेरी रक्षा के लिए लक्ष्मण को भेज दिया, तब तो निश्चय ही अनर्थ हो जाएगा। वह अकेली वन में कैसे रहेगी, क्या करेगी? ऐसा सोचकर राम के रोंगटे खड□ हो गए और मन में तीव्र विषाद छा गया।

अब तो राम तपस्वियों के उपभोग में आने वाले कंदमूल आदि लेकर तत्काल ही अपने पंचवटी स्थित आश्रम की ओर बड□ी उतावली के साथ भाग चले।

इधर राम व्याकुल हुए सीता के पास शीघ्र पहुंच जाना चाहते थे। उधर सीता लक्षण को रघुनाथ की सेवा में भेजना चाहती थीं।

'देखो लक्ष्मण! बड□ आर्त स्वर में तुम्हारे भाई ने तुम्हें पुकारा है, अवश्य वे किसी संकट में फंस गए हैं।'

'संकट में वे नहीं फंस गए भाभी! आज तो आपकी बुद्धि पर माया का प्रभाव हो गया है। उस मायावी मारीच के कृत्रिम मृग रूप को देखकर भी आपका मोह कम नहीं हुआ और आपने श्रीराम को उसकी मृग छाला लेने के लिए भेज दिया। और यह शब्द जो मुझे पुकार के और आपको पुकार के सुनाई दिया यह भी उस मायावी का जाल ही है। आप मेरी बात का विश्वास कीजिए। राम सुरक्षित हैं, उन्हें त्रिकाल में भी कभी कोई संकट नहीं आएगा यह मैं जानता हूं। आप अपने मन को शान्त कीजिए।'

'हे लक्ष्मण, मैं नहीं जानती थी कि तुम्हारे मन में खोट पैदा हो जाएगा। मैं समझ गई हूं कि तुम मुझ पर अधिकार करने के लिए इस समय राम का विनाश चाहते हो। मेरे लिए तुम्हारे मन में जो लोभ आ गया है, इसी के वशीभूत तुम राम की सहायता के लिए नहीं जा रहे और निश्चित खड□ हो।'

'यह आपकी बुद्धि को आज क्या हो गया है भाभी! मुझे आपके दु:ख के प्रति हंसी आ रही है।

आप जैसी दृढ□ और धीरवान महिला इतनी-सी बात नहीं समझ पा रही कि दूसरे की मन की बात को पहचानने वाले राम क्या कभी संकट में आ सकते हैं? नाग, असुर, गन्धर्व, देवता, दानव, राक्षस आदि सब मिलकर भी चाहें तो राम को परास्त नहीं कर सकते। राम युद्ध में अवध्य हैं भाभी! और फिर इस वन में राम की अनुपस्थिति में मैं आपको अकेली नहीं छोड□ सकता। मैं आपको कैसे समझाऊं।'

'नहीं, तुम मुझे मत समझाओ। यदि तुम्हारे मन में अपने भाई के प्रति लेशमात्र भी स्नेह-भावना है तो इस समय उनकी सहायता के लिए चले जाओ। वरना मैं समझूंगी कि तुम्हारे मन में भाई के प्रति कोई भाव नहीं है।'

'और यदि तुम्हारे मन में कोई खोट है, कोई पापपूर्ण विचार है तो यह ध्यान कर लो, तुम्हारा मनोरथ कभी सिद्ध नहीं होगा। मैं यहीं प्राण त्याग दूंगी पर श्रीराम के बिना इस भूतल पर एक क्षण भी नहीं जी सकूंगी।'

बड□ जोर की सांस लेते हुए लक्ष्मण ने कहा, 'विनाश काले विपरीत बुद्धि' और फिर लक्ष्मण ने कहा, 'मेरे दोनों कानों में तपते हुए लोहे के समान चोट पहुंचाने वाले आपके शब्द मैं नहीं सह सकता, इसलिए दिशाओं को साक्षी करके कहता हूं आज आपकी बुद्धि मारी गई है, जो आपने मेरे लिए ऐसी कठोर बातें कहीं हैं। आपको धिक्कार है जो आप मुझ जैसे भाई पर संदेह करती हैं।'

लक्ष्मण ने दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा, 'ऐ वन के सम्पूर्ण देवताओं। मेरी अनुपस्थिति में अब आप ही इस जड□-बुद्धि महिला की रक्षा करना, मेरे मन में यहां से जाने के बाद से अपशकुन प्रकट हो रहे हैं। मैं संशय में हूं कि क्या मैं राम के साथ लौटकर फिर से अपनी देवी जैसी सीता भाभी को पा सकूंगा?'

और यह कहते हुए लक्ष्मण ने झुककर सीता को प्रणाम किया और उसी दिशा की ओर कूच कर गए जिधर राम गए थे।

रावण को इसी समय की प्रतीक्षा थी। संन्यासी का वेश धारण करके, गेरुए रंग का वस्त्र लपेटे, बाएं कंधे पर डंडा रखे और उसमें कमंडल लटकाए रावण सीता के पास आया। सीता तो अपने पति के शोक में चिंताग्रस्त थीं। रावण के आते ही, उसे लगा मानो शनिश्चर ग्रह उत्तरा के सामने जा पहुंचा हो।

'तुम अप्सरा हो या कामदेव की पत्नी रति हो।' ऐसा कहते हुए वह रावण सीता के शरीर के सौन्दर्य का विश्लेषण करता हुआ उसे लुभाने का प्रयास करने लगा।

वेशभूषा से महात्मा बनकर आए रावण को देखकर सीता ने उसका अतिथि सत्कार किया। उसे बैठने के लिए आसन दिया और भोजन के लिए आमंत्रित किया और फिर वह राम और लक्ष्मण की प्रतीक्षा करने लगी।

उसे चारों ओर वन-ही-वन दिखाई पड□ रहा था, अभी तक दोनों में से कोई भी नहीं लौटा था।

सीता को हरने की इच्छा से रावण ने जब उसका परिचय पूछा तो उसने 'यह बताया कि राम

उसके पति हैं, लक्ष्मण देवर और मंझली मां कैकेयी के वरदान स्वरूप राम को चौदह वर्ष का वनवास काल मिला है, जिसमें तेरह वर्ष तो व्यतीत हो चुके हैं, अब यह अंतिम वर्ष है। इसके बाद हम सभी अयोध्या लौट जायेंगे। लेकिन हे महात्मन्! आप दण्डकारण्य में किस कारण विचर रहे हैं?'

तब रावण ने अपना परिचय देते हुए कहा, 'मैं लंका का राजा रावण अब तक जितनी भी स्त्रियों का हरण करके लाया हूं उन सबमें तुम सर्वोपरि सुंदर हो, तुम मेरी पटरानी बनी तो तुम्हारा भला होगा।'

इस संन्यासी के आने से पूर्व ही यकायक सीता की दाई आंख फड□कने लगी थी, जरूर यह कोई अनिष्ट करके मानेगी। एक अनिष्ट तो तभी हो गया, 'जब उसने मायावी राक्षस के मायाजाल में फंसकर राम को उसकी मृग छाला लेने के लिए भेज दिया। दूसरा अनिष्ट उसने लक्ष्मण को बुरा-भला कहकर देवता समान देवर को लांछित करके राम की सहायता के लिए भेजा और तीसरा अनिष्ट तो उसके सामने खड□ा था-वह दुष्ट राक्षस।' सीता ने स्वयं को संकट में जानकर उससे कहा, 'हे नीच! तू मेरा अपहरण करना चाहता है, तुझे अपनी मृत्यु का बिलकुल भी भय नहीं, क्या तू अपने गले में पत्थर बांध समुद्र पार कर लेगा? याद रख, तू मेरा अपहरण करके भी मुझे पचा नहीं सकेगा।' 'अरी मूर्ख स्त्री! जिसके पिता ने उसे राज्य भ्रष्ट कर दिया हो और वह वनवास काल भुगत रहा हो, ऐसे राम का तू क्या करेगी? यह राक्षसों का स्वामी तेरे द्वार पर आया है, तेरे रूप का पुजारी, तू इसको इस प्रकार न ठुकरा। राम मेरी एक उंगली के बराबर भी नहीं है।' और फिर जब सीता ने उसे आंख तरेर कर ललकारते हुए अपमानित किया और भाग जाने के लिए कहा तो रावण का क्रोध उभर आया और उसने बाएं हाथ से सीता के केशों को पकड□ा और दाहिने हाथ से दोनों जांघों के नीचे से उसे उठा लिया और अपने रथ पर सवार होकर वह सीता को लेकर चल दिया।

आकाश मार्ग में बिलखती सीता, 'तेरा सत्यानाश हो, तेरी भुजाएं कटकर गिर जाएं, तू घोर नर्क भुगते,' जैसे शब्दों से उसे कोसती हुई बंदीगृह में पड□ी मैना की तरह तड□पती हुई अवश और लाचार हो गई।

तभी उसे एक वृक्ष पर बैठा हुआ जटायु दिखाई पड□ा। जटायु ने जब सीता की पुकार सुनी तो उसने अपना भरसक प्रयत्न किया, लेकिन एक पक्षी और एक राक्षस दोनों का कोई मुकाबला नहीं था। रावण ने क्रोध में भरकर उसकी चोंच से घायल होने पर भी अपनी तलवार से उसके पर काट दिए। परहीन जटायु जमीन पर आकर गिर गया और रावण सीता को लेकर लंकापुरी की ओर बढ□ गया।

सीता ने रोते-बिलखते हुए कपड□ की एक पोटली में अपने आभूषण आकाश मार्ग से नीचे धरती पर गिरा दिए। उसे विश्वास था कि यदि राम इधर से गुजरे और उन्हें ये आभूषण मिल तो निश्चय ही वे यह जान लेंगे कि यह दुष्ट रावण उन्हें किस मार्ग से ले गया है।

सीता जब लंकापुरी में पहुंचीं तो ब्रह्मा ने देवराज इन्द्र को कहा, 'देखो देवराज, यह दुष्ट रावण देवी सीता को अपहरण करके यहां ले आया है। पति-वियोग में यह देवी अन्न-जल कुछ भी ग्रहण

नहीं करेंगी और अपने प्राण त्याग देगीं, इसलिए तुम शीघ्र ही उन्हें अमर हविर्ष खिलाकर आओ, जिससे वे हजारों वर्ष तक भूख और प्यास से मुक्त रह सकें। इन्द्र ने ऐसा ही किया।'

मारीच को मारकर जब राम लौट रहे थे तो सारे शकुन उनके सम्मुख उलटे हो रहे थे। सबसे पहले वे दिशा भूल गए। उनके आसपास ही सियारिन की आवाज आई। उन्हें लगा कि देवी सीता कुशल से तो हैं? क्योंकि संकट सिर्फ यह था कि यदि मारीच का स्वर उन्होंने सुन लिया है तो वे निश्चय ही लक्ष्मण को मेरी सहायता के लिए भेजेंगी और उस समय उन्हें अकेला जानकर राक्षस अवश्य ही उनका वध कर देंगे।

सियारिन की आवाज सुनकर राम जैसे-तैसे मन को अपने वश में करते हुए आश्रम की ओर जल्दी-जल्दी लौटने लगे।

उनका मन तो वैसे ही दु:खी हो रहा था कि तभी उन्हें मार्ग में लक्ष्मण आते दिखाई दिए। लक्ष्मण को देखते ही राम का चेहरा फक पड□ गया। अब निश्चय ही वे लौटने पर सीता को नहीं पायेंगे।

'तुम सीता को अकेली छोड□ आए, तुमसे मैं कहकर आया था और तुमने मेरी अवज्ञा की। क्या तुम इसी सहायता के लिए मेरे साथ घूमने आए थे कि मैं तुम पर विश्वास करूं और तुम मेरी अवज्ञा करो। हे लक्ष्मण! यह तुमने क्या किया?'

लक्ष्मण का बायां हाथ पकड□कर व्याकुल स्वर में विलाप करते राम बोले, 'तुम नहीं जानते लक्ष्मण! तुमने कितना बड□ा अनर्थ कर दिया है।'

'मैंने अनर्थ किया नहीं, मुझसे कराया गया है राघव! प्रात:काल ही मैंने उस मृग को देखकर आपको संकेत दिया था कि यह मायावी मृग है और निश्चय ही राक्षसों की इतनी लंबी सेना के नष्ट हो जाने के बाद हमारा अनिष्ट करने के खयाल से यह सोची-समझी हुई माया हमारे विरुद्ध रची गई थी। और जब... हां, पहले इसे छोडि□ए आप बताइए कि वह मारीच ही था ना?'

'हां लक्ष्मण, वह मारीच ही था।'

'तो मेरा संदेह ठीक निकला। भैया! उसकी आवाज सुनकर मैं जान गया था कि ये दुष्ट मारीच की ही चाल है, लेकिन जब भाभी ने मुझ पर यह लांछन लगाया, छोड□ा अब मैं आपसे क्या बताऊं। अब तो आप शीघ्र पंचवटी लौटिए।'

और इस प्रकार दोनों तेजी से लौट गए।

'यदि भाभी सुरक्षित मिल जाएं तो ईश्वर का लाख-लाख धन्यवाद है।'

चलते हुए राम ने कहा, 'हूं तो तुम कह रहे थे... क्या लांछन लगाया?'

'उन्होंने कहा, मेरे मन में खोट आ गया है और तुम्हारी अनुपस्थिति का लाभ उठाकर भाभी को अपना बनाना चाहता हूं। आप सोचिए कि मेरे लिए इससे बड□ा लांछन और क्या हो सकता था! उन्होंने तो मुझे शाप देने की धमकी भी दी थी और कहा था कि यदि मैं शीघ्र ही नहीं गया तो वे प्राण त्याग देंगी। अब आप बताइए कि मैं क्या करता?'

'यह सब समय का दोष है भैया! मृगों के झुंड-के-झुंड जैसा अमंगल सूचित कर रहे हैं, गीदड□ जिस प्रकार भैरवनाद कर रहे हैं और जिस प्रकार तेजी से मेरी बायीं आंख फड□क रही है, उससे जान पड□ता है कि आज देवी सीता हमें कुटिया में नहीं मिलेंगी।' और यही हुआ भी। लक्ष्मण पंचवटी के भीतर सारी कुटिया में उन्हें देख आए लेकिन वहां सीता नहीं थीं। आंगन से कुटी के द्वार तक कुछ पैरों की घिसट के निशान अवश्य थे। जल का लोटा दहलीज से बाहर उलटा पड□ा था और बिखरा हुआ पानी अभी पूरी तरह भूमि सोख नहीं पाई थी। एक तरफ पूजा के फूल कुम्हलाए पड□ थे और आंगन में एक उत्तम आसन के सामने परसा हुआ आतिथ्य सत्कार के लिए केले के पत्तों पर भोजन रखा हुआ था। ये सारे संकेत बता रहे थे कि यहां अवश्य कोई भिक्षुक आया है, लेकिन देवी सीता को देखकर उसके मन में पाप उदय हुआ और वह उन्हें बलात् हरकर ले गया। वहां पेड□ों की डाल पर बैठे पक्षी इधर-से-उधर पंख मारते हुए उड□ते हुए जिस प्रकार से चीं-चीं कर रहे थे मानो वे सीता की दु:खद कथा को कहना चाहते थे।

लक्ष्मण को उदास, चिंतित और सीता के बिना आए देख राम बिलख उठे। व्याकुल मन से सीता-सीता की पुकार होने लगी।

'मैं राज्य से भ्रष्ट, पिता-विहीन दीन होकर इस वन में अपना समय व्यतीत करता था। आज पत्नी विहीन होकर इस दण्डकारण्य में चक्कर लगा रहा हूं।' एक लंबी आह भरते हुए राम ने कहा, 'जिसके बिना मैं दो घड□ी भी जीवित नहीं रह सकता, ओ मेरी प्राण प्यारी सहचरी तू कहां है? नहीं चाहिए मुझे राज्य, कोई सुख-वैभव, मैं तो अपनी प्रिया के साथ तपस्वी का जीवन जी ही रहा हूं। शेष जीवन भी इसी प्रकार जी लूंगा।'

फिर कुछ सोचते हुए 'इस प्रकार सीता के बिना कैसे लौटकर जाऊंगा अयोध्या? नहीं, मैं नहीं जा पाऊंगा, अब तो मैं जी ही नहीं पाऊंगा।'

'हे लक्ष्मण! जब तुम अयोध्या लौटोगे तो निश्चित ही माता कैकेयी का मनोरथ सफल हो जाएगा। उन्होंने मुझे भरत के मार्ग का बाधक समझा था।'

'लेकिन जिसका इकलौता पुत्र मैं मर जाऊंगा वह मेरी तपस्विनी मां कौशल्या कैसे अपने मन को थाम सकेगी। जिसने अभी बड□ी कठिनाई से पति का मरण सहन करने की क्षमा जुटाई है, वह पुत्र और पुत्रवधू के निधन को कैसे सह पाएगी?'

'नहीं लक्ष्मण। यदि विदेहनंदनी सीता जीवित नहीं हैं तो मैं इस आश्रम में पैर नहीं रखूंगा मैं अपने प्राणों का परित्याग कर दूंगा।'

'हे लक्ष्मण! तुम ही बताओ, मेरी वैदेही जीवित तो है? कहीं उसको राक्षस तो नहीं खा गए। तुम चुप क्यों हो लक्ष्मण!'

'मैंने तुम्हारे विश्वास पर सीता को छोड□ा था और तुम उसे किसके विश्वास पर छोड□कर चले गए?'

'जब मारीच ने मेरे बाण से घायल होकर जमीन पर गिरते हुए तुम्हारा और वैदेही का नाम

लेकर पुकार की थी तो मैं समझ गया था कि निश्चय ही यह अनिष्ट का संकेत है। उस समय मेरी बायीं आंख और बायीं भुजा जिस प्रकार फड□की थी, उसे मैं ही जानता हूं और जब मैंने तुम्हें अपनी ओर आते देखा तब तो निश्चय हो गया कि आज का दिन हमारे लिए सबसे बड□ अमंगल का दिन होगा।'

'मैं तो आपको पहले ही बता चुका हूं भैया! मैं अपनी इच्छा से उन्हें छोड□कर नहीं गया था, उन्होंने तो मुझको लांछित करके बलात् भेजा था, वे अब जहां भी हैं, अपने कर्म पर अवश्य ही पश्चात्ताप कर रही होंगी।'

'जब मुझे यह ज्ञात है कि त्रिलोक में भी आपका कोई अहित नहीं कर सकता, नाग, गन्धर्व, देवता, असुर, रास, दैत्य, तक जब आपको युद्ध में नहीं जीत सकते, आपके दिव्यास्त्रों की काट किसी के पास नहीं है, आप अमोघ अस्त्र के ज्ञाता हैं, जब मैं यह जानता हूं तो फिर मारीच के मिथ्या आर्त स्वर से मैं क्यों विचलित होने लगा। मैंने तो भाभी को पूरी बात स्पष्ट कर दी थी और कह दिया था कि जिसे मृग समझकर आपने श्रीराम को उसका चर्म लाने भेजा है, वह मायावी मारीच है, जिसे आपके स्वयंवर से पहले श्रीराम ने अपने एक ही बाण से सौ योजन दूर फेंक मारा था।'

'लेकिन उन्होंने तो बार-बार 'जाओ, जाओ' कहकर मुझे प्रेरित किया, मैं क्या करता? मैंने कितना समझाया था।'

'उन्होंने तो मुझे ही लांछित किया कि तेरे मन में पाप आ गया है। मैं भाई के मरने पर उन्हें प्राप्त करना चाहता हूं। उन्होंने तो यह भी कहा कि मैं भरत के इशारे पर अपने स्वार्थ के लिए उनके पीछे-पीछे आया हूं तभी तो उनका आर्त स्वर सुनकर भी मैं उनकी सहायता के लिए नहीं जा रहा हूं।'

'मैं अपने भाई का छिपा हुआ शत्रु हूं, मैं सीता के लिए ही राम का अनुसरण करता आया हूं और संकट के समय इसीलिए उनकी सहायता के लिए नहीं जा रहा हूं।' 'आप बताइए कि मेरे जैसे सेवक के लिए यह लांछन क्या मृत्यु से बढ□कर नहीं था? मैं क्रोध से अपना फड□कता हुआ हृदय लिए वन देवता के सहारे उन्हें छोड□कर, दिशाओं के सहारे और वृक्षों के सहारे उन्हें छोड□कर आपकी सेवार्थ चला गया।'

'तुमने बहुत बुरा किया भैया, अनर्थ हो गया। तुम सीता को छोड□कर चले आए और वह अकेली किसी दुष्ट के हाथों वशीभूत हो गई।'

'वह तो मायावी मारीच मेरा बाण लगते ही अपने वास्तविक रूप में आ गया और आहत होते ही उसने मेरे स्वर की नकल करके तुम्हें पुकारना शुरू कर दिया। अब यह सूनी कुटिया ये मौन खड□ वृक्ष रोते-बिलखते पक्षी, जिस भाव-हीनता की बात कह रहे हैं, ये मृग जिस प्रकार अश्रुपूरित आंखों से निहार रहे हैं, ये गिरा हुआ मृगचर्म, बिखरे हुए कुशासन, अस्त-व्यस्त चटाइयां और ये घसीटने के निशान-निश्चय ही उसको कोई दैत्य या राक्षस उठाकर ले गया है।'

एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष के पास दौड□ते हुए नदियों और किनारों पर ढूंढ□ते हुए व्याकुल राम

मूर्च्छित से हो रहे थे। कुछ भी नहीं सूझ रहा था राम को, जैसे कि विक्षिप्त हो रहे हो।

'कदम्ब! सीता तो तुम्हारे पुष्पों से बहुत प्रेम करती थी। क्या तुमने उसे देखा है? कृपया बताओ, वह कहां गई? उसके शरीर पर पीले रंग की रेशमी साड□ी कितनी सुन्दर लगती थी। हे बिल्व प्रिया के स्तन ठीक तुम्हारे समान थे, तुमने उसे देखा है? हे अर्जुन! तुम तो उसे अपने फूलों से सदा प्रसन्न रखते थे, तुम ही उसका समाचार दो।'

'हे ककुभ! अपने ही समान उरुवाली मिथलेश कुमारी को तुमने देखा होगा, तुम तो वृक्षों में सर्वश्रेष्ठ हो, तुम्हें सीता का अवश्य ही पता होगा।'

'हे अशोक! तुम तो शोक दूर करने वाले हो, मेरा भी शोक दूर करो ना, मुझे अपनी प्रिया का दर्शन कराओ और मुझे अशोक बनाओ।'

'हे ताल वृक्ष! तुम्हारे पके हुए फल के समान ओठों वाली सीता कहां है, तुम उस सुन्दरी के बारे में कुछ तो बताओ।'

'हे जामुन! कनेर, शाल, कटहल, वकुल, चंदन आदि वृक्षों तुम तो कुछ बोलो, क्या तुमने मेरी प्रिया को देखा है?'

और विक्षिप्त हुए राम उन अबोले जीवधारियों से सीता का पता पूछ रहे थे। जो सबको जीवन प्रदान करते हैं, वे निर्जीव हुए घूम रहे थे। किसी के हाथ से जब कबूतर उड□ जाता है तो वह खाली हाथ हताशा में आकाश की ओर देखता है और राम भी हताश हुए आकाश की ओर देखने लगे थे।

अपने सम्मुख हरिण को व्याकुल बिलखता देख राम ने कहा, 'तुम भी मेरे समान जानकी का ही दु:ख मना रहे हो। तुम्हें पता है कि जानकी कहां गई हैं?'

गर्दन हिलाते हुए हरिण ने आकाश की ओर मुंह उठा दिया। अब राम क्या समझें पशु की भाषा। आकाश में जाने का अर्थ जानकी का वध भी है और यह भी कि कोई उसे अपहरण करके आकाश मार्ग से ले गया है।

अपने प्रिय गजराज के पास पहुंचकर राम ने कहा, 'हे गजराज! तुमने जानकी को देखा है?'

मानो गजराज भी सिर झुकाकर स्वीकार करते हुए कहता है कि मैं जानता हूं और वह अपनी सूंड□ आकाश की ओर उठा देता है।

व्याघ्र भी राम को देखकर उनकी चिंता का समाधान करते हुए मानो आकाश की ओर चिंघाड□ कर कहता है, वो, वो।

अब यह निश्चित-सा हो रहा था कि या तो जानकी का वध हो गया है या उसे कोई चुराकर ले गया है, लेकिन व्याघ्र की चिंघाड□ में वध की अपेक्षा, किसी के चुराकर ले जाने का भाव अधिक था। यदि जानकी का वध हो जाता तो व्याघ्र आकाश की ओर नहीं चिंघाड□ता बल्कि चुप होकर दु:खी मुद्रा में बैठकर आंसू बहाता। उसका आक्रोश संकेत देता है कि जानकी को निश्चित रूप से चुराया गया है। इधर राम व्याकुल थे और वे बार-बार कह रहे थे, आओ लक्ष्मण! तुमने मेरी जानकी को राक्षसों का भोजन बनने के लिए अकेली छोड□ दिया और

दूसरी ओर लक्ष्मण अपराध-बोध का अनुभव कर रहे थे।

राम को अत्यन्त व्याकुल और विषादग्रस्त देखते हुए लक्ष्मण ने कहा, 'आप इस प्रकार विषाद न करें राघव, जानकी को मेरे साथ ढूंढ□ने का प्रयत्न करें।'

'तुम मुझे बहकाने का प्रयत्न न करो लक्ष्मण! इस समय मैं अत्यन्त दु:खी हूं।' 'आप क्या समझते हैं कि मुझे दु:ख नहीं है।'

'नहीं भाई! मैं ऐसा नहीं कह रहा, तुम्हें तो सीता ने ही बहुत अधिक दु:खी कर दिया। लगता है, उसकी बुद्धि विनाश के कारण विपरीत हो गई, अन्यथा वह तुम पर ऐसा लांछन नहीं लगाती। लेकिन वैदेही के वियोग को मैं कैसे सह पाऊंगा लक्ष्मण!'

और इस प्रकार वे दोनों भाई सीता की खोज करते हुए वनों, पर्वतों, सरोवरों के किनारे पर घूम-घूमकर सीता, सीता पुकारने लगे।

लेकिन कहीं कोई आवाज नहीं आई।

राम सीता के वियोग में शोक और मोह से पीडि□त थे। लक्ष्मण भी दु:खी थे। ऐसे समय मन में जो भी भाव आ रहा था वे उसे कह रहे थे।

'हे लक्ष्मण, मेरे जैसा पापकर्म करने वाला भी कोई व्यक्ति इस पृथ्वी पर भला हो सकता है? जिसे एक के बाद दूसरा शोक व्यथित कर रहा है, पहले मैं राज्य से वंचित हुआ, फिर स्वजनों से मेरा वियोग हुआ फिर पिताजी का परलोक वास हुआ और वन में आकर सीता से भी मेरा वियोग हो गया।'

'हे लक्ष्मण! मुझे लगता है कि किसी राक्षस ने अवश्य ही उसे आकाश मार्ग के द्वारा हर लिया है।'

'मैं सीता के साथ अयोध्या से निकला था, अब जब वहां सीता के बिना लौटूंगा तो कैसे प्रवेश कर पाऊंगा उस अन्त:पुर में, जहां माताएं अपनी पुत्रवधू को देखने के लिए इतने दिनों से आंखें बिछाए बैठी हैं। तब सारा संसार मुझ ही को पराक्रमहीन कहेगा। सीता का यह हरण मेरी कायरता ही दर्शाएगा। जो लोग मेरा कुशल पूछने आयेंगे तो मैं उन्हें क्या कहूंगा?'

'क्या कहूंगा, विदेहराज जनक को कि मैं वन में उनकी सुकोमल पुत्री को हिंसक पशुओं के बीच अकेला छोड□ गया था राक्षसों का आहार बनने के लिए? नहीं भाई लक्ष्मण! मैं यह सब नहीं देख पाऊंगा।'

'सुनो, लक्ष्मण! अब तुम मेरी बात मानो, तुम मुझे अकेला वन में छोड□कर अयोध्या लौट जाओ।'

'राघव! आप इतनी जल्दी हतोत्साहित हो रहे हैं। हमें धीरज से काम लेना चाहिए और फिर आप यह कैसे विश्वास कर लिए कि मैं आपको इस दशा में छोड□कर अयोध्या वापिस लौट जाऊंगा। यदि मैं आपको बीच में छोड□कर अयोध्या लौटना चाहता तो मैं आपके साथ आता ही क्यों?'

'देखो भाई? अब मैं सीता के बिना किसी भी प्रकार जीवित नहीं रह पाऊंगा। अब तुम अयोध्या लौटकर भरत से मिलकर कह देना, हे प्रिय! तुम सारी पृथ्वी का पालन करो, अब राम ने तुम्हें आज्ञा दे दी है, वह नहीं लौटेंगे। माताओं को प्रणाम कहना।'

'तुम्हारे लिए मेरी यही आज्ञा है और सीता के विनाश का समाचार उन्हें विस्तार से सुना देना।'

कहने को तो राम यह वाक्य कह गए लेकिन इसके बाद वे फिर दीन भाव से विलाप करने लगे।

लक्ष्मण भी शोक में डूबे हुए थे, ऐसी दशा में वह राम से क्या कहते? क्योंकि दोष तो उनका भी था, वे किसी भी प्रकार से भाभी के संशय को मिटाकर उन्हें रोक सकते थे और खुद भावावेश में आकर जिस प्रकार राम को ढूंढ□ने निकले थे यदि न जाते तो यह संकट आता ही नहीं।

राम को सीता के साथ गुजारे हुए अपने प्रिय दिन याद आ रहे थे और वे सोच रहे थे कि यदि कहीं वह जीवित है तो अधीनता की दशा में कितनी घबराई हुई और परेशान होगी। हमारे साथ रहते हुए वन में भी वह कितना सुखी थी, लेकिन हमारी अनुपस्थिति में जब उसे दुष्ट राक्षस ने घसीटा होगा तो कितना असहाय हो रही होगी वह। वह तो कभी गोदावरी के तट पर भी अकेली नहीं आई, बस केवल पंचवटी के बाहर रखी शिला पर बैठ जाया करती थी और अपने पशु-पक्षियों से खेला करती थी। कितना सीमित था उसका संसार, कितना सीमित था उसका सुख। कभी उसके मुख पर चिंता की रेखाएं नहीं उभरीं। सदैव वह एक सन्तोष का अनुभव करती थी, पर वह अब न जाने किस दशा में होगी?

राम यही सोचते रहे, कभी-कभी विक्षिप्त भी हो जाते थे, ऐसी ही दशा में उन्होंने लक्ष्मण से कहा-

'लक्ष्मण! देखो, तुम शीघ्र गोदावरी के तट पर जाओ और पता करो कि कहीं सीता हमें लेने तो नहीं चली गई।'

लक्ष्मण ने जब लौटकर उन्हें यह बताया कि वह वहां कहीं भी नहीं हैं तो पता नहीं क्यों राम को उनके कथन पर विश्वास नहीं हुआ और फिर वे स्वयं गोदावरी के तट पर गए। 'सीता! सीता! तुम कहां हो?' लेकिन कोई उत्तर नहीं।

जब वहां से कोई उत्तर नहीं मिला तो राम फिर विलाप करते हुए कहने लगे, 'हे लक्ष्मण! गोदावरी नदी ने तो मुझे कोई भी उत्तर नहीं दिया, अब मैं राजा जनक से क्या कहूंगा?'

उन्हें मार्ग में कितने ही मृग मिले, अनेक पशु-पक्षी भी मिले। राम के विलाप को देखकर वे सब ठिठककर खड□ तो हो गए पर राम उनकी भाषा नहीं समझ पाए और फिर वे बताते भी क्या?

विक्षिप्त दशा में राम बार-बार कभी सूर्य से, कभी वायु से, कभी पर्वत राज से पूछते थे और कहते थे कि हे वनचरों क्या तुमने कहीं सीता को देखा है? मृगों के झुंड-के-झुंड राम को देखकर अश्रुपूरित नेत्रों से खड□ हो जाते थे और सहसा आकाश मार्ग की ओर देखकर सभी दक्षिण दिशा की ओर दौड□ पड□ते थे और राम केवल यही अनुमान लगा पा रहे थे-संभवत: कोई जानकी को हर कर दक्षिण की ओर ले गया है।

मृगों के पीछे चलते हुए दोनों भाई दक्षिण दिशा की ओर चल दिए।

अकस्मात् उनके सामने भूमि पर पड□ हुए कुछ फूल दिखलाई दिए। दौड□कर राम ने वे फूल उठाते हुए कहा, 'देखो लक्ष्मण, देखो, ये सीता के ही हैं, आज ही तो मैंने सुबह ये दिए थे और उन्होंने अपने केशों में लगा लिये थे।' तब राम ने सामने विशाल पर्वतों को सम्बोधित करते हुए कहा, 'हे पर्वत राज! जब तक तुम्हारे शिखरों का विध्वंस नहीं कर डालता, तब तक तुम मुझे मेरी प्रिय सीता के दर्शन करा दो।'

पर्वत शिखरों से मानो ऐसा चिह्न प्रकट हुआ जिसमें सीता एक बंदिनी-सी छटपटा रही थीं। इसके बाद नदी की ओर मुंह करके राम ने कहा, 'लक्ष्मण! यदि यह नदी मुझे आज सीता का पता नहीं बताएगी तो मैं इसे भी सुखा दूंगा।'

यह कहते हुए राम जोर से क्रोधित दृष्टि से गोदावरी की ओर देखने लगे।

तभी उन्होंने देखा कि पर्वत और गोदावरी के पास की भूमि पर किसी राक्षस के विशाल पैरों के निशान उभरे हुए थे। उसी के आगे-आगे सीता के चरण चिह्न भी दिखलाई पड□। इन चिह्नों से ऐसा लग रहा था मानो वैदेही कुमारी ने स्वयं को बचाने के लिए वहां से भागने का प्रयत्न किया होगा और वह राक्षस से स्वयं को बचाने में जूझी भी थीं। पैरों के निशान के पास टूटा हुआ धनुष, तरकश और अनेक टुकड□ों में बिखरे हुए रथ के हिस्से पड□ थे। वहीं सीता के कानों के घुंघरू पड□ थे, इसके पास ही जमीन पर कुछ विचित्र रक्त की बूंदें भी दिखलाई दीं।

और यह देखकर राम को सिहरन हो आई, 'ओ हो! इससे तो ऐसा मालूम होता है कि उन राक्षसों ने सीता के टुकड□-टुकड□ करके उसे आपस में...'

'नहीं भैया... नहीं! ऐसी बातें मत करो। इतने निराश न हो। भला वो सीता को क्यों मारेंगे? अच्छा यह विचार करो कि यह धनुष किसका हो सकता है?'

'पता नहीं लक्ष्मण! यह राक्षसों का है या देवताओं का, पर इस पर जड□ी नीलम मणियां इस बात का संकेत दे रही हैं कि यह अवश्य ही किसी राजा का धनुष है।' लक्ष्मण को आगे पृथ्वी पर टूटा हुआ एक स्वर्ण कवच भी दिखलाई दिया और पास ही रथ का छत्र पड□ा था।

उनके सामने यही प्रश्न था कि यह रथ किसका हो सकता है, इस रथ में ध्वजा भी लगी थी। वहीं पास में बाणों से भरे हुए दो तरकश पड□ थे और रथ का सारथी मरा पड□ा था। उसके हाथ में चाबुक अभी अटका हुआ था।

यह देखकर राम ने कहा- 'प्रिय सौम्य! यह तो अवश्य ही किसी राक्षस के पदचिह्न लगते हैं। अब तो मैं निश्चय ही इन राक्षसों को जड□-मूल से ही नष्ट कर दूंगा।'

'और अब तो यह भी पक्का विश्वास हो रहा है कि सीता का अपहरण ही हुआ है। आज मुझे लग रहा है कि मेरी उदारता, दयालुता आदि गुण ही मेरे दोष रूप में मुझे निर्बल बना रहे हैं। लेकिन नहीं, ऐसा नहीं होने दूंगा। यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, राक्षस, पिशाच, जो कोई भी हो, अब वह चैन से नहीं रह सकता।'

अब चाहे ग्रहों की गति रुके, चन्द्रमा छिप जाए, अग्नि, सूर्य या मरुद्गण, का तेज क्षीण पड□

जाए चाहे चारों ओर अंधकार फैल जाए यदि ये देवगण मेरी सीता को मुझे नहीं लगाएंगे तो मैं इस पर्वत शिखरों को ही मथ डालूंगा। जलाशयों को सुखा दूंगा।' 'हे लक्ष्मण! तुम आज मेरे नाराचों का भीषण प्रभाव देखना। आज यह सारा जगत् मर्यादा रहित और व्याकुल हो जाएगा। पिशाचों और राक्षसों का संहार ही मेरा लक्ष्य है अब तो।'

यह कहते हुए राम के नेत्र क्रोध में लाल हो रहे थे। होंठ फड□फड□ा रहे थे। अपनी जटाओं को कसकर बांधते हुए राम ने मृगचर्म को ठीक किया। इस समय राम त्रिपुर का वध करने वाले भगवान शिव के समान दिखलाई पड□ रहे थे।

उनका क्रोध भयंकर रूप धारण करता जा रहा था। वह सोच रहे थे- जीवनपर्यंत सत्य मार्ग का अनुसरण करते हुए ऋषियों-मुनियों के हित में राक्षसों का विनाश करते हुए उन्होंने सदा ही धर्म का आचरण किया है। उसका परिणाम उन्हें इस रूप में मिला कि सीता का वियोग सहना पड□ा। यह कहां का न्याय है। क्या लाभ-ऐसी व्यवस्था का? लक्ष्मण के लिए भी यह एक नया अनुभव था। आज तक उसने राम को त्याग और सहिष्णुता की मूर्ति के रूप में ही देखा था, प्रतिशोध की यह अग्नि इससे पूर्व कभी प्रज्ज्वलित नहीं हुई थी।

फिर भी संयत होकर लक्ष्मण ने राम को शांत करते हुए कहा, 'हे तात। क्या किसी एक नराधम या दुष्ट राक्षस के अपराध का फल आप सारे जगत् को देंगे। जिस अग्नि को प्रज्ज्वलित करने का विचार आप कर रहे हैं, क्या उसमें वे निरीह पशु नहीं जल जाएंगे? वे वृक्ष नहीं नष्ट हो जाएंगे जिन्होंने आपके दु:ख के साथ अपनी मौन संवेदना प्रकट की है? जिन हाथियों ने अपने सूंड□ उठाकर सीता के आकाश मार्ग से जाने की सूचना दी, इससे तो उनका भी अनिष्ट हो जाएगा।'

'अब तो हमें सर्वप्रथम यह पता लगाना चाहिए कि यह टूटा हुआ रथ किसका है? यह स्थान, जो घोड□ों की टापों की रगड□ के चिह्न से अंकित है, रक्त की बूंदों से सिंचित है, जिससे यहां बड□ संघर्ष की सूचना मिलती है और यह भी कि ये चिह्न केवल एक रथी के हैं, दो के नहीं। इसलिए जिस दुष्ट ने सीता का अपहरण किया है उसी की खोज करनी चाहिए।' 'हां, यदि प्रयत्न करने पर भी सीता का कहीं कोई पता न चले तो अवश्य आप लोक का संहार कर देना।'

'और हे राम! यदि आपने अपने दु:ख पर नियंत्रण नहीं किया तो फिर संसार में कौन व्यक्ति धैर्य से काम ले सकेगा?'

कुछ संयत होकर राम ने कहा, 'भाई! सीता का पता तो लगाना ही है, उसके बारे में पता करने के लिए क्या उपाय करना चाहिए?' यह कहते हुए राम ने अपना धनुष फिर से उतार लिया।

'हमें इस जनस्थान की खोज करनी चाहिए। यहां रथ आदि टूटे मिले हैं। संभवत: आगे कोई और संकेत मिले। यहां तो अनेक गुफाएं, कन्दराएं हैं। चलिए चलते हैं, वहीं खोज करते हैं।'

यह कहते हुए राम, लक्ष्मण के साथ वन में विचरण करते हुए सीता को खोजने लगे। अभी वे कुछ दूर ही चले थे कि उन्हें पक्षीराज जटायु दिखाई पड□।

'अरे, ये तो लहूलुहान दशा में पड□ हैं। इनकी यह दशा किसने बनाई है।' दौड□कर लक्ष्मण

ने कहा।

'नहीं लक्ष्मण! यह अवश्य ही कोई राक्षस अपनी माया का भ्रम फैला रहा है, नि:सन्देह इसी ने जनक-सुता को खाया है।'

'क्या कह रहे हैं आप!'

'क्या आप नहीं पहचान रहे, ये ही पक्षीराज जटायु हैं।'

'आपको क्या हो गया है? आप मोह के जाल से बाहर आप राघव।'

'अरे लक्ष्मण इसी दुष्ट ने जनक-पुत्री सीता का भक्षण किया है। '

लक्ष्मण राम के मुंह से यह सुनकर अवाक् रह गए और कहने लगे, 'हे राघव! उपहास न करें। मारीच को, मेरे कहने पर भी आपने स्वर्ण मृग ही समझा और उसका मृगचर्म लेने चले दिए। अब मैं कह रहा हूं कि ये महात्मा जटायु हैं तो आपको इसमें राक्षस की माया दिखलाई दे रही है? क्या विरोधाभास है। '

'ऐसा क्यों हो रहा है तात! क्यों उठ रहा है मेरा विश्वास! विदेह कुमारी ने भी मेरी बात नहीं मानी। मैं उनसे कहता रह गया, हे देवी! यह राम की आवाज नहीं है। यह तो उस दुष्ट मायावी राक्षस मारीच का स्वर है जो राम के स्वर में हमें छल रहा है। और फिर भी उन्होंने मेरे मन में खोट का अनुभव करते हुए लांछन दे डाला।'

राम, जो अभी तक अपने धनुष की प्रत्यंचा चढ□ाए मृतप्राय जटायु को मारने का उपक्रम कर रहे थे, अब कुछ संयत हो गए और जैसे ही वे दोनों भाई महात्मा जटायु के पास आए और उन्होंने उनकी ये दीन-हीन दशा देखी तो वे हतप्रभ रह गए।

पास ही में उनके दोनों विशाल पंख शरीर से अलग निष्प्राण पड□ थे। जटायु के मुंह से झागयुक्त खून बह रहा था, ऐसी दशा देखकर राम को अपने ऊपर ग्लानि का भाव हुआ कि वह मोह में कितना आसक्त हो गए कि महात्मा जटायु को ही भूल बैठे। राक्षसों की माया के फेर में उन्हें अपने-पराए का भेद ही भूल गया।

अपने हाथों से महात्मा जटायु की गर्दन को उठाते हुए राम ने उनके सिर को अपनी जांघों पर टिकाया और अपने उत्तरीय से जटायु के मुख का खून पोंछते हुए बोले, 'हे महात्मन् आपकी यह दशा किसने की?'

टूटे हुए सांस को संभालते हुए धीरे-धीरे आंखें खोलते हुए जटायु ने पहले राम को देखा, फिर लक्ष्मण को निहारा और मानो सदा के लिए अचेत हो जाने के लिए आंखें बंद करनी चाही तो राम ने बिलखते हुए उनसे कहा, 'नहीं महात्मन्! ऐसा मत कीजिए। अनर्थ हो जाएगा, कम-से-कम कुछ तो बोलिए। यदि आप हमें इस प्रकार अधर में छोड□ गए तो इस वन में हमारा कौन है, हम तो बिलकुल अनाथ हो जायेंगे।'

'हे राम! तुम जिसे पूछ रहे हो, उस सीता को और मेरे इन प्राणों को रावण ने हर लिया है।'

'यह वही लंका का राजा रावण?'

'हां राम! जैसे ही मेरी दृष्टि पड□ी, मैं सीता की सहायता के लिए दौड□ा। वह दुष्ट उसे अपने पुष्पक विमान में बिठाकर बलात् ले जा रहा था। मैं सीता की सहायता के लिए दौड□ा। मैंने अपनी शक्ति के अनुसार उसे बहुत रोका। उससे लड□ा भी। उसका छत्र मैंने गिरा दिया, अपनी चोंच से उसे घायल भी कर दिया। आपको यहीं पास में कहीं उसका टूटा हुआ धनुष, खण्डित बाण और टूटा हुआ रथ भी मिले होंगे या कहीं पड□ होंगे। मैंने उसके सारथी को भी मार डाला था, लेकिन हे राम! वह बहुत बलशाली था।'

'जब मैं युद्ध करते थक गया तो हे राम! उस दुष्ट रावण ने अवसर पाकर मेरे दोनों पंख काट डाले। मैं लाचार और निरीह गिरता-पड□ता यहां इस खोह में आकर अटक गया और वह दुष्ट राक्षस सीता को लेकर आकाश में उड□ गया।'

'मैं तो उस राक्षस के हाथों पहले ही मार डाला गया हूं। अब तुम्हारे आने की प्रतीक्षा ही कर रहा था कि यदि तुम आ जाओ तो मैं तुम्हें यह संदेश दे दूं कि तुम्हारी सीता को राक्षसराज रावण चुराकर ले गया है।'

'अब भी तुम मुझे मायावी राक्षस समझते हो तो मुझे मार डालो, वैसे मुझे मारकर अपने ऊपर क्यों एक हत्या का दोष ले रहे हो, मैं तो स्वयं ही प्राण त्यागने की स्थिति में आ गया हूं। तुम्हारे आने की प्रतीक्षा ही कर रहा था।'

राम ने अपनी प्रिय सीता के संबंध में यह जानकर कि वह जीवित है और राघव के द्वारा हरी गई है, उनके मन पर से काफी बड□ा बोझ उतर गया और तब गिद्ध राज जटायु को गले से लगाकर शोक से व्याकुल होते हुए राम ने कहा, 'हे महात्मन्। मुझे क्षमा करें, यह सब मेरा ही दोष है, मेरी बुद्धि का ही फेर है कि मैं आपको किसी राक्षसी माया का स्वरूप समझ बैठा, मैं अपने मन में आए दूषित विचारों के लिए आपसे क्षमा मांगता हूं।' 'नहीं राम! ऐसा मत कहो, तुम तो त्रिकालदर्शी हो, कितना सौभाग्य है मेरा कि स्वयं नारायण का सान्निध्य पा गया हूं। मैं आपके दर्शन मेरे लिए स्वयं एक पुण्यफल हैं।' अब अधीर हुए राम ने महात्मा जटायु को सांत्वना दी और लक्ष्मण से कहा, 'हे भाई! मुझ जैसा भी कोई भाग्यहीन होगा... और अपनी बात पूरी किए बिना ही राम फिर विकल होकर विलाप करने लगे।'

'ये महाबली गिद्ध राज जटायु मेरे पिता के मित्र थे और आज मेरे लिए एक पिता का दायित्व पूरा करके अपने जीवन को सार्थक कर गए। देखो किस प्रकार आज पृथ्वी पर अचेत पड□ हैं।

'हे लक्ष्मण। कितना प्रयत्न किया होगा इस महात्मा ने। देखो, इसके दोनों पंख किस प्रकार कटे हुए हैं और अलग पड□ हैं, शरीर पर तलवार के कितने निशान हैं, बाणों से शरीर छिदा पड□ा है। कितना संघर्ष किया इन्होंने सीता को बचाने के लिए ।अपने प्राणों का त्याग करने में भी इन्हें हिचक नहीं हुई।'

राम ने फिर धीरे-धीरे महात्मा जटायु के घावों पर मरहम लगाने का प्रयास किया और धंसे हुए बाणों को बाहर निकाला। कुछ आराम आने पर उन्होंने कहा, 'हे महात्मन्। बताइए ये सब कैसे हुआ? आप तो प्रत्यक्षदर्शी रहे हैं।'

थोड□ा चेत आने पर जटायु ने कहा, 'यह सब मेरा दुर्भाग्य है राम! मैंने जब लक्ष्मण को कुटी से जाते हुए देखा, तो मैं यही समझ पाया था कि शायद यह यहीं बाहर आश्रम के लिए फल-फूल लेने या लकडि□यां लेने जा रहे हैं। मुझे यह चिंता तो अवश्य थी क्योंकि मैंने प्रात:काल से ही आपको नहीं देखा था।

'लक्ष्मण चले गए। मैं पास ही वटवृक्ष पर बैठा हुआ था, पर मेरा दुर्भाग्य कि मुझे नींद आ गई, शायद काल को यही स्वीकार था, पर जब मैंने हिरनों का कोलाहल और पक्षियों की चटर-पटर सुनी तो मेरी आंखें खुल गईं। मैंने देखा कि वह पराक्रमी राक्षस जबरदस्ती वैदेही को एक हाथ से बाल पकड□, दूसरे हाथ को दोनों जंघाओं के नीचे ले जाकर उठाते हुए रथ पर बैठा रहा था, तब मुझे भयानक क्रोध आया। उस समय उस मायावी राक्षस ने अपनी माया से आंधी और वर्षा का वातावरण पैदा कर दिया था। ऐसे में सभी पशु-पक्षी अपनी रक्षा करते हुए गुफाओं में छिप गए। पर जब मैंने वैदेही की व्याकुल दशा देखी और उन्हें रावण की पकड□ में बंदिनी-सा अनुभव किया तो मैं गुस्से में रावण पर टूट पड□ा। सारथी रथ को दौड□ाये चला जा रहा था और मैं रावण को अपनी चोंच से वेदना पहुंचा रहा था, लेकिन मैं पक्षी था, उस अतुल बल वाले राक्षस से अकेला कहां तक जूझता, उस नराधम ने मेरे पर काट डाले लेकिन इससे पहले मैंने उस दुष्ट के सारथी को मार गिराया था, रथ टूट गया था, कुछ क्षण के लिए तो वह दुष्ट भी अचेत हो गया था लेकिन जब मेरे पर कट गए तो मैं भी मूर्छा की दशा में आ गया और जब मुझे चेत आया तो वह राक्षस वैदेही को विमान पर बैठाकर बहुत दूर जा चुका था।

'हे राम! आप अपने मन को स्थिर करिए। जिस मुहूर्त में रावण सीता को ले गया है, उसमें खोया हुआ धन शीघ्र ही उसके स्वामी को वापिस मिल जाता है, यह विन्द नामक मुहूर्त था। जिस प्रकार मछली मौत के लिए बंसी को पकड□ लेती है, उसी प्रकार उसने भी इस मुहूर्त में सीता का हरण किया है।'

'हे राम! यह निश्चित जानो और अपने मन को धीरज बदो। जनकनंदिनी के लिए अब तुम खेद मत करो। संग्राम में उस निशाचर का वध करके तुम शीघ्र ही फिर से अपनी प्राण प्रिया वैदेही को पा लोगे।'

यह कहकर जटायु कुछ देर के लिए रुके और फिर बोले, 'हे राम! तुम शायद जानते हो, यह रावण महात्मा विश्रवा का पुत्र और कुबेर का छोटा भाई है।'

और यह कहते-कहते गिद्ध राज ने अपने प्राण त्याग दिए। उनका मस्तक एक ओर को लुढ□क गया और राम हाथ जोड□-जोड□- 'कहिए कहिए' ही कहते रह गए।

प्राण निकल जाने से जटायु पर्वत के समान अविचल हो गए।

राम ने इस महात्मा का विधिवत रूप से दाह-संस्कार किया और पृथ्वी पर पुष्प बिछाकर रोही के गूदे निकालकर उनका पिण्डदान किया और पितृ-संबंधी मंत्रों का जप करते हुए गोदावरी के जल में उन्हें जलांजलि दी।

और फिर दक्षिण दिशा की ओर आगे बढ□ते चले गए। उनके मार्ग में अनेक दुर्गम वन, नदी-

नाले, ऊंचे पर्वत आये किन्तु वे उन सभी को लांघते हुए आगे बढ□ते रहे। जहां वे थकते वहीं विश्राम के लिए ठहर जाते। इसी प्रकार चलते हुए ये दोनों उदास और विरह व्याकुल भाई मतंग मुनि के आश्रम के पास पहुंच गए।

यहां एक पाताल से भी गहरी गुफा मिली। यहीं अधोमुखी नाम की विशालकाय राक्षसी मिली। वह इनके पास कामतृप्ति की याचना से इन्हें रिझाती हुई आई।

शूर्पणखा की भांति ही लक्ष्मण ने इसके भी नाक, कान और स्तन काट डाले। पता नहीं क्यों अधोमुखी के घायल होकर भाग जाने के बाद भी लक्ष्मण को बुरे शकुन दिखाई देने लगे। हां, बगुले की आवाज से यह भी लग रहा था कि संकट में आने के बाद भी विजय उन्हीं की होगी।

जैसे ही वे वहां से कुछ आगे बढ□, उन्हें एक भीमकाय राक्षस मिला। शरीर पर पैने और तीखे रोम वाला यह राक्षस कबन्ध था। यह बिना गर्दन वाला धड□ मात्र का राक्षस था। लम्बी भुजाओं से उसने राम और लक्ष्मण को अपनी पकड□ में ले लिया।

समय रहते ही लक्ष्मण ने उस राक्षस से छुटकारा पाने के लिए राम से कहा, 'भैया! देखते क्या हो, तलवार से इसकी ये भुजाएं काट दो।'

इससे पहले कि वह राक्षस उन्हें अपना भोजन बनाता, दोनों भाइयों ने उसकी एक-एक भुजा काट दी। भुजा कटते ही कबन्ध का धड□ पृथ्वी पर गिर पड□ा और कहने लगा, 'हे राम! मुझे विश्वास था आप अवश्य आएंगे। मेरा शापग्रस्त जीवन अब समाप्त हो गया। मुझे आपके अतिरिक्त और कोई नहीं मार सकता था।'

'अब आप शीघ्र ही मेरा दाह कर्म कर दें। तभी मैं अग्नि से पवित्र होकर आपकी सहायता योग्य हो पाऊंगा और आपकी विदेह कुमारी की खोज के बारे में ऐसे व्यक्ति का पता बताऊंगा जो इस कार्य में आपका पूरी तरह सहायक होगा।'

यह जानकर राम ने कबन्ध के लिए चिता तैयार करके उसका दाह-संस्कार कर दिया।

राम-सुग्रीव मित्रता और बालि-वध

चिता में जलते हुए कबन्ध के शरीर की राख जैसे-जैसे ठंडी होती गई, वैसे ही उसमें से एक पुरुष अग्नि के समान उठ खड□ा हुआ और आकाश में पहुंचकर उसने कहा, 'हे राम। आप इस समय बुरी ग्रहदशा के शिकार हो रहे हैं। इसी ग्रह के दुष्प्रभाव के कारण आप राज्य से वंचित हुए और अपनी अंतिम घड□ी में आजकल यह ग्रह चल रहा है और इसी के प्रभाव से आपको अपनी भार्या के वियोग का दु:ख सहना पड□ा। इस समय आपके लिए यही श्रेष्ठ है कि आप अपने समान ही दुर्दशा को प्राप्त हुए व्यक्ति को अपना मित्र बनाएं।

'हे राम! इसीलिए मैं आपको सुग्रीव का नाम सुझा रहा हूं। यह महापराक्रमी, बुद्धिमान, सत्यप्रतिज्ञ और महापुरुषों के गुणों से युक्त है। दैव प्रकोप से यह भी आजकल आप ही की भांति संकट में है।

'यह सुग्रीव इस समय हनुमान और जामवन्त के साथ ऋष्यमूक पर्वत पर वास कर रहे हैं। आप उनसे मित्रता करें। वे स्वयं भी इच्छा अनुसार रूप धारण करने वाले हैं और अपने लिए एक सहायक ढूंढ□ रहे हैं। वैसे वे सूर्य के औरस पुत्र हैं और निश्चित रूप से सीता को ढूंढ□ने में आपकी मदद करेंगे। फिर सीता पाताल में हों या सुमेरु पर्वत की चोटी पर, सुग्रीव समस्त राक्षसों का वध करके उन्हें आप तक पहुंचा देंगे।'

कबन्ध यह कहते हुए अन्तरिक्ष में चले गए और राम पंपा सरोवर की ओर बढ□ गए। दूर-दूर तक फैला हुआ यह पर्वत, बड□-बड□ वृक्ष, फल, फूल से सम्पन्न रास्ते, जिनसे होते हुए राम आगे बढ□ रहे थे। धीरे-धीरे सूर्यास्त हो गया।

'तात! यह जो सामने दीपक जल रहा है, यहां अवश्य ही कोई कुटिया है। आज यहीं विश्राम करना होगा।'

यह शबरी का आश्रम था, शायद उसे पहले से ही ज्ञात था कि यहां राम आयेंगे। रास्ते में कुटिया तक धरती पर फूल-ही-फूल बिछे थे, मानो किसी ने पहले से ही स्वागत की तैयारी कर रखी हो।

उस स्वागत को स्वीकार करते हुए राम और लक्ष्मण आश्रम के मुख्य द्वार पर आए। वहां एक सिद्ध तपस्विनी उनके सम्मुख हाथ जोड□कर खड□ी हो गई।

जैसे ही शबरी ने उनके चरण छूने के लिए हाथ आगे बढ□ाए मानो उसे अपने सभी पुष्प फल आज प्राप्त हो गए।

भावुक होकर शबरी ने राम के दर्शनों का सुख पाए हुए मन से राम से कहा, 'हे देव! आज आपका दर्शन मिलने से मेरी तपस्या सिद्ध हो गई। मेरा जन्म सफल हो गया और पूर्वजन्म की पूजा सार्थक हो गई।'

पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् राम मेरे घर पधारे हैं, यह जानकर वह फूली नहीं समा रही थी।

'हे राम! जिस समय आप चित्रकूट पर्वत पर पधारे थे, तब मेरे गुरुजन दिव्य विमान पर बैठकर परम धाम चले गए थे। उन्होंने मुझसे कहा था, राम में अतुल श्रद्धा रखने वाली हे परम साध्वी। तेरी इस तपस्या से प्रसन्न होकर तेरे आश्रम पर राम अवश्य पधारेंगे। 'मैं तो हे भगवन्। तभी से आपके आगमन की प्रतीक्षा में नित्य आस लगाये बैठी थी।'

'यह तो देवी हमने तुम्हारे आश्रम में आने से पूर्व जो फूलों से भरा हुआ तुमने मार्ग बना रखा था, उसे देखकर ही जान लिया कि यह किसी अनन्य भक्त की अथक तपस्या और साधना में लीन भावुक मन का आस्थामय प्रदर्शन है।'

'हे देवी! तुमने जाति से बाहर होने पर भी परमात्मा के जिस तत्त्व को अपनी साधना से पाया है, वह अभूतपूर्व है। मैंने कबन्ध के मुंह से तुम्हारे बारे में सब कुछ सुन लिया है। अब तो तुम मुझे इस वन से परिचित कराओ।'

शबरी के साथ राम ने आश्रम की वेदी, सप्त सागर तीर्थ और शबरी के गुरु का स्थान, सभी का भ्रमण किया।

शबरी को ऐसा लगा जैसे उसकी सारी साधना पूरी हो गई है। अब वह देवलोक को जाने के लिए तैयार हो गई और उसने राम से कहा, 'हे देव। अब मुझे इस देह को त्यागने का आदेश करो। और इसके बाद कुछ ही क्षणों में वह दिव्य अनुलेपन धारण किए, दिव्य वस्त्र-आभूषणों से सुसज्जित विद्युतप्रभा के समान उस प्रदेश को प्रकाशित करती हुई स्वर्ग को चली गई।

राम ने शबरी के गमन के बाद उस अद्भुत वन का पुन: दर्शन किया। यहां पुण्यात्मा महर्षियों का पवित्र आश्रम उनके लिए बड□ा सुखकारी था। क्या आश्चर्य था कि हरिण और बाघ एक-दूसरे के ऊपर विश्वास करते थे।

यहां सातों समुद्रों के जल से भरे हुए तीर्थ में विधिपूर्वक स्नान और तर्पण करके राम ने अनुभव किया जैसे उनके सारे अशुभ नष्ट हो गये हों और कल्याण का समय आ गया हो।

अब वे संकल्प के भाव से पंपा सरोवर के तट पर चले गये।

ऋष्यमूक पर्वत यहां से थोड□ी ही दूरी पर था, जहां सूर्य पुत्र धर्मात्मा सुग्रीव निवास करते थे।

पंपा सरोवर की शोभा बड□ी मनोहारी थी। फूलों से लदे हुए अनेक वृक्ष वहां शोभायमान हो रहे थे और अनेक पक्षी अपने कलरव से वातावरण को गूंजा रहे थे। यह मिलन का अनुकूल वातावरण जानकर राम के मन में सीता के प्रति सहज ही लालसा जाग उठी मानो इस समय प्रिय का न होना उन्हें खटक रहा था, वे और उद्विग्न हो उठे और चलते हुए सरोवर के किनारे आ गए।

सरोवर का स्वच्छ जल देखकर उन्होंने यहां मतंग सरस नाम के कुंड में पहले स्नान किया और फिर उस पंपापुरी में प्रवेश किया, जिसमें कमल शोभायमान हो रहे थे और स्फटिक मणि के समान स्वच्छ जल दिखलाई दे रहा था।

राम ने जब उस मनोहर सरोवर को देखा तो उनके मन में फिर से सीता की व्यथा जाग उठी।

बहुत देर तक राम इसी सरोवर के आसपास की सुंदरता को निहारते हुए चलते रहे। उन्हें याद आया कि आश्रम में जब सीता रहती थीं तो इसके शब्द सुनकर कितनी आनन्दित होती थीं। वह रस्म को भी बुलाकर बहुत देर तक जल-क्रीड□ा किया करती थीं। यहां झुंड-के-झुंड पक्षी चहक रहे हैं, नर कुक्कुट और कोकिलें कलनाद करती हुई मानो अनंग वेदना को उद्दीप्त कर रही थीं।

पर्वत शिखरों पर नाचते मयूर और सीता का वियोग राम के लिए असह्य हो रहा था। वसंत ऋतु में फूलों के भार से झुकी हुई डालियां, भ्रमरों का समूह, रस भरी मादकता आज उन्हें कांटे की तरह चुभ रही थी। मंजरियों से सुशोभित आम के वृक्ष, शृंगार विलास से मदमत मनुष्य की भांति दिखाई दे रहे थे। -सरोवर के किनारे हंस भी क्रीड□ा कर रहे थे।

यह सारा मनोहारी दृश्य देखते हुए राम वैदेही का स्मरण करते हुए बार-बार व्याकुल हो रहे थे।

लक्ष्मण ने उन्हें अत्यन्त चिंतित होते जान कहा, 'हे तात। पहले उस पापी राक्षस का तो पता लगाइए, वह सीता को लौटाता है या अपने प्राणों से हाथ धोता है।'

लेकिन राम का तो उत्साह मानो समाप्त हो रहा था, उनका आत्मविश्वास ही डगमगाने लगा था।

इसी तरह सीता के विरह से व्याकुल राम अपने धनुष को कंधे पर चढ□ाए ऋष्यमूक पर्वत की ओर चलने लगे।

सुग्रीव ने दूर से उन्हें देखकर हनुमान से कहा, 'वीर हनुमान! देखो, मेरे मन में शंका पैदा हो रही है। ये जो दो युवक इधर भ्रमण कर रहे हैं, या तो ये कोई मायावी राक्षस हैं या बालि के भेजे हुए गुप्तचर, जो हमारा अहित करने के लिए इधर आ रहे हैं।'

'राजन। यह आपका वहम मात्र है।'

'नहीं भाई हनुमान। आज से पहले हमने इनको इधर नहीं देखा।'

'तो ये दो अजनबी भी तो हो सकते हैं।' और यह कहते हुए सुग्रीव भयभीत हो गये। उन्हें अपनी दुर्बलात्मा और शत्रु पक्ष की प्रबलता का ज्ञान था। इसीलिए उन्होंने पुन: कहा, 'उस दुर्गम वन में विचरते हुए ये दोनों वीर, मुझे लगता है, अवश्य ही बालि के भेजे हुए हैं और इन्होंने छल से तपस्वी का वेश धारण कर रखा है ताकि हम इन्हें पहचान न सके।'

इसलिए इन दोनों वीरों को देखते ही वे लोग वहां से भागते हुए पर्वत कंदराओं में पहुंच गये।

इन सबकी यह घबराहट देखकर हनुमान ने कहा, 'आप लोग बिना कारण इतने चिंतित हो रहे हैं, इस पर्वत पर बालि के आने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। आप केवल अनावश्यक डर रहे हैं। आप यह क्यों नहीं मानते कि इस वन प्रदेश में कोई अपरिचित तपस्वी भी भ्रमण के लिए आ सकता है।'

'देखो हनुमान! इनके धनुष-बाण और तलवार क्या तुम्हें साधारण तपस्वी के हथियार नजर आ रहे हैं। मैं तो यह मानता हूं कि ये अवश्य ही कोई देव कुमार हैं और क्योंकि राजाओं के तो

बहुत से मित्र होते हैं, इसलिए ये बालि के हित में ही यहां घूम रहे हैं।' 'व्यक्ति को छली रूप में घूमने वाले शत्रुओं को पहचानने की चेष्टा करनी चाहिए क्योंकि वे दूसरों पर अपना विश्वास जमा लेते हैं और समय आने पर विश्वास के सहारे ही प्रहार कर बैठते हैं। और तुम तो जानते हो कि बालि बड□ा कुशल और दूरदर्शी है, वह धोखा देने में भी प्रवीण है, इसलिए हमें ऐसे गुप्तचरों को जानने का प्रयत्न करना चाहिए।' यह कहते हुए सुग्रीव ने भयातुर मन से हनुमान को उनका परिचय जानने के लिए भेजा और कहा, 'तुम एक साधारण पुरुष की भांति उनकी चेष्टाओं से उनका मंतव्य जानकर आओ।' भला रामभक्त हनुमान को अपने प्रभु को पहचानने में कैसे भूल हो सकती थी, लेकिन फिर भी वह कुशल मंत्री थे, इसलिए राजा का आदेश तो मानना ही था।

हनुमान अपने कपि रूप का परित्याग कर सामान्य तपस्वी का रूप धारण करके राम और लक्ष्मण के सम्मुख उपस्थित हुए।

दोनों रघुवंशी वीरों के पास जाकर हनुमान ने बड□ी श्रद्धा के साथ पहले उनको प्रणाम किया और विधिवत पूजन किया और बोले, 'हे वीरवर। आप दोनों देवों के समान शोभा बढ□ाने वाले इस निर्जन स्थान में किस प्रयोजन से पधारे हैं? मुख की शान्ति से आप बड□ धैर्यशाली और राजपरिवार के लगते हैं, आपकी भुजाएं विशाल हैं। आपके अंगों पर यह तापसी वेश यहां के वन प्राणियों को अपरिचित लग रहा है। क्या आप कृपा करके अपना परिचय देंगे।

'हे सिंह दृष्टि और महापराक्रमी वीरों। आप निश्चय ही शत्रु को नष्ट करने की शक्ति रखते हैं, आपके आने से यह ऋष्यमूक पर्वत जगमगा गया है। आप इस दुर्गम प्रदेश में किस कारण से पधारे हैं, आपकी यह वय तो राजमहलों में वैभव-विलास में बिताने की है। तो फिर आप किसलिए इतने कठिन तप में प्रविष्ट हुए हैं।'

राम और लक्ष्मण से इस प्रकार जब हनुमान ने बातें कीं तो उन्होंने कहा, 'हे विप्र महोदय! हम अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र राम और लक्ष्मण हैं। माता के आदेश पर हम लोग चौदह वर्ष के लिए बनवास काल व्यतीत करते हुए सुख से जीवन व्यतीत कर रहे थे। अभी कुछ दिन पहले हमारी प्राणप्रिया सीता को कोई दुष्ट राक्षस चुराकर ले गया है, उसी को ढूंढ□ते हुए हम यहां निकल पड□ हैं।'

यह जानकर हनुमान को विश्वास हो गया, तब वह तुरंत ही अपने वास्तविक रूप में आकर वास्तविक परिचय देते हुए बोले, 'हे देव! मैं तो आपका चिर सेवक पवनपुत्र हनुमान हूं। मेरे स्वामी महाराज सुग्रीव के भेजे मैं यहां आया हूं। धर्मात्मा सुग्रीव आपसे मिलकर बड□ सुखी होंगे। उन्हें उनके बड□ भाई बालि ने क्रोधित होकर राज्य से निष्कासित कर दिया है और उनकी पत्नी को छीन लिया है। वे भी इस समय पत्नी-वियोग में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। चलिए आपसे मिलकर वे अत्यन्त प्रसन्न होंगे।'

'हे राम! सुग्रीव और आपकी मित्रता आप दोनों के लिए अत्यन्त सुखकारी है। मैं तो जैसा चाहूं रूप धर सकता हूं, जहां चाहूं जा सकता हूं इसीलिए इस समय महाराज सुग्रीव के आदेश पर मैं भिक्षुक के रूप में आपका परिचय पाने आया था।'

लक्षण ने राम से परामर्श करके हनुमान से कहा, हे महामना, सुग्रीव के गुण हमें ज्ञात हो चुके हैं। वास्तव में हम उन्हीं से मिलने की इच्छा लेकर यहां पधारे हैं, आपने जो सुग्रीव से मित्रता वाली बात की है, वह हमें स्वीकार है।'

यह सुनकर हनुमान अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन दोनों की प्रशंसा करने लगे और बोले, 'हे देव। यह बड□ सौभाग्य की बात है कि आप महाराज सुग्रीव से मिलने की इच्छा लेकर ही यहां आए हैं। कैसा संयोग है कि आप महाराज सुग्रीव से मित्रता चाहते हैं और महाराज सुग्रीव आपसे। अब मुझे यह निश्चय हो गया है कि महाराज सुग्रीव शीघ्र ही अपना खोया हुआ राज्य पा लेंगे और जिस प्रयोजन से आप यहां पधारे हैं, सुग्रीव की सहायता से कार्य भी सिद्ध हो जाएगा।'

इस प्रकार परस्पर परिचय के क्रम को आगे बढ□ाते हुए राम ने कहा, 'कबन्ध नाम के दैत्य ने हमें यह बताया था कि वानरराज सुग्रीव ही आपकी पत्नी का अपहरण करने वाले राक्षस का पता लगा देंगे, इसीलिए हम आपकी शरण में आए हैं।'

अब तो हनुमान अत्यन्त प्रसन्न होकर उन दोनों राजकुमारों के साथ वायुवेग से चलते हुए ऋष्यमूक पर्वत पर आ गए जहां से उन्होंने सबसे पहले इन राजकुमारों को आते हुए देखा था। राम और लक्ष्मण को वहां छोड□कर वे फिर उस स्थान पर गए जहां सुग्रीव अपने मंत्रियों सहित छिपे हुए थे।

हनुमान ने सुग्रीव को इनका विधिवत पूरा परिचय दिया और कहा, 'हे महाराज। मैंने आपसे पहले ही कहा था कि ये लोग बालि से संबंधित नहीं हैं। ये तो महाराज दशरथ के पुत्र हैं, महाराज की मंझली रानी कैकेयी ने अपने दो वरदान मांगते हुए एक में अपने पुत्र भरत के लिए राजतिलक मांग लिया और दूसरे में राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास। ये राम अपने अनुज लक्ष्मण और सीता के साथ वन को आ गए।'

'तो इनकी पत्नी कहां है?' सुग्रीव ने पूछा।

'उसे कोई राक्षस दस्यु अकेला पाकर हर कर ले गया है और इसीलिए ये दोनों भाई बड□ व्यग्र, हताश और शोक संतप्त हैं। कबन्ध राक्षस ने ही इनको यह बताया है कि यदि आपसे इनकी मित्रता हो जाए तो निश्चय ही आप इनकी पत्नी को खोजने में सहायता करेंगे।'

हनुमान से यह जानकर सुग्रीव तुरंत ही अपने मंत्रियों सहित राम की सेवा में उपस्थित हो गये और बड□ स्नेहपूर्वक उनका स्वागत करते हुए बोले, 'हे प्रभु। आपके विषय में मैंने वीर हनुमान से सब कुछ जान लिया है। मैं वानर हूं और आप नर हैं, इसीलिए आप मुझसे मैत्री करना चाहते हैं, यह भी मेरे लिए अहोभाग्य की बात है। मैं अपने ये हाथ मैत्री के लिए फैलाता हूं।'

राम ने सुग्रीव के दोनों हाथों को अपने हाथों में पकड□कर प्रेम से दबाया और भाव भरे मन से सुग्रीव को हृदय से लगा लिया।

इस मैत्री के समय हनुमान ने मैत्री की प्रगाढ□ता के लिए दो लकडि□यों को रगड□कर

अग्नि प्रज्ज्वलित की और फूलों द्वारा अग्नि का पूजन किया और राम और सुग्रीव की मैत्री की साक्षी के लिए अग्नि को उपस्थित कर दिया।

इसके पश्चात दोनों मित्रों ने अग्नि की परिक्रमा की।

लक्ष्मण इस मित्रता को देखते हुए अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे। राक्षस रावण द्वारा सीता के अपहरण के बाद आज पहली बार दो मित्रों के इस मिलन के अवसर पर थोड□ी-बहुत प्रसन्नता हुई। बड□ा सुखद समय था यह, सुग्रीव के लिए भी, क्योंकि राम की मित्रता पाकर वह अपने-आपको अधिक सबल अनुभव करने लगे।

सुग्रीव ने अधिक पत्तों और फूलों वाली एक शाल वृक्ष की डाल तोड□कर उसे जमीन पर बिछाया और राम से आग्रह किया कि वे आसन ग्रहण करें। इसके बाद वीर हनुमान ने चंदन वृक्ष की एक डाली तोड□कर लक्ष्मण को बैठने के लिए स्थान दिया।

दोनों के यथास्थान बैठने पर सुग्रीव ने अपने हाल ही में बने मित्रों का यथाशक्ति आतिथ्य सत्कार किया और फिर थोड□ी शांति के बाद राम से कहा, 'प्रिय मित्र। हनुमान ने आपको मेरे बारे में थोड□ा परिचय दिया होगा, मेरे बड□ भाई बालि ने मुझे घर से निकाल दिया है और मेरी पत्नी भी मुझसे छीन ली है। उससे डर कर ही मैं इस दुर्गम पर्वत पर आतंकित और उपेक्षित-सा जीवन जी रहा हूं। उसने मुझसे कट्टर शत्रुता बांध ली है। हे महाभाग, आप मुझे अपना सेवक जानकर बालि के भय से अभयदान दें और यह काम आप जैसा धर्म-वत्सल तेजस्वी क्षत्रिय ही कर सकता है।'

'हे मित्र! मैं जानता हूं कि मित्र उपकार रूपी फल वाला होता है, इस दुर्गम वन में और इस छोटे से परिचय में तुमने मुझ पर जो विश्वास जताया है मैं तुम्हें उसी का वास्ता देते हुए कहता हूं कि तुम्हारी पत्नी का अपहरण करने वाले बालि का मैं वध कर दूंगा। शायद तुम नहीं जानते कि मेरे तूणीर में सूर्य के समान अनेक तेजस्वी बाण हैं, जिनका वार कभी खाली नहीं जाता। इन बाणों में कंक पक्षी के परों के पंख लगे हुए हैं। इनके अग्रभाग इतने तीखे और गठीले हैं कि जब ये रोष में भरकर छूटते हैं तो सांप के समान फुफकार मारते हुए शत्रु को डसने में कोई विलंब नहीं करते। ये इन्द्र के वज्र के समान भयंकर चोट करने वाले हैं।

'हे मित्र। तुम देखना इन विषधर सर्पिल, तीखे बाणों की मार से घायल होकर बालि किस प्रकार छटपटाता हुआ धरती पर गिर पड□गा।'

राम से इस प्रकार आश्वस्त होकर सुग्रीव को काफी संतोष हुआ और वह बोले, 'हे राम। आपकी कृपा से यदि मैं अपनी प्रिय पत्नी और राज्य को प्राप्त कर सकूंगा तो निश्चय ही मेरे लिए परम सौभाग्य की बात होगी। मैं भी आपको विश्वास दिलाता हूं कि जैसे किष्किन्धा पर मेरा आधिपत्य हो जाएगा, वानरों की समस्त सेना आपके अधीन हो जाएगी और फिर शीघ्र ही हम उस मायावी दुष्ट राक्षस का पता लगाने में सफल हो जायेंगे।'

'हे राम। मेरे परम प्रिय सखा और विशिष्ट मंत्री महात्मा हनुमान आपके विषय में मुझे सारा वृत्तान्त बता चुके हैं। जिस प्रकार छल से देवी सीता का अपहरण किया गया है और उस नीच

राक्षस ने आपको पत्नी-वियोग का कष्ट दिया है, मैं विश्वास दिलाता हूं कि आपकी भार्या पाताल में हो या आकाश में चाहे संसार के किसी भी कोने में हो, वानर, भील, रीछ आदि से सज्जित मेरी सेना चारों तरफ फैल जाएगी। चारों दिशाओं से जो भी उसका पता लगायेगा उसी के अनुरूप हम आक्रमण की योजना बनायेंगे।'

कुछ सोचते हुए सुग्रीव ने कहा, हे महाराज! एक बात बताइए कि आपकी पत्नी अभी मास के अंदर ही तो नहीं अपहृत की गई।'

'हां, अभी एक पखवाड□ से अधिक नहीं बीता है।'

'अरे, तो फिर मुझे याद आता है। उस दिन मैं कुछ चिंतित और उदास था और बालि के आतंक से ग्रस्त भी, तभी मैंने देखा था कि कोई दुष्ट राक्षस बलात् खींचते हुए किसी स्त्री को आकाश मार्ग से ले जा रहा था और वह टूटे स्वर में हा राम! हा लक्ष्मण! ही कह रही थी और वह अबला नारी पुकारती-छटपटाती हुई बेबस एक पिंजरे में बंदी पक्षी की तरह फड□फड□ा रही थी।

'उस समय उसने कुछ आभूषण और कोई वस्त्र आकाश-मार्ग से गिराया था। वीरवर हनुमान। वे वस्तुएं तुमने शायद अपने किसी सेवक के द्वारा उठवाईं थीं, जरा उनको मंगवाओ।' तभी एक सेवक के द्वारा हनुमान ने शीघ्र ही उन्हें वहां उपस्थित किया। इसके साथ ही हनुमान और सुग्रीव आदि अपने भीतरी गुफा प्रदेश में गए और वह वस्त्र और आभूषण देखने लगे।

राम ने जैसे ही वे वस्त्र और आभूषण देखे, उन्हें यह विश्वास हो गया कि ये तो जनकसुता के ही हैं और उन्हें देखते ही राम ने जो हिचकियां लेकर विलाप करना शुरू किया, सुग्रीव तो भौचक्के रह गये और हनुमान सोचने लगे कि यह भी प्रभु की क्या माया है? जो त्रिलोक में सबको सांत्वना देते हैं, सबका हित करते हैं, वे ही राम आज इन वस्त्र और आभूषण को देखकर भावविह्वल होकर विलाप कर रहे हैं।

अचानक धैर्य खोते हुए राम पृथ्वी पर गिर पड□। तुरंत लक्ष्मण ने उन्हें संभाला और कहा, 'तात! धीरज रखिए, हम अपने लक्ष्य की ओर आगे बढ□ रहे हैं। जानकी जहां भी हैं, सुरक्षित हैं, यह आप निश्चय मानिए।'

'लक्ष्मण। जरा पहचानने का प्रयास करो, ये कुंडल, ये कर्णफूल, ये गले का हार देवी सीता के ही तो हैं।'

लक्ष्मण ने विनम्र होकर कहा, 'हे तात। भला मैं इन कुंडलों या गले की माला के बारे में क्या जानूं! हां, ये नूपुर तो मैं पहचानता हूं जो भाभी के पैर में सदा शोभायमान रहते थे।'

कुछ संयत होकर राम ने कहा, 'हे सुग्रीव! यह तो तुम अवश्य जानते होगे कि वह दुष्ट राक्षस, देवी सीता को किस दिशा की ओर ले गया है? उसने मैथिली का अपहरण करके निश्चय ही अपने जीवन का अंत बुला लिया है।'

सुग्रीव तो स्वयं उस समय अपने भाई बालि के आतंक से आतंकित थे। उसे यह समाचार भी उसके सचिवों ने ही दिया था कि कोई राक्षस किसी स्त्री को आकाश मार्ग से ले जा रहा है,

क्योंकि वह स्वयं परेशान थे, इसलिए वह यह देख ही नहीं पाये कि वह दिशा उत्तर की थी या पश्चिम की, फिर भी सुग्रीव ने कहा, 'हे प्रभु, वह राक्षस कहां रहता है, उसमें कितनी शक्ति है, यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन वह कहीं भी हो, मैं उसका पता अवश्य लगा लूंगा। आप इसके बारे में निश्चिंत रहें, यह मैं आपसे प्रतिज्ञा करके करता हूं। आप शोक त्याग दें।'

'मैं आपके संतोष के लिए यह अवश्य कहूंगा कि अपने सैनिकों सहित उस दुष्ट रावण का वध करके अपना ऐसा पुरुषार्थ प्रकट करूंगा जिससे आप शीघ्र ही प्रसन्न होंगे, क्योंकि मैं आपकी पीड□ा जानता हूं। मुझे भी पत्नी के महान विरह का भान है, मैं स्वयं इसी शोक से दग्ध हूं। यद्यपि मैं एक साधारण वानर हूं फिर भी अपनी सामर्थ्य से अधिक आपके दु:ख-निवारण का उपाय करूंगा और आप तो ज्ञानी हैं, यह जानते भी हैं कि जो व्यक्ति शोक का अनुसरण करते हैं, उन्हें सुख नहीं मिलता, इसलिए धैर्य धारण करते हुए आप शोक का त्याग करें।'

विनम्र भाव से सुग्रीव ने कहा, 'मैं आपको यह उपदेश नहीं दे रहा, बल्कि मित्रता के नाते यह मेरा परामर्श है।'

'हे सुग्रीव। एक मित्र को मित्र के लिए वही करना चाहिए जिसमें उसका हित हो और यही तुमने किया है। मैं तुम्हारा आभारी हूं और मैंने जो तुम्हें बालि का वध करने की बात की है, यह मेरा अभिमान नहीं, मेरी शक्ति-सामर्थ्य है।'

सुग्रीव ने राम के पूछने पर उन्हें विस्तार से बालि और स्वयं के बैर के बारे में पूरी कहानी सुना दी।

'निश्चय ही इसमें तो तुम बिलकुल निरपराध हो। बालि ने भ्रम में तुमसे बैर साधा है। यह कोई अक्षम्य अपराध नहीं था। लगता है कि उसे अपने बल पर घमंड है।'

'अच्छा सुग्रीव। अब मैं पहले तुम्हारे ही कष्ट का निवारण करता हूं। यह कहते हुए राम ने कहा, देखो, तुम मेरे कहने से एक बार किष्किन्धा जाओ और वहां जाकर बालि को ललकारो। मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूं लेकिन युद्ध में मैं तुम्हारे साथ नहीं रहूंगा। मैं वहीं पीछे शाल के वृक्ष के पीछे रहूंगा और अवसर पाकर वहीं से बालि का वध कर दूंगा। और देखो, तुम मेरे बल के बारे में संदेह मत करो। यह कहते हुए राम ने ही एक ही बाण से सात शाल के वृक्षों में से गुजारते हुए अपना बाण छोड□ दिया।

यह देखकर निश्चिंत रूप से सुग्रीव को राम के बल पर विश्वास हो गया। उसे मन-ही-मन बड□ी प्रसन्नता हुई। अब उसने राम को साष्टांग प्रणाम किया और उनसे आशीर्वाद लेता हुआ वह बालि को ललकारने के लिए चल दिया।'

सुग्रीव ने अपना लंगोठ कसकर राम के विश्वास के सहारे बालि को बुलाने के लिए भयंकर गर्जना की। ऐसा सिंहनाद किया मानो वे आकाश को फाड□ डालेंगे।

बालि प्रकोष्ठ में भीतर अपने विलास में मस्त था लेकिन उसने जब द्वार पर चुनौती भरी गर्जना सुनी तो वह कुछ क्षण के लिए विचलित हुआ। उसे लगा कि यह आवाज तो सुग्रीव की है, आज क्या उसकी मृत्यु उसे यहां खींचकर ले आई है।

वह अपने महल से बाहर आया तो उसने देखा कि वास्तव में सुग्रीव ही अपनी गदा कंधे पर उठाए बंदर की तरह उछाल रहा है।

'अरे मूर्ख। क्या तेरी मौत तुझे यहां खींच लाई, जो तू मुझे चुनौती देने आया है। कल तक तो पर्वतों की गुफा में छिपता फिरता था, आज तुझमें यह साहस कहां से आ गया?'

'मेरे साहस की छोड□, अपनी खैर मना भाई। तूने मुझे छोटा भाई समझकर मुझ पर बहुत अन्याय किए हैं, अब मैं तुझे उन सबका दंड देने आया हूं मुझसे युद्ध कर।' फिर तो बालि और सुग्रीव में बड□ा भयानक युद्ध छिड□ गया।

श्रीराम ने जब हाथ में धनुष लेकर ताड□ वृक्ष के पीछे खड□ होकर बालि को मारने के लिए अपना निशाना साधा तो वे तो अचम्भे में पड□ गए। यह तो उन्हें अनुमान ही नहीं था कि दोनों भाई एक ही वेशभूषा में होंगे और अश्विनी भाइयों की तरह उनकी सूरतें इतनी मिलती होंगी कि पहचानना ही दूभर हो जाए।

अब राम के सामने समस्या आ गई कि यदि उन्होंने प्राणान्तक बाण छोड□ दिया और यह गलती से सुग्रीव को लग गया तो अनर्थ हो जाएगा। इसलिए उन्होंने बाण छोड□ने का विचार स्थगित कर दिया।

इस बीच सुग्रीव आश्चर्य में था कि राम ने अब तक बालि पर प्रहार क्यों नहीं किया, क्योंकि वह तो काफी थक चुका था और उसके पांव उखड□ गए थे।

जब उसका सारा शरीर लहूलुहान हो गया और बालि की घातक मार से वह अचेत-सा होने लगा तो वह भाग खड□ा हुआ।

बालि ने पुकार कर कहा, 'ठहर कायर! कहां जाता है? मुझे चुनौती देने आया था, डरपोक बुजदिल।' और फिर बालि भी अपने महल में लौट गया।

कुछ सुस्ताने पर लौटते हुए सुग्रीव को जब राम मिले तो उन्होंने कहा, 'वाह मित्र! आज तो यदि मैं भाग खड□ा न होता तो मेरी जान ही चली गई थी, आज तो आपने मुझे खूब पिटवाया।'

सुग्रीव को तो राम पर क्रोध आ रहा था, इसलिए उसने कहा, 'हे मित्र। यदि आपको बालि को नहीं मारना था तो मुझे पहले ही बता दिया होता, कम-से-कम मेरी यह दुर्गति तो न होती।'

शान्त स्वर में राम ने कहा, 'देखो मित्र! बात को समझो, इससे पहले मैंने बालि को नहीं देखा था, जब तुम उससे लड□ने के लिए गए और तुम दोनों जूझे तो मेरे सामने यह संकट खड□ा हो गया कि मैं तुममें से किसे मारूं। क्योंकि तुमने मुझे यह तो बताया ही नहीं था कि मेरी और बालि की शक्ल मिलती-जुलती है।'

'तुम दोनों की यह समानता देखकर मैं तो संकट में पड□ गया क्योंकि यदि मैं बाण चलाता और वह गलती से तुम्हें लग जाता तो कितना बड□ा अनर्थ हो जाता, तब तो हमारे उद्देश्य का ही नाश हो जाता।'

'हे मित्र! इस वन में हम तुम ही लोगों के आश्रय में तो हैं। इसलिए अनर्थ को रोकने के कारण मुझे अपना बाण रोकना पड□ा। हे वानर राज, अपनी पहचान के लिए अब तुम ऐसा कोई चिह्न

धारण करो जिससे उसके साथ युद्ध करते समय मैं तुम्हें पहचान सकूं।'

तभी सामने झूलती हुई एक गजपुष्पी लता को देखकर राम ने कहा, ' हे लक्ष्मण तुम यह माला सुग्रीव के गले में पहना दो।'

आदेश पाते ही लक्ष्मण ने वह माला सुग्रीव के गले में पहना दी।

'हे वानर राज! तुम इस विश्वास के साथ बालि को चुनौती दो कि वह ही मेरे बाण का आहार बनेगा। तुम्हारा यह गजपुष्पी चिह्न तुम्हारी पहचान है। यदि कोई ग्रह ही उलटा हो जाए तो बात दूसरी है अन्यथा आज युद्धस्थल में तुम बालि का शव देखोगे।'

अब फिर सुग्रीव ने जाकर बालि को ललकारते हुए कहा, 'अरे नीच। अगर हिम्मत है तो एक बार फिर मुझसे मुकाबला कर।'

बालि इस समय अपने अन्त:पुर में था। सुग्रीव की यह आवाज सुनकर बालि की पत्नी तारा ने अमंगल भांपते हुए उसे रोकना चाहा, लेकिन अपने दर्प में चूर बालि ने उसकी एक न सुनी।

तारा ने पत्नी को समझाते हुए कहा, 'हे स्वामी! अयोध्या नरेश के दो पुत्र राम और लक्षण वन में आए हुए हैं। वे साधु पुरुषों के, आश्रयदाता कल्पवृक्ष के समान हैं और मुझे लगता है कि वे सुग्रीव के सहायक हैं। यदि आज मेरी बात मानें तो सुग्रीव को शीघ्र ही युवराज पद पर अधिष्ठित कर दीजिए। वे आपके छोटे भाई हैं। भाई के साथ क्या बैर? और फिर आप तो क्षमा करने के अधिकारी हैं।'

तारा को झिड□कते हुए बालि ने कहा, 'तुम्हें उसकी ललकार नहीं सुनाई दे रही, इस पर भी मुझसे न्याय की अपेक्षा करती हो।'

बालि तारा की अवहेलना करते हुए सुग्रीव से भिड□ने के लिए आ गया।

अब सुग्रीव पहले से अधिक आश्वस्त था, लेकिन बालि के वेगपूर्ण मुक्के का प्रहार न सह सका और उसके मुंह से खून निकल आया फिर भी उसने साहस करके एक शाल वृक्ष को उखाड□कर बालि पर दे मारा।

राम ने देखा कि सुग्रीव कमजोर पड□ रहे हैं तो उन्होंने वहाँ से अपना कालचक्र बालि पर फेंक मारा। उस बाण के लगते ही बालि धराशायी होकर जमीन पर गिर पड□ा और आर्तनाद करने लगा।

लक्ष्मण को साथ लेकर जब राम बालि की इस अवस्था में उनके समीप आए तो बालि ने कहा, 'हे राम! आप तो धर्म के रक्षक थे, मैंने आपका क्या अपराध किया है, जो आपने इस प्रकार मुझे छल से मारा?'

'वास्तव में तारा ने सही पहचान लिया था, लेकिन मैंने उसकी बात पर कान नहीं दिए। आपने तो धर्म का चोला दिखावे के लिए पहन रखा है। वास्तव में तो आप अधर्मी हैं।'

बालि के इस अनर्गल प्रलाप को सुनकर भी राम को क्रोध नहीं आया और बोले, 'हे वानर राज। तुम मुझे जिस धर्म की दुहाई दे रहे हो, तुम स्वयं धर्म, अर्थ, काम और लौकिक सदाचार

को नहीं जानते। तुमने-अपने जीवन में अर्थ और काम को महत्त्व देकर जो अपने बड□ भाई के रूप में छोटे का शोषण किया है, क्या तुम उसे धर्म के तुल्य मानते हो? सुनो, तुम सनातन धर्म का त्याग करके अपने छोटे भाई की स्त्री को अपने घर में रखते हुए लज्जा का अनुभव नहीं करते? तुम्हारा यह धर्म से भ्रष्ट स्वेच्छाचारी रूप ही तुम्हारे इस मरण का कारण है।'

'सुग्रीव मेरा मित्र है, वह मेरे लिए लक्ष्मण के समान है। मैंने इसे अधिकार दिलाने का प्रण किया था। अत: तुम्हें जो दंड दिया गया है, वह धर्म के अनुकूल है।'

राम के ऐसा कहने पर बालि को अपने दोष का ज्ञान हुआ और उसने कहा, 'हे राम! आप सच कह रहे हैं, अब मुझे लगता है कि मैं ही अपराधी हूं।'

फिर विनय भरे स्वर में बालि ने कहा, 'हे राम! मेरा यह एक मात्र बालक अंगद अब आपकी सेवा में है, कृपया इसे सुग्रीव के समान ही जानें।'

और फिर सुग्रीव की ओर देखकर बालि ने कहा, 'प्रिय भाई! अब मैं अंतिम प्रयाण पर हूं, मैंने तुम्हारे साथ बहुत अन्याय किया है, फिर भी तुमसे एक निवेदन करना चाहता हूं। मेरी अनुपस्थिति में तारा की स्थिति बड□ी शोचनीय हो जाएगी, तुम मेरे अपराध का दंड उसे मत देना।' और इस प्रकार गले से स्वर्ण माला निकालकर सुग्रीव को देते हुए कहा, 'मेरे भाई। बड□ भाई की ओर से, जीवन के अंत में ही सही, यह एक छोटी-सी भेंट स्वीकार करे। अब तो सब कुछ तुम्हारा ही है, मेरे पास तो देने के लिए यह माला ही है।' भाई से वैमनस्य समाप्त होने पर अब सुग्रीव को अपने भाई के मारे जाने का बहुत दु:ख हुआ क्योंकि वही तो उसके वध का काल बना था।

बालि की पत्नी तारा ने जब मरे हुए स्वामी पर दृष्टिपात किया तो वह कटे वृक्ष की तरह गिर पड□ी किन्तु राम के समझाने और धीरज बंधाने पर वह इसे भाग्य का दोष मानकर संतोष कर गई।

स्वयं सुग्रीव भी अब अपने भाई के वध पर पश्चात्ताप कर रहा था, लेकिन होनी को कोई नहीं रोक सकता था संतोष के लिए इससे अधिक कोई सहारा भी तो नहीं था। राम ने अंगद, सुग्रीव और तारा, तीनों को ही अनेक प्रकार से समझाते हुए जीवन की ओर प्रेरित किया।

बालि का राजकीय सम्मान के साथ अंतिम संस्कार किया गया। इसके अतिरिक्त कोई और चारा भी नहीं था। क्योंकि काल के आगे किसी का कोई वश नहीं चलता।

इसके पश्चात् सभी ने उस पवित्र आत्मा के लिए जलांजलि दी और तुंगभद्रा नदी पर स्नान करके सभी कार्य सम्पन्न किए।

राम के आदेश पर ही अंगद को किष्किन्धा नगरी का युवराज बनाया गया और सुग्रीव राम की ही आज्ञा से उस किष्किन्धा पुरी में विराजमान हुए जिसका स्वामी बालि था। राम के सहयोग से तब वानर-राज सुग्रीव किष्किन्धा में राज्य-संचालन करने लगे। राम लक्ष्मण के साथ प्रस्रवण गिरि पर चले गये।

सुग्रीव के राज्य पर आसीन होने के कुछ समय पश्चात ही वर्षा ऋतु का प्रारम्भ हो गया। सभी

मार्ग लगभग रुक गए। इसलिए सीता की खोज का कार्य भी व्यवस्थित रूप से नहीं हो पाया।

लेकिन राम को चैन कहां था, वह तो सीता का स्मरण करते हुए अत्यन्त आकुल रहते थे, उन्हें तो विरह व्याकुल सीता का ही ध्यान रहता था।

राम को इस प्रकार व्यथित और चिंतित देखकर एक दिन लक्ष्मण ने कहा, 'हे तात! आप तो कर्मठ, वीर, आस्तिक और धर्मात्मा हैं, अत: आपको इस प्रकार एक सामान्यजन की भांति शोक नहीं करना चाहिए क्योंकि इस प्रकार व्यथित होने से कोई लाभ नहीं है। आप तो समस्त परिवार सहित राक्षसों का नाश करने के लिए सक्षम हैं। समुद्र, वन और पर्वतों सहित जब आप इस समूची सृष्टि को नाश के कगार पर ला सकते हैं तो फिर एक रावण का वध आपके लिए क्या बड□ी बात है, फिर आप चिंतित क्यों हैं? और फिर हे रघु-कुलभूषण, इस समय तो वैसे भी वर्षाकाल आ गया है, सभी मार्ग अवरुद्ध हो चुके हैं, कहीं भी आवागमन संभव नहीं है, इसके लिए कम-से-कम शरद ऋतु की प्रतीक्षा तो करनी ही होगी।'

लक्ष्मण के इस प्रकार कहने पर राम को यह तर्क समझ में आ गया और बोले, 'अच्छा भाई! ठीक है, मैं शरद काल की प्रतीक्षा करूंगा।'

'इसी में हमारा हित है राघव। और मुझे विश्वास है कि समय आते ही सुग्रीव शीघ्र ही आपका मनोरथ पूरा करेंगे। क्योंकि जब हमने इतने समय तक अपने मन को धीरज बंधाया है तो कुछ समय और भी हमें सुग्रीव को अवसर देना ही होगा।'

और इस तरह सीता की खोज का कार्यक्रम वर्षाकाल की समाप्ति तक के लिए स्थगित कर दिया गया।

सीता की खोज और लंका दहन

वर्षाकाल के बीतने पर भी जब सुग्रीव की ओर से राम की कोई खोज-खबर नहीं ली गयी तो राम को चिन्ता हुई। उन्होंने तुरन्त ही लक्ष्मण के द्वारा सुग्रीव को बुलाने भेजा। वे समझ रहे थे, सुग्रीव काम में आसक्त उनके प्रति अपने दायित्व को भुला बैठा है। लक्ष्मण को क्रोध में आया जान सुग्रीव तो घबरा गया क्योंकि उसने सीता की खोज के लिए जो समय दिया था वह तो उसने प्रमाद में बिता दिया था।

लक्ष्मण ने जब किष्किन्धा में प्रवेश किया तो अत्यंत रमणीय प्रदेश देखकर एक क्षण को लक्ष्मण ठिठक गए किन्तु उस समय तो वे केवल राजा सुग्रीव को उसके कर्तव्य का बोध कराने आए थे अत: यह सुन्दरता भी उन्हें प्रभावित नहीं कर सकी।

लक्ष्मण के क्रोध को शान्त करने के लिए सुग्रीव ने अपनी भाभी तारा को भेजा। तारा ने लक्ष्मण को समझाते हुए कहा, 'वास्तव में बहुत दिनों के बाद प्राप्त स्त्री सुख के कारण सुग्रीव से प्रमाद अवश्य हुआ है किन्तु उसने कुछ नहीं किया-ऐसा नहीं है। अपनी सेना के महत्त्वपूर्ण सैनिकों को और पड□ोसी वीरों को एकत्रित करने के लिए सुग्रीव ने पन्द्रह दिन पूर्व ही संदेश भिजवाया है। वे सभी लोग आ ही रहे हैं। उनके आते ही उन्हें सीता की खोज के लिए इधर-उधर भेजा जाएगा। एक मास के भीतर ही सीता की खोज का कार्य पूरा कर लिया जाएगा। इसके लिए आप आश्वस्त रहें।' इस तरह तारा ने लक्ष्मण का क्रोध शांत किया।

सुग्रीव ने सेना के आगमन की सूचनाएं भिजवा दी हैं यह जानकर लक्ष्मण को संतोष हुआ। चलो कुछ तो इस दिशा में आगे बढ□ हैं।

उस वानर सेना के आने पर ही उन्हें दिशाओं में खोज के लिए भेजा जाएगा। सुग्रीव को उनके आने की अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड□ी। समाचार पाते ही चारों दिशाओं से सभी वानर, भालू आदि सुग्रीव की सेवा में उपस्थित हो गए।

अब लक्ष्मण को लेकर सुग्रीव श्रीराम की सेवा में पहुंचे और उनसे कहा, 'हे राम! देरी के लिए क्षमा। यह विशाल वानर, भालू आदि सुग्रीव की सेवा में उपस्थित हो गए।' राम ने यह देखा तो वे सन्तुष्ट होकर कहने लगे, 'हे वीर! अब इन्हें शीघ्र ही चारों दिशाओं में भेजकर सीता के बारे में पता कराओ।'

यह सुनकर सुग्रीव ने हनुमान तथा अंगद आदि के समूह को दक्षिण दिशा में सीता की खोज का कार्य सौंपा। विन्दत को पूर्व दिशा में, तारा के पिता सुषेण को पश्चिम दिशा में तथा शतबलि को उत्तर दिशा की ओर भेजा।

इस प्रकार चारों दिशाओं में पर्वतों, नदियों और गुफाओं को पार करते हुए ये सभी वीर सीता की खोज के लिए चल दिए।

सुग्रीव ने हनुमान को सीता की खोज के लिए विशेष रूप से भेजा और कहा, 'हे वीर! तुम नीतिशास्त्र के पंडित हो, तुम्हारी गति जल में भी अवरुद्ध नहीं होती, इस पूरे-भूमंडल का तुम्हें

सारा ज्ञान है, इसीलिए सीता की उपलब्धि के लिए अब और क्या करना चाहिए, वह उपाय हमें बताओ।'

राम ने यह जानकर कि निश्चय ही हनुमान इस कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हैं उन्हें अपनी अंगूठी देते हुए कहा, 'हे वानर श्रेष्ठ, इस चिह्न के द्वारा सीता को अवश्य विश्वास हो जाएगा कि तुम मेरे ही पास से आए हो।'

हनुमान ने वह अंगूठी लेकर श्रीराम को प्रणाम किया और वे अपने साथ विशाल सेना को लेकर सीता की खोज के लिए चल दिए।

इन सब खोजी दलों के लिए एक मास का समय निर्धारित किया गया। कुछ समय पश्चात धीरे-धरि सभी दिशाओं से खोजी दल लौटने लगे। पूर्व, पश्चिम और उत्तर दिशाओं से लौटे सभी दलों ने जब आकर बताया कि उधर उन्हें सीता के बारे में कोई जानकारी प्राप्त नहीं हुई तो राम को कष्ट हुआ।

लेकिन अभी भी एक आशा बाकी थी क्योंकि दक्षिण दिशा की ओर से अभी कोई नहीं लौटा था।

अंगद, हनुमान और जामवन्त खोजते-खोजते लगभग थक चुके थे और अब उनके सामने धरती का आखिरी छोर आ गया था इसके आगे समुद्र-ही-समुद्र था।

लौटने की अवधि बीत जाने पर भी अभी उनका कार्य सिद्ध नहीं हुआ था, यह देखकर अंगद बहुत-निराश हुआ और ऐसे में बिना कार्य सिद्ध हुए लौटना अशोभनीय होगा तो केवल हमें उपवास करके प्राण ही त्याग देना पड□गा क्योंकि यदि हम अवधि के बाद वहां लौटेंगे, तब भी हमें सीता का समाचार न देने पर मृत्युदंड तो मिलेगा ही।

हनुमान यह जानते थे कि बाली कुमार बहुत बुद्धिमान, बलशाली और अनेक गुण सम्पन्न हैं। वे पराक्रम में अपने पिता बाली के समान हैं इसलिए अंगद को इसके प्रकार दुखी देख हनुमान ने धीरज बंधाया।

जिस स्थान पर ये लोग बैठे थे, वहीं उन्हें जटायु के बड□ भाई गिद्धराज संपाति मिले, जो बल और पुरुषार्थ के लिए प्रसिद्ध थे।

संपाति ने इन वानरों को जब जटायु के बारे में बात करते सुना तो वह चौकन्ना हुआ और तब उसने इनको आगे की घटना सुनते हुए कहा, 'हे वानरो! आज इतने दिन बाद मुझे अपने भाई के बारे में समाचार मिला। मैं तो पंखहीन यहां एक अपाहिज का जीवन बिता रहा हूं। मैं शरीर से तो तुम्हारी कोई सहायता नहीं कर सका लेकिन तुम्हें कुछ बातें अवश्य ही बता सकता हूं।'

सीता के बारे में कुछ मालूम हो जाएगा, यह भाव उपजते ही सारा वानर समूह संपाति को घेरकर बैठ गया। संपाति ने कहा, 'एक दिन मैंने दुरात्मा रावण को गहनों से सजी एक रूपवती युवती का अपहरण करके ले जाते देखा है। वह श्रीराम कह रही थी और साथ में लक्ष्मण भी पुकारती थी। इसलिए मैं समझता हूं कि वह सीता ही थी।

'यहां से पूरे चार सौ कोस के अंतर पर समुद्र में एक द्वीप है, उसे लंकापुरी करते हैं। यह

स्वर्ण की बनी हुई है। वह रावण सीता को उस लंकापुरी में ही ले गया है। लंका चारों ओर से समुद्र के द्वारा सुरक्षित है, पूरे सौ योजन समुद्र को पार करके दक्षिण तट पर तुम्हें रावण मिल सकेगा। यदि तुम इस समुद्र को पार कर सके तो निश्चय ही तुम्हें सीता के दर्शन होंगे। मैं यहीं से रावण और जानकी को देखता हूं। हम लोग भी गरुड□ की तरह दूर तक देखने की शक्ति रखते हैं।

इसके बाद वे सभी लोग समुद्र के किनारे पर पहुंच गए और संपाति ने अपने भाई जटायु को जलांजलि दी।

इसके पश्चात् संपाति ने उन्हें बताया 'एक दिन वह भूख से पीडि□त होकर अपने भोजन की तलाश में था। उसका पुत्र भी सूर्यास्त होने पर खाली हाथ लौट आया था, तभी उसने बताया एक पुरुष, एक स्त्री को लेकर जा रहा है, वह निश्चय ही रावण था। मैं क्योंकि पंखहीन था इसलिए असमर्थ था। हां, तुम यदि चाहो तो इस दिशा में कुछ कर सकते हो।'

सीता के बारे में यह संकेत मिलने पर वानर दल में उत्साह की लहर दौड□ गई और साथ ही वे निराश भी हुए क्योंकि इतना बड□ा समुद्र पार करना सरल नहीं था, इसके बारे में तो सोचना भी दुष्कर था और इस समुद्र का ध्यान आते ही सीता के पता लगाने वाले संकेत का सुख हवा में उड□ गया। वे लोग समुद्र को पार करने का विचार ही बना रहे थे कि जामवन्त ने हनुमान को प्रेरित करते हुए कहा, 'हे वीर! मैं वृद्ध हो गया हूं इसलिए एक छलांग में नब्बे योजन तो मैं जा सकता हूं, इसके आगे नहीं। अत: यदि तुम यह साहस करो तो सीता का पता चल सकता है।'

जामवन्त यह भी जानते थे कि बचपन में एक बार हनुमान ने सूर्य को एक फल जानकर तीन सौ योजन ऊंची छलांग लगाई थी और सूर्य के तेज से आक्रान्त होने पर भी कोई खेद नहीं हुआ था, तब इन्द्र ने कुपित होकर तुम्हारे ऊपर वज्र का प्रहार कर दिया था, जिससे तुम्हारी ठोढ□ी का बायां भाग उस वज्र से टूट गया था। तभी से तुम्हारा नाम हनुमान है। तुम आज भी पवन की तरह गतिवान, पौरुष सम्पन्न हो। तुम निश्चय ही यह दूरी सरलता से पार कर सकते हो।'

अपने ऊपर विश्वास करते हुए हनुमान श्रेष्ठ महेन्द्र पर्वत पर चढ□ गए और श्रीराम को याद करके छलांग लगा दी। मार्ग में मैनाक ने उनका स्वागत किया, सुरसा राक्षसी पर उन्होंने विजय पाई और वे पलक झपकते ही लंकापुरी पहुंच गए।

सीता की खोज में गए हुए सभी दल वापिस लौट चुके थे, लेकिन अभी अंगद और हनुमान वाला दल नहीं लौटा था जबकि निश्चित की गई अवधि पूरी हो चुकी थी। यह देखकर राम और सुग्रीव को चिन्ता हुई। लेकिन अचानक अपने सम्मुख दधिमुख को आया देख वे चौंके और कहने लगे, 'कहिए वानर! आपके मधुवन में सब कुशल तो है?'

इस पर दधिमुख ने अपनी चिन्ता करते हुए कहा, 'हे महाराज! आपके होते हुए हनुमान आदि वानरों ने मधुवन में जो लूट कार्य आरम्भ किया है, उससे वहां बहुत बड□ी अव्यवस्था हो गई है। वे लोग अपनी उद्दंडता से सारे मधुवन को नष्ट कर रहे हैं और इतने उद्धत हो रहे हैं कि रोकने पर भी नहीं रुकते और हमारे वन रक्षकों को घूंसे और थप्पड□ मारकर आहत कर रहे

हैं।'

यह सुनकर सुग्रीव ने प्रसन्न होकर श्रीराम से कहा, 'हे राम! बधाई स्वीकार करें, निश्चय ही हनुमान आदि वीर कार्य को सिद्ध करके लौटे हैं। इसी की प्रसन्नता में वे मधुवन का उपभोग कर रहे हैं क्योंकि यदि वे निराश लौटते तो ऐसा साहस नहीं कर पाते और फिर मुझे तो विश्वास है कि उन्होंने सीता का दर्शन अवश्य कर लिया है। इस कार्य को सिद्ध करने में हनुमान को ही सफलता मिली है, उनके मधुवन को उजाड□ने का ही यह संकेत है कि वे अत्यन्त उत्साहित हैं।

राम ने जब सुग्रीव से यह सुना तो वे प्रसन्नता से पुलकित हो गए, उनकी आंखें खुशी में छलछला आईं और उन्होंने वानर राज सुग्रीव को अपने गले से लगा लिया। दधिमुख ने लौटकर हनुमान से कहा, जो कि अब मधु के मद से मुक्त हो गए थे, 'हे सौम्य! आप लोगों को इन रक्षकों ने अज्ञानवश ही रोका, इसलिए आप इसका क्षोभ मन में न लाए, आप थके हुए आए थे। यह संपत्ति सब आपकी ही है, आप जी भर कर इसका उपयोग करें। और इसके पश्चात शीघ्र ही राम से मिलें।'

दधिमुख की बात सुनकर अंगद ने कहा, 'हे वीरों लगता है कि हमारे लौटने का समाचार चाचा सुग्रीव और महाराज राम को मिल चुका है इसलिए वे हमारे कार्य पूरा हो जाने का अनुमान लगा चुके हैं। अब हमें कोई खतरा नहीं हैं। दधिमुख की विनम्रता इस बात का संकेत है कि अवधि के बाद लौटने पर वे लोग हमसे नाराज नहीं हैं।'

इसके पश्चात वह शीघ्र ही श्रीराम की सेवा में पहुंचे।

इन सबको आया देख श्रीराम सुग्रीव और लक्ष्मण को अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

सर्वप्रथम अंगद ने राम को प्रणाम करते हुए यह सूचित किया, 'हे देव! देवी सीता सुरक्षित हैं और वह रावण के अन्त:पुर में हैं। यह खोज महाबली हनुमान ने की है और सारा वृत्तान्त आप उन्हीं से सुनिए।'

श्री राम ने यह सुनकर हनुमान को गले लगाया और उनसे कहा, 'हे प्रिय! मुझे शीघ्र ही सारा वृत्तान्त सुनाओ।'

हनुमान ने कहा, 'हे श्रीराम! कन्याकुमारी के पृथ्वी के छोर पर पहुंचकर अपने सामने विशाल समुद्र देखकर हमारा उत्साह भंग हो चुका था क्योंकि यहां तक पहुंचते-पहुंचते ही हमारी खोज की अवधि समाप्त होने को आ चुकी थी, हमें भय था कि यदि हम बिना सीता की खोज के अवधि के बाद पहुंचेंगे तो निश्चय ही प्राणदंड के भागी बनेंगे, तभी हमें वहां गिद्धराज संपाति के दर्शन हुए।'

'हे महाराज! संपाति से ही हमें ज्ञात हुआ कि वे जटायु के बड□ भाई हैं और उन्होंने एक स्त्री को व्याकुल दशा में श्रीराम और लक्ष्मण की पुकार करते हुए राक्षस रावण के चंगुल में फंसा देखा था। वह दुष्ट रावण उन्हें अपने विमान पर लंका में ले गया है। संपाति ने यह भी बताया कि यह लंका यहां से समुद्र से सौ योजन की दूरी पर स्थित है। हे देव, मैं आपकी कृपा से महेन्द्र

पर्वत से छलांग लगाकर शीघ्र ही उस स्वर्ण नगरी में पहुंचा। दिन भर अपने-आपको छिपाते-बचाते मैंने वह स्थान पा ही लिया, जिसे रावण के अन्त:पुर में अशोक वाटिका कहा जाता है।

'वहां मैंने उनके क्रूर राक्षसियों के बीच उस सती साध्वी देवी सीता को बैठे पाया जो आपके विरह में सूखकर दुबली हो गई थीं।

'रात्रि में एकान्त पाकर मैंने आपकी दी हुई वह मुद्रिका उनके आंचल में डाल दी और फिर अपने आकार को छोटा करके सीता के समीप पहुंचकर अपना परिचय और आपका संदेश उन्हें दे दिया।'

'वे सती साध्वी सीता नीचे भूमि पर सोती हैं। रावण से उनका कोई प्रयोजन नहीं है। वे तो सदैव ही आपकी स्मृति में चिंतित हैं। आप उन्हें शीघ्र ही मुक्त करायेंगे, इसी विश्वास पर उन्होंने अभी तक प्राण नहीं त्यागे।'

'उन्होंने यह कहा है कि यदि दो महीने के भीतर आप उन्हें दुष्ट रावण की कैद से मुक्त नहीं करायेंगे तो वे अपने प्राण त्याग देंगी। देवी सीता ने यह चूड□ामणि आपकी सेवा में भिजवाई है।'

सीता का यह वृतान्त सुनकर राम ने उस चूड□ामणि को अपनी छाती से लगा लिया और विलाप करने लगे।

मणि को देखकर शोक से व्याकुल राम अपने द्रवीभूत हुए हृदय से सीता को याद करके विलाप करने लगे। उन्हें ऐसा लग रहा था मानो मणि का दर्शन करके जनक और दशरथ के दर्शन हो गये। वह सोच रहे थे, सती साध्वी सीता किस प्रकार उन दुष्ट राक्षसों के बीच सुरक्षित रख पाई होंगी अपने-आपको।

हनुमान ने कहा, 'हे राम, एक बार चित्रकूट में जब वे आपके साथ सोई हुई थीं तो किसी कौए ने सहसा उनकी छाती में चोंच मार दी जिससे वहां रक्त बहने लगा था। आपने जब वह घाव देखा तो अपनी चटाई में से एक कुशा निकालकर उसे ब्रह्मास्त्र से अभिमंत्रित करते हुए कौए की ओर छोड□ दिया। सब ओर से निराश वह कौआ आपकी शरण में आकर चरणों में गिर पड□ा और आपने उसे क्षमा कर दिया था।

'हे हनुमान, यह घटना सुनाकर वास्तव में तुमने सिद्ध कर दिया है कि तुम सीता से मिलकर आये हो क्योंकि यह संदर्भ तो कोई नहीं जानता था।'

'इसीलिए तो मैं कहता हूं हे राम! आप बल-पराक्रम से सम्पन्न हैं, आपके लिए रावण पर विजय पाना कठिन कार्य नहीं है।

वैसे मैंने उन्हें तभी अपने कंधे पर बैठाकर ले चलने के लिए कहा। इस पर देवी सीता ने कहा, यह मेरा धर्म नहीं है कि मैं किसी पर पुरुष की पीठ का आश्रय लूं। रावण ने जो बलात् मेरा अपहरण किया, उस समय तो मैं अवश थी। विधाता ने चाहा तो श्रीराम ही मेरे लिए मुक्ति का मार्ग खोजेंगे।'

'हे देव। इसके बाद जब मैं अपने कर्तव्य को पूरा कर चुका तो मुझे बहुत भूख लगी और मैंने

वृक्षों पर लगे फलों को अपना भोजन बनाया। मुझे इस प्रकार फल खाते देख दुष्ट रावण के वीर सैनिक और राक्षस गण मुझे दण्डित करने के लिए रावण के पास जाने लगे। हे प्रभु! मेरा अपराध क्षमा हो, यहां मुझसे थोड□ी-सी उद्दण्डता हो गई। रावण का छोटा पुत्र अक्षयकुमार जब मुझे बंदी बनाने आया तो मैंने उसको ही मार डाला। इस उथल-पुथल से रावण बड□ा विचलित हुआ, तब उनके ज्येष्ठ पुत्र मेघनाद ने आकर मुझे ब्रह्मास्त्र से काबू में करके रावण की सभा में उपस्थित किया। हे प्रभु! वहां उन्होंने जब आपके बारे में अपमानजनक बातें कहीं तो मेरे क्रोध को ठिकाना नहीं रहा और मैंने रावण को ललकारते हुए आपके बल का परिचय कराया।'

'उस दुष्ट ने इसे मेरी उद्दण्डता जानकर मेरी पूंछ में आग लगा दी। बस हे प्रभु मैं वह सहन नहीं कर सका और मैं उस जली पूंछ को सारी लंका में घुमाता हुआ आग लगाता चला गया। उस दुष्ट रावण को मैंने यह बता दिया है कि जिन्हें वह तपस्वी समझता है, जब उनका सेवक उसकी लंका को फूंक सकता है तो उसके स्वामी कितने शक्तिशाली होंगे, इसका अनुमान वह स्वयं लगा सकता है।'

'इसका एक लाभ मुझे यह भी हुआ कि एक दिन में मैंने उस दुष्ट रावण की सारी नगरी देख ली।'

'लेकिन प्रभु! एक बात तो मैं कहना भूल ही गया। उस नगरी में एक व्यक्ति ऐसा भी मिला जो आपका अनन्य भक्त है, वह दुष्ट रावण का छोटा भाई विभीषण है, जो उस नगरी में आपके नाम की माला जपता है। रावण के व्यवहार से वह बहुत दु:खी है। इसके पश्चात हे देव! मैंने पुन: सीताजी से मिलकर लौटने की आज्ञा मांगी। उन्होंने फिर अपना यह वाक्य दोहराया कि यदि वे शीघ्र ही मुझे मुक्त नहीं करायेंगे तो मैं सुरक्षित नहीं रह पाऊंगी। मैंने उन्हें आश्वस्त किया और समुद्र में छलांग लगा दी और आपके सामने उपस्थित हो गया।'

'हे राम। अब शीघ्र ही हमें ऐसा उपाय करना है जिससे उस दुष्ट मायावी राक्षस को मारकर हम देवी सीता को उसके बंदीगृह से मुक्त करा सकें।'

और श्रीराम अब समुद्र को पार करने का उपाय सोचने लगे।

श्रीराम द्वारा समुद्र पर सेतु-निर्माण और लंका आगमन

हनुमान ने जिस बल और पराक्रम से सीता का पता लगाया था, यह कार्य कोई साधारण व्यक्ति नहीं कर सकता था। इससे राम का विश्वास हनुमान और सुग्रीव दोनों पर ही पक्का हो गया क्योंकि जो सेवक स्वामी के द्वारा किसी कठिन कार्य में लिप्त हो और उसे पूरा करके वह दूसरा कार्य भी सम्पन्न कर ले तो वह सेवकों में उत्तम कहा गया है।

हनुमान ने स्वामी के एक कार्य में नियुक्त होकर उसके साथ दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य भी पूरा किया। उसने स्वयं को भी दूसरों की दृष्टि में छोटा नहीं बनने दिया और सुग्रीव का भी मान बढ□ा दिया। ऐसे में वीर हनुमान को क्या योग्य पुरस्कार दिया जाए। राम यही सोच रहे थे कि उन्होंने हनुमान को अपना प्रगाढ□ आलिंगन प्रदान किया क्योंकि यही तो उनका सर्वस्व है और फिर सुग्रीव से कहा, 'हे बंधु! मैं तुम्हारा बहुत आभारी हूं कि तुमने सीता का पता लगाने में मेरी सहायता की किन्तु यह इतना विशाल समुद्र हमारे और सीता के बीच में बहुत बड□ी रुकावट है। इतने बड□ समुद्र को पार करके लंका तक पहुंचना भी तो सरल कार्य नहीं है। अब तो समस्या यही है कि ये जो इतना बड□ा वानर समूह तुमने एकत्रित किया है, यह लंका तक पहुंचेगा कैसे?'

'हे श्रीराम! आप इसके लिए कोई चिंता न करें। जब सीता का समाचार मिल गया है और शत्रु के निवास-स्थान का भी पता चल गया है तो हम अपने कार्य की सफलता की ओर बढ□ तो चुके ही हैं। अब हमें समुद्र लांघने का प्रयत्न करना है ताकि हम लंका पर चढ□ाई करके शत्रु का नाश कर सकें।'

'ये वानर सेनापति सब प्रकार से समर्थ और वीर हैं। इनमें अतुल उत्साह है, हे महाराज! ये समुद्र को लांघने की तो बात ही क्या, आपके आदेश पर आग में कूदने को तैयार हैं। आप तो केवल ऐसा उपाय करें जिससे हम समुद्र पर सेतु बांध सकें क्योंकि बिना पुल बांधे तो लंका पर विजय संभव नहीं होगी।'

'यही तो प्रमुख समस्या है सुग्रीव! मैं तपस्या से पुल बांधकर और समुद्र को सुखाकर उस पार जाने में समर्थ तो हूं लेकिन संशय मन में यही है कि क्या हम इसमें सफल होंगे। 'हे राम! आप केवल समुद्र को पार करने के लिए हमें रास्ता मात्र दें। इसके पश्चात का कार्य तो बड□ा कठिन नहीं है। यह लंकापुरी बड□ी दुर्गम और बहुत दूर तक फैले हुए समुद्र के दक्षिण किनारे पर बसी हुई है। वहां तो नाव भी नहीं जा सकती। इसीलिए तो रावण निर्द्वंद्व होकर रह रहा है।'

इस तरह सोते-विचारते यही निश्चय किया गया कि पहले उस स्थान पर तो पहुंचें, जहां समुद्र बांधना है।

राम की दाहिनी आंख का फड□कना भी यह संकेत दे रहा था कि उन्हें अपने मनोरथ में सिद्धि प्राप्त होगी।

इस प्रकार मन से शकुन को देखकर प्रसन्न राम और लक्ष्मण सुग्रीव आदि के साथ उछलती-कूदती वानरों की सेना का नेतृत्व करते हुए समुद्र की ओर चल दिए।

'लो, अब हम सब लोग समुद्र के किनारे आ गए।' यहां राम ने महेन्द्र पर्वत के शिखर पर खड□ होकर अपनी आंखों से उस विशाल समुद्र को देखा जो उत्ताल लहरों से चढ□ता-उतरता भयानक शब्द कर रहा था।

इस समुद्र का तो कहीं कोई ओर-छोर नहीं दिखाई दे रहा। बिना किसी समुचित उपाय के इसको पार करना असंभव है।

सेना का पड□ाव डाल दिया गया और आदेश दिया गया कि कोई भी सेनापति अपनी सेना को छोड□कर कहीं नहीं जाएगा।

सुग्रीव ने उस विशाल सेना को रीछ, लंगूर और वानरों के दल के रूप में तीन भागों में विभक्त करके उन्हें अलग-अलग डेरा डालने का आदेश दिया।

राक्षसों का निवास-गृह यह विशाल समुद्र अत्यंत दुर्गम लग रहा था और इसे पार करने का कोई भी सुलभ मार्ग दिखाई नहीं पड□ रहा था। दूर क्षितिज की ओर जल और आकाश एक हो रहे थे। इस समय यह चंचल समुद्र जहां अपनी अठखेलियों में सुन्दर लग रहा था वहीं मन में कुंठा भी उत्पन्न कर रहा था।

समुद्र का विराट दृश्य देखकर राम का दु:ख धीरे-धीरे और बढ□ने लगा।

'हे लक्ष्मण! सीता का अपहरण हुआ मुझे इसका उतना दु:ख नहीं है, अब तो दु:ख इस बात का है कि जो अवधि उसने अपने जीवन की निर्धारित कर दी है, यदि उससे पहले सीता तक नहीं पहुंचा गया तो हमारा सारा पुरुषार्थ असफल हो जाएगा और यह समय यूं ही बीत रहा है।' और यह कहते हुए राम समुद्र की लहरों की ओर बढ□ गए।

इधर हनुमान के द्वारा लंका में जो उत्पात मचाया गया, उससे रावण भीतर-ही-भीतर घबरा गया। वह सोचने लगा कि जब अकेला वानर हमारी इतनी बड□ी शक्ति को चुनौती दे गया, यदि यह समुद्र को लांघकर लंका तक आ गया तब तो निश्चय ही संकट उत्पन्न हो सकता है। यह सोचते हुए उसने अपने मंत्रियों से परामर्श किया, लेकिन रावण की सभा में तो एक-से-एक दुराग्रही और अहंकारी मंत्री थे और सबके मुंह से बार-बार यही शब्द निकल रहा था कि हम लोग राम, लक्ष्मण, सुग्रीव आदि को मौत के घाट उतार देंगे। शत्रु की शक्ति का सही अनुमान लगाने वाला तो वहां कोई नहीं था।

यह जानकर रावण को विनाश के प्रति चिंतित होकर विभीषण ने साहस करते हुए कहा, 'हे मेरे बड□ भाई और लंका-पति रावण! जिन्होंने बहन शूर्पणखा के नाक, कान काट दिए। खर, दूषिण सहित राक्षसों की विशाल सेना को मार गिराया, मारीच जैसा मायावी उनके हाथ से मारा गया, ऐसे उत्साही वीरों के साथ शत्रुता स्थापित करना कोई बुद्धिमानी का कार्य नहीं है। मेरी तो

राय यही है कि सम्मानपूर्वक उनकी पत्नी को लौटा दिया जाए। हो सकता है यह तर्क इस समय कायरतापूर्ण लगे, लेकिन आगे चलकर इसका लाभ यह होगा कि राक्षस संतति असमय नष्ट होने से बच जाएगी।'

रावण उस समय चुप हो गया, लेकिन उसके सिर पर तो मृत्यु मंडरा रही थी। इसीलिए विभीषण की वे बातें उसे रुचिकर नहीं लगीं और अपने सभासदों के बीच रावण ने उसका अपमान करते हुए कहा, 'तुम नीच कायर हो।' स्वयं रावण के पुत्र इन्द्रजीत ने भी अपने काका को फटकारते हुए कहा 'आप निरर्थक बात कर रहे हैं। बल, वीर्य से हीन आप स्वयं डरपोक हैं और हमें डरा रहे हैं। यदि आपको राम के प्रति इतना ही लगाव है तो आप जाइए, यहां क्या कर रहे हैं? राम की शरण में जाइए।'

रावण ने भी क्रोध में भरकर कहा- 'नीच, यदि तेरे सिवा कोई दूसरा यह बात कहता तो मैं उसे मृत्युदंड दे देता। तेरा भला इसी में है कि तू यहां से चला जा।'

विभीषण अपने हाथ में गदा लिए चार सेवकों के साथ उछलकर आकाश में चले गये और वहां से ही अपना संदेश दिया, 'मैंने यह सब तुम्हारे हित के लिए किया भाई! लेकिन यदि तुम्हें इसमें अपना अहित लगता है तो मैं जा रहा हूं। ईश्वर तुम्हारा भला करे।'

इस प्रकार विभीषण सुमेरु पर्वत के समान ऊंचे शरीर वाले दो ही घड□ी में राम और लक्ष्मण की शरण में पहुंच गए।

सुग्रीव आदि ने उन्हें तुरंत मारने का परामर्श दिया किन्तु राम ने पहले उनका परिचय जाना। आकाश में स्थित होते हुए विभीषण ने बताया- 'मैं रावण नाम के दुराचारी राजा का छोटा भाई विभीषण हूं। जटायु को मारकर रावण ने ही सीता का अपहरण किया था और उसे अपनी लंका में बंदी बना रखा है। मैंने उसे यह परामर्श दिया कि वह सीता को सम्मानपूर्वक वापिस लौटाकर अपने कुल की रक्षा करे लेकिन उस दुष्ट को मेरी बात अच्छी नहीं लगी और उसने मुझे ही देश निकाला दे दिया। अब मैं श्रीराम की शरण में आया हूं। कृपया मुझ शरणागत को अभयदान दें।'

सब लोगों की विभीषण के विरुद्ध राय सुनकर राम ने कहा, 'देखो, हनुमान ने लौटकर विभीषण का जो चरित्र चित्रित किया था, उसके आधार पर विभीषण के यहां आने का यही उत्तम समय है। वह एक नीच पुरुष के पास से चलकर एक श्रेष्ठ पुरुष के पास आया है इसलिए उसका आगमन सर्वथा उचित है। और फिर यह मित्रभाव से मेरे पास आया है। मैं उसे किसी भी तरह त्याग नहीं सकता।'

सुग्रीव की आपत्ति यह थी कि जो व्यक्ति अपने भाई को छोड□ सकता है वह किसी को भी छोड□ सकता है।

'ऐसा नहीं है वानर राज, रावण विभीषण को शंका की दृष्टि से देखने लगा था इसलिए इसपर भाई को त्यागने का दोष नहीं लगता बल्कि रावण ने इसे अनुपयोगी जानकर, घर से निकाल दिया है, इसलिए अपनी रक्षा के लिए इसका हमारे पास आना अनुचित नहीं है। और फिर यह तो अपना राज्य पाने के लिए इच्छुक है, जो उसे हमारे साथ रहकर ही-मिल सकेगा, रावण के

साथ नहीं। और इसमें मिल जाने पर यह निश्चिंत होकर हमारा सहायक होगा, जबकि रावण को इससे चिंता ही होगी।'

सुग्रीव अभी भी संतुष्ट नहीं थे, तथापि राम के सम्मुख उन्हें यह स्वीकार करना पड□ा कि शरणागत को शरण देना उचित है।

राम से अभय पाकर जब विभीषण नीचे धरती पर आए तो वे सीधे दौड□ते हुए राम के चरणों में गिर पड□ और विलाप करते हुए बोले, 'हे स्वामी! मैं दुष्ट रावण का छोटा भाई हूं। उससे अपमानित और त्रस्त मैं आपकी शरण में आया हूं। अपने मित्र और लंकापुरी को छोड□कर आया मैं अब सर्वथा आप ही के अधीन हूं।'

श्रीराम ने विभीषण को अपनी शरण में ले लिया और उससे कहा, 'हे प्रियवर! यह तो बताओ कि रावण कितना बलशाली है?'

विभीषण ने कहा, 'हे महाराज! ब्रह्मा के वरदान से रावण देवता, गंधर्व, यक्ष, असुर और दैत्यों से अवध्य है। हमारा मध्यम भाई कुंभकरण भी महातेजस्वी और पराक्रमी है। रावण के सेनापति प्रहस्त ने कैलाश पर्वत पर युद्ध में कुबेर के सेनापति मणिभद्र को पराजित किया था। रावण का ज्येष्ठ पुत्र मेघनाथ इंद्रजीत है। वह गोह के चमड□ के दस्ताने पहनकर अवध्य कवच धारण करके और हाथ में धनुष लेकर जब युद्ध में खड□ा होता है तो उस समय अदृश्य हो जाता है।'

इस प्रकार रावण के प्रमुख महारथियों का परिचय देते हुए विभीषण ने रावण की शक्ति से राम को परिचित कराया तो राम ने उन्हें आश्वस्त करते हुए क्या- 'हे विभीषण। तुमने रावण के युद्ध विषयक जिन पराक्रमों का वर्णन किया है, यह निश्चय जानो कि मैं रावण की समूची सैन्य-शक्ति को छिन्न-भिन्न करके उसका वध करके तुम्हें उसके राजा पद पर अधिष्ठित करूंगा और सौगंध खाकर कहता हूं कि बिना रावण का वध किए अयोध्या नहीं लौटूंगा।'

विभीषण ने यह सुना तो उसका मस्तक श्रद्धा से राम के चरणों पर झुक गया और वह बोला, 'हे प्रभु। राक्षसों के इस संहार में और लंका पर आक्रमण करके उसे जीतने में मैं आपकी सहायता करूंगा। इसके लिए यदि मुझे अपने प्राणों की आहुति देनी पड□ तो सौगंध खाकर कहता हूं कि मैं कोई संकोच नहीं करूंगा।'

इस प्रकार भावुक मन से राम ने लक्ष्मण से समुद्र का जल मंगाया और विभीषण का वहीं समुद्र के किनारे लंका के राजा के रूप में अभिषेक किया।

जब समुद्र पर पुल बांधने का प्रश्न उठा तो विभीषण ने कहा, 'हे राम! इसके लिए आपको समुद्र की शरण लेनी होगी, वही आपको रास्ता सुझाएगा।'

अब राम ने समुद्र तट पर कुशा बिछाकर महासागर के समक्ष हाथ जोड□कर निवेदन करना प्रारम्भ किया।

राम को इस प्रकार विनती करते हुए तीन रातें व्यतीत हो गईं लेकिन कोई परिणाम सामने नहीं आया और समुद्र उसके सम्मुख उपस्थित नहीं हुआ। तब राम ने भयंकर धनुष को धीरे से दबाकर उस पर प्रत्यंचा चढ□ा दी और उसकी टंकार से भयंकर गर्जना करते हुए बाण छोड□

मानो इन्द्र ने बहुत से वज्रों का प्रहार कर दिया हो।

यह प्रहार पड□ते ही बड□ी-बड□ी लहरों से समुद्र व्यथित हो उठा और एक भयानक उथल-पुथल मच गई। जैसे ही राम ने दोबारा शरसंधान के लिए धनुष खींचा, लक्ष्मण ने रोकते हुए कहा, 'बस भैया! अब कोई दूसरी युक्ति सोचनी चाहिए।'

लेकिन राम के क्रोध की तो सीमा ही नहीं थी, वे बोले- 'आज मैं इसे पाताल सहित सुखा दूंगा।'

राम के क्रोध को देखकर समुद्र अपने भीतर रहने वाले प्राणियों, सर्पों, राक्षसों सहित भयानक वेग के होते हुए एक-एक योजन आगे बढ□ गया। उसकी सीमाएं बढ□ते देख कर भी राम अपने स्थान से पीछे नहीं हटे।

यह अडिग विश्वास देखकर तब समुद्र के बीच से स्वयं सागर मूर्तिमान होकर उपस्थित हुआ और बोला, 'हे श्रीराम, क्रोध शान्त कीजिए। मैं आपको ऐसा उपाय बताऊंगा, जिससे आप मेरे पार हो जायेंगे और सारी सेना भी पार हो जाएगी। यह मैं आसानी से सह लूंगा।'

यह सुनकर राम ने अपना खींचा हुआ बाण द्रमकुल्य नाम के स्थान पर छोड□ दिया। जहां वह बाण गिरा, वही मरुभूमि के नाम से विख्यात हुआ।

तब समुद्र ने कहा, 'हे राम, आपकी सेना में जो नल नाम का वानर है, यह साक्षात विश्वकर्मा का पुत्र है। वही मेरे ऊपर पुल का निर्माण करे, मैं उस पुल को धारण करूंगा।' यह कहता हुआ समुद्र अदृश्य हो गया और नल ने उठकर राम से कहा, 'हे राम! मैं पिता की दी हुई शक्ति को पाकर इस विस्तृत समुद्र पर निश्चय ही सेतु का निर्माण करूंगा।'

नल ने कहा 'मैं विश्वकर्मा का औरस पुत्र हूं और शिल्प कर्म में उन्हीं के समान हूं। महासागर ने मुझे मेरे ज्ञान का स्मरण कराकर मुझे शक्तिवान बना दिया है, अत: पुल का निर्माण कार्य आज से ही प्रारम्भ हो जाएगा।'

फिर क्या था, सभी वानर उत्साह में भरकर उछलते-कूदते वन में प्रवेश कर गए और वहां से बड□-बड□ पर्वत, शिखरों और वृक्षों को तोड□कर समुद्र तक खींच लाए। इस समय पर्वतों जैसी बड□ी-बड□ी चट्टानें हाथ में लिए दौड□ते हुए ये वानर दानव के समान दिखाई दे रहे थे। उस दिन एक श्रम से उन्होंने चौदह योजन लंबा पुल तैयार कर लिया। और इस प्रकार देखते-ही-देखते पांच दिन में ही उन वीरों ने दस योजन चौड□ा और सौ योजन लंबा पुल बना दिया।

पुल तैयार हो जाने पर अपने सचिवों के साथ विभीषण हाथ में गदा लेकर समुद्र के दूसरे छोर पर खड□ हो गए कि यदि कोई शत्रु पक्ष का आदमी पुल तोड□ने आए तो वे उसे दंड दे सकें।

और इसके बाद हनुमान के कंधे पर राम और अंगद की पीठ पर लक्ष्मण सवार हो गए और इन दोनों के पीछे समस्त वानर सेना पुल के मार्ग पर चलते हुए कुछ आकाश मार्ग से चलते हुए भी भीषण गर्जना करते हुए समुद्र से उस पार पहुंच गए।

सुग्रीव ने समस्त सेना के लिए फल-फूल-जल की अधिकता देखकर समुद्र के किनारे पर ही

पड□ाव डाल दिया।

जब सब लोग लंका के धरातल पर पहुंच गए तो राम ने कहा, 'हे लक्ष्मण! जहां शीतल जल की सुविधा हो और फलों से भरे हुए जंगल हो हमें वहीं पड□ाव डालना चाहिए और यहां हमें अपने सैनिक समूह को कई भागों में बांट लेना चाहिए क्योंकि व्यूह बनाकर ही हम अपने सैन्य-समूह की रक्षा कर सकते हैं।'

'और इससे पहले कि यह राक्षस समूह हमारे आने की सूचना पाकर अपने उत्पातों से हमारे वानरों को त्रस्त करे, हमें इस लंका पर धावा बोला देना होगा।'

ऐसा कहते हुए राम अपने हाथ में धनुष लेकर लंकापुरी की ओर बढ□ गए, विभीषण, सुग्रीव के साथ वानर वीर महारथी भी उनके साथ चल दिए।

सुग्रीव कुशल सेनानायक था, यद्यपि वह राजा तो कुछ समय पहले ही बना था लेकिन बालि के साथ युवराज रहते हुए उसे सैन्य-समूह के संचालन का पूरा अनुभव था इसलिए वह अपनी पूरी वानर सेना पर नियंत्रण बनाए हुए था।

वानर सेना तो वानर सेना थी, उनके लिए समुद्र पार करके यहां आना भी एक चमत्कार ही था और नया स्थान था, उत्साह भी था अत: वे सभी लोग जोर-जोर से गर्जना करते हुए चल रहे थे। सबके मन में यही भाव था कि कहीं पास में ही श्रीराम की प्रिया सीता रावण की कैद में है। कैसे भी हो, उसको शीघ्र ही मुक्त कराना है।

राम ने भी लंका को समुद्र के एक द्वीप के रूप में पहली बार ही तो देखा था। उस व्यवस्थित और सुंदर नगरी को देखकर राम सोचने लगे कि विश्वकर्मा ने कितने मन से इस नगरी का निर्माण कराया है। इसके सात मंजिल मकान, बड□-बड□ कंगूरे और गगनचुम्बी इमारतें दिखलाई दे रही थीं। चारों तरफ वन-कानन से समृद्ध फल-फूलों से भरी वाटिकाएं जिनमें पक्षियों का कलरव नगरी की शोभा बढ□ा रहा था। कोकिलों का गुंजन, फूलों पर भंवरों का मंडराना सभी कुछ तो मन को मोहित कर रहा था।

यह भी एक आश्चर्य की बात थी कि इतने मनोहारी स्थान पर इतनी दुष्ट प्रवृत्ति का राक्षस रहता था। कौन कह सकता था कि इतनी सुंदर सोने की लंका निशाचरों की बस्ती है।

लंका के सौन्दर्य का दर्शन करते हुए राम ने युद्ध के नियमानुसार सेना का विभाजन किया।

सैनिकों को आदेश देकर उन्हें व्यवस्थित किया।

इसके अनुसार वीर अंगद, नील के साथ वानर सेना के पुरुष व्यूह में हृदय स्थान में स्थित किए गये और राम स्वयं लक्ष्मण के साथ व्यूह के मस्तक स्थान में, जाम्बवान आदि वीर रीछों की सेना के प्रधान सैन्य व्यूह के कुक्षि भाग में और सुग्रीव वानर वाहिनी के पिछले भाग की रक्षा में नियत किये।

व्यूहबद्ध करने के बाद राम ने तोते को बंधन मुक्त कर दिया। यहां से छूटकर वह तोता राक्षसराज के पास पहुंचा।

इस तोते से ही रावण को यह ज्ञात हुआ कि समुद्र पर विशाल पुल बनाकर राम वानरों की

सेना सहित लंका में पधार चुके हैं।

रावण के लिए तो यह बड□ा ही हतोत्साहित करने वाला समाचार था। उसने तो यह कल्पना भी नहीं की थी कि कोई समुद्र लांघकर इस प्रकार लंका पर चढ□ाई कर सकता है। रावण की शक्ति को शत्रु-पक्ष की ओर से यह पहली चुनौती थी।

इसलिए रावण ने अपने गुप्तचरों को राम की सेना में भेज दिया, वह यह जानना चाहता था कि राम की सेना की स्थिति क्या है।

वानर वेश में छिपे रावण के गुप्तचर राम की सेना का निरीक्षण कर रहे थे कि तभी पारखी विभीषण ने उन्हें ताड□ लिया और उन्हें पकड□कर राम के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया। 'हे राम! ये लंका से आए गुप्तचर राक्षसराज रावण के मंत्री शुक और सारण हैं।' स्वयं को राम के पास इस प्रकार बंदी दशा में देखकर वे दोनों निराश हुए और उनके मन में मृत्यु का भय व्याप्त हो गया।

राम के सामने मानो जीवनदान की याचना करते हुए वे कहने लगे, 'हे सौम्य! हम दोनों को रावण ने आपकी सेना की जानकारी के लिए भेजा है।'

राम ने हंसते हुए कहा, 'तो आपने अपना कार्य पूरा कर लिया है? यदि पूरा कर लिया हो तो आप निश्चित रूप से अपने राजा के पास अपनी इच्छानुसार और प्रसन्नतापूर्वक वापिस लौट सकते हैं और यदि कुछ बाकी रह गया हो तो देख लो, विभीषण तुम्हारी पूरी सहायता करेंगे। इस समय जो तुम पकड□ लिये गए हो इससे तुम्हें अपने जीवन के बारे में कुछ भय नहीं होना चाहिए क्योंकि अस्त्रहीन दशा में पकड□ गए तुम लोग वध के योग्य नहीं हो।'

उनसे यह कहने के बाद राम ने विभीषण से कहा, 'हे विभीषण, ये दोनों राक्षस, रावण के दूत और गुप्तचर हैं। ये यहां छिपकर भेद लेने आए हैं। ये हमारी वानर सेना में फूट डालना चाहते थे, अब तो इनका भांडा फूट गया, अत: अब इन्हें छोड□ दो।'

'हां, हे गुप्तचरों, तुम जब लंका में जाओ तो अपने महाराज को हमारा भी एक संदेश देना कि हे रावण। तुमने जिस बल के भरोसे निरपराध देवी सीता का अपहरण किया है, अब उस बल को अपनी सेना और बंधुजन सहित आकर युद्ध में दिखाओ।'

कल प्रात: काल तुम, परकोटे और दरवाजों सहित लंकापुरी और राक्षस सेना का मेरे बाणों से विध्वंस होता देखोगे। वज्रधारी इन्द्र के समान दानवों पर मेरा प्रहार तुम्हारे लिए असह्य हो जाएगा।'

इतना कहकर राम ने उन्हें सुरक्षित जीवित छोड□ दिया।

बचकर वे लोग वहां से इतनी तेजी से भागे, मानो उन्हें अपने प्राणों के बचने की कोई आशा ही नहीं थी।

जैसे-तैसे दौड□ते-हांफते ये दोनों गुप्तचर रावण की सभा में पहुंचे तो ये बहुत घबराए हुए थे। इन्हें तो आशा भी नहीं थी कि पकड□ जाने के बाद वे इस प्रकार छूट जायेंगे, लेकिन दयालु राम की कृपा से ये दोनों ही जीवित और सुरक्षित वापिस लौट आए।

सारण ने जब रावण को रामचन्द्र की उदारता का और उनकी सेना के विस्तार का परिचय दिया तो रावण आगबबूला हो गया।

'तुम्हें उन्होंने जीवित छोड□ दिया इसलिए उनकी प्रशंसा कर रहे हो! बंदरों की सेना हमसे अधिक ताकतवर है, लगता है तुम बंदरों से अधिक भयभीत हो गए हो।'

'हे महाराज, हम तो भयभीत हुए ही हैं, हम तो आपसे भी यही निवेदन करते हैं कि राम से बैर लेकर आप लाभ में नहीं रहेंगे और अच्छा यही है आप सीता को लौटा दें क्योंकि युद्ध में राम को जीतना सरल कार्य नहीं है।'

'बकवास बंद करो और यह बताओ कि तुमने वहां क्या जानकारी प्राप्त की?'

सारण और शुक ने राम की सेना के व्यूह को बताते हुए उनके मुख्य-मुख्य वीरों का परिचय दिया। अंगद, जामवंत, नल-नील, विनत, क्रोधन, गवय, अनस, पनस और रंभ जैसे प्रचंड वीरों का, उनकी विशाल सेनाओं का विस्तार से वर्णन करते हुए उनकी समस्त व्यूह-रचना रावण के सम्मुख प्रस्तुत कर दी।

जब सारण चुप हो गया तो फिर शुक ने बताया 'हे राजन! ये दुस्सह वेग वाले इच्छानुसार रूप धारण करने वाले, विशाल समुद्र के समान दिखाई देने वाले सेना के स्वामी हैं और हमें तो ये किसी दैवीय शक्ति के द्वारा संचालित मालूम पड□ते हैं।'

'स्वयं महाराज राम, उनके भाई पराक्रमी लक्ष्मण, आपके भाई विभीषण, वानरों के राजा सुग्रीव, बलवान अंगद, परमवीर हनुमान, जामवन्त, सुषेण आदि ये सभी वीर कमर कस के आपसे युद्ध करने के लिए पूरी तरह से तैयार हैं।'

शुक और सारण से यह रहस्य जानकर भी रावण को अपने अहंकार के कारण कोई चिंता नहीं हुई और उसने दोबारा अपने कुछ विश्वस्त गुप्तचरों को राम की सेना में यह जानने के लिए भेजा कि उनकी तमाम गतिविधियों का पता लगाकर आओ। पारखी विभीषण ने उन्हें फिर पहचान लिया और अब की बार तो राम के पास पहुंचाने से पहले ही वानरों को जब उनके गुप्तचर होने का रहस्य मालूम चला तो उन्होंने उनकी खूब पिटाई की। सौभाग्य से राम के सम्मुख जब उन्हें प्रस्तुत किया गया तो राम ने उन्हें जीवनदान देकर छोड□ दिया।

शार्दूल ने जब रावण को यह बताया कि राम की सेना सुबेल पर्वत के पास आकर ठहरी हुई है और वह अजेय है तो रावण कुछ भयभीत हुआ।

शार्दूल ने बताया, 'महाराज! उनकी गतिविधियों का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। उनसे तो बात करना भी असंभव है क्योंकि जैसे ही हमने उनकी गतिविधि पर विचार करना शुरू किया, हम महाराज विभीषण के द्वारा पहचान लिये गये।'

रावण ने शार्दूल को फटकारते हुए कहा, 'लगता है तुम्हारा जीवन से मोह समाप्त हो गया है। तुम मेरे सामने मेरे ही शत्रु विभीषण को महाराज के नाम से सम्बोधित कर रहे हो। अच्छा हुआ कि वह यहां से भाग गया, नहीं तो अब तक मृत्यु को पा गया होता।' 'हे महाराज! तथ्य की बात सुनिए। मैंने आपका नामक खाया है, जो कहना चाहता हूं उसे सुन लीजिए। श्रीराम बड□-

बड□ पर्वतों को पार करके, समुद्र पर सेतु बनाकर लंका की भूमि पर आ चुके हैं और हाथ में धनुष लिए खड□ हैं। इससे पहले कि वे हमारे महलों पर चढ□ाई करें- अब हमें देरी करने से कोई फायदा नहीं, या तो उन्हें सीता को लौटा दें या फिर युद्धस्थल में खड□ होकर उनका सामना करें।'

'तुम्हारी भी बुद्धि खराब हो गई है शार्दूल, जो तुम मुझे राम का भय दिखा रहे हो।'

'क्षमा करें महाराज! खर-दूषण सहित चौदह हजार राक्षसों की सेना का वध अकेले राम ने किया था, क्या आप आप भूल गए? और अब तो उनके साथ पूरी युद्ध-सामग्री से सज्जित विशाल सेना है, जिसका एक सिरा लंका की भूमि पर है और दूसरा सिरा दूर तक दृष्टि डालते हुए भी मुझे नहीं दिखाई दिया। मुझे तो ऐसा लगता है कि इस सौ योजन समुद्र की सीमा तो कन्याकुमारी पर जाकर समाप्त हो जाती है लेकिन राम की सेना ने तो किष्किन्धा से लंका तक अपने वीरों की सेना खड□ा कर दी है।'

यह सुनकर रावण कुछ भयभीत हो गया और उसने तत्काल ही अपने विशेष मंत्रियों को मंत्रणा के लिए बुलाया और यह निश्चित किया कि अब माया से ही काम लेना होगा। यह सोचते हुए रावण ने अब सीता के पास जाने का विचार किया।

अशोक वाटिका में सीता वृक्ष के नीचे उदास और दीन बनी सिर नीचा किए बैठी अपने पति का चिन्तन कर रही थीं।

रावण ने कहा, 'हे सीता! मैंने तुम्हारी जड□ को ही काट दिया है। अब वह राम इस दुनिया में नहीं है, जो अपनी विशाल सेना के साथ लंका पर चढ□ाई करने के लिए आया था, उसे रात्रि में ही मेरे गुप्तचरों ने मार डाला। विभीषण को बंदी बना लिया गया है। कहां तो वे युद्ध में मुझे पराजित करके तुम्हें ले जाने की इच्छा से यहां आए थे और कहां स्वयं मृत्यु को प्राप्त हो गए।'

और तभी सीता के सामने राम का कटा मस्तक प्रस्तुत कर दिया गया, ताकि वह उनके अंतिम दर्शन कर ले। साथ ही प्रमाण के तौर पर राम का धनुष भी सामने रख दिया गया।

सीता तो पहले से ही दु:खी थी, अब अपने सामने पति का कटा सिर देखकर और साथ में धनुष देखकर तो वह लगभग चीखती हुई विलाप करने लगीं। अब उन्हें माता कैकेयी पर क्रोध आ रहा था और मानो वह कर रही थीं, लो मां अब तो तुम्हें तसल्ली हो गई, अब तो तुम्हारा बेटा निष्कंटक राज्य करेगा।

स्त्री से पहले पति का मरना बड□ा अनर्थकारी दोष होता है। सीता सोच रही थीं, 'मेरे रहते हुए मेरे पति का निधन मेरे ही पापों का फल है, अवश्य ही मुझसे कोई भयानक दुष्कर्म हुआ है जिसकी सजा पहले मुझे यहां इस दुष्ट पापी की कैद के रूप में मिली और अब पति के निधन के रूप में मिली है।'

सीता सोच रही थीं कि हम तीन प्राणी एक साथ वन में आए थे। अब मां कौशल्या के पास एक लक्ष्मण ही लौटकर जा पायेंगे, किस प्रकार फटकर रह जाएगा मां का हृदय जब वह सुनेगी कि पुत्रवधू का हरण हो गया और पुत्र को सोते समय मार दिया गया। कितना हृदयविदारक होगा

यह दृश्य।

विनती करते हुए सीता ने कहा, 'हे दुष्ट रावण! अब मैं जीकर क्या करूंगी। अब तो अपनी इस कटार से मेरा भी सिर अलग कर दे।'

तभी रावण को एक सेवक द्वारा यह सूचना मिली कि प्रहस्त उससे मिलना चाहते हैं, वह वहां से लौट गया। उसके जाने के साथ-साथ वह सिर और धनुष भी अदृश्य हो गया।

सीता बिलख रही थीं कि तभी विभीषण की पत्नी सरमा जो लंका में ही थी, ने सीता से कहा, 'तुम इस मायावी राक्षस की चाल में आ गई और अपने पति के बल पर अविश्वास कर बैठीं। तुम्हें यह ज्ञात होना चाहिए कि इस दुष्ट की मृत्यु राम के हाथों लिखी है, जब यह जीवित है तब तक तुम राम के बारे में कोई अनिष्ट सोच भी कैसे सकती हो?'

'हे सीता! तुम भी क्या बुद्धि रखती हो! एक बार इसकी चाल में आने से तुम्हें संतोष नहीं हुआ जो तुम दुबारा आना चाहती हो।'

'तुम क्या कहना चाहती हो?' सीता ने पूछा।

'सोने के मृग से अभी तृष्णा पूरी नहीं हुई? मेरी भोली बच्ची! मेरी बात सुन।' सरमा ने बड□ प्यार से कहा, 'ये राक्षस बड□ मायावी होते हैं। जो सोने का मृग बनाकर तुझे हर सकते हैं, वो तेरे पति का कटा सिर तेरे सामने नहीं रख सकते?'

'तो क्या इसका अर्थ है...'

'हां, यही कहना चाहती हूं। रावण ने तुम पर यह माया का प्रयोग किया है। वह राम को क्या मरेगा, तुम्हारे पति श्रीराम तीनों लोकों के स्वामी हैं और फिर जब तक लक्ष्मण जीवित हैं, राम पर कोई आंच नहीं आ सकती।'

'अब तो हे सीता! तुम्हारे शोक के दिन समाप्त हो गए हैं और तुम्हारे पति समुद्र लांघकर पार आ गए हैं।'

'क्या कहा तुमने? श्रीराम मेरे पति समुद्र पार करके लंका में आ चुके हैं? हे प्रभु! तू कितना न्यायकारी है। तेरी महिमा अपरम्पार है। आज मुझे इतना सुख मिला है, हे सरमा! मैं तुम्हें नहीं बता सकती।'

तभी दूर से डंके की चोट और भैरवनाद सुनाई दिया।

'लो सुनो, अपने कानों से सुन लो देवी! ये तुम्हारे स्वामी की सेना के लंका पर चढ□ाई करने का सूचक है।

'हे सीता! रावण ने जितने भी अपने दूत भेजे, वे सब लौटकर यही कहते पाये गए कि महाराज! सीता को वापिस कर दो, राम से युद्ध करना आपके बस की बात नहीं।' अब वह घबराया हुआ रावण बौखला रहा था। युद्ध तो होना ही है, उसे टाला नहीं जा सकता इसलिए अब तो इसके सामने केवल सम्मान और प्रतिष्ठा का सवाल है, पराजय तो निश्चित है। जिस समय यह तुम्हें यहां छोड□कर प्रहरी की सूचना पर तेजी से लौटा था, उस समय इसको अपने दूत से

गुप्त समाचार मिला था। यह उसी पर मंत्रणा करने के लिए तेजी से लौट गया था और मुझे तुम्हें यह कहने का अवसर मिल गया। देखो मैं तुम्हारे हित की बात कहती हूं विदेहनंदिनी कि रावण की किसी माया के चक्कर में मत फंस जाना। इस दुष्ट ने तो अपनी मां कैकेशी का कहना भी नहीं माना था, उस बेचारी ने भी तुम्हें छोड□ देने का ही आग्रह किया था।'

'और तुम स्वयं सोचो कि जिस राम का एक संदेहात्मक हनुमान सौ योजन का समुद्र पार कर तुम्हारी खोज-खबर लेकर रावण की लंका को तहस-नहस कर गया और उसका सारा बल धरा रह गया, वह भला राम के सामने क्या टिक सका है?'

यह जानकर सीता को काफी सन्तोष हुआ।

राम द्वारा सेना सहित लंका पर चढ□ाई

शत्रु के देश में पहुंचकर राम, लक्ष्मण, सुग्रीव, हनुमान, विभीषण और अंगद आदि आपस में मिलकर विचार कर रहे थे।

विभीषण ने सुबेल पर्वत की चोटी पर चढ□कर राम को दिखाया।

'देखिए प्रभु! यही वह लंकापुरी है, जहां दुष्ट रावण ने सभी नर-नारियों को बंदी के समान जीवन जीने को बाध्य कर रखा है।'

'हे राम! यह जो सामने पूर्व का द्वार दिखाई दे रहा है, यहां सेनापति प्रहस्त आपको खड□ा मिलेगा। इसी प्रकार दक्षिणी द्वार पर महोदर, पश्चिमी द्वार पर विशाल राक्षसी सेना के साथ रावण-पुत्र मेघनाथ डटा हुआ है और स्वयं रावण उत्तरी द्वार पर उद्विग्न मन से खड□ा है। रावण की सेना में एक करोड□ से भी अधिक पैदल राक्षस हैं।

'हे राम! जब कुबेर ने रावण के साथ युद्ध किया था, उस समय रावण के साठ लाख राक्षस थे। मैं यह आपको इसलिए कह रहा हूं ताकि शत्रु-सेना की शक्ति को जानकर ही हम अपनी व्यूह-रचना करें।'

'तुम ठीक कह रहे हो लंकापति। पूर्व द्वार पर प्रहस्त का सामना कपिश्रेष्ठ नील करेंगे और बालि कुमार अंगद दक्षिणी द्वार पर अपनी सेना के साथ महोदर से भिड□ेंगे और पवनपुत्र हनुमान पश्चिमी द्वार पर मेघनाद से लड□ेंगे और मैं स्वयं लक्ष्मण के साथ उत्तरी द्वार पर आक्रमण करके लंका में प्रविष्ट होऊंगा। वानर राज सुग्रीव, रीछों के पराक्रमी राजा जाम्बवान और आप स्वयं नगर के बीच के मोर्चे पर आक्रमण करेंगे।'

'वानरों को युद्ध में मनुष्य का रूप नहीं धारण करना चाहिए, वानरों की सेना का हमारे लिए इस युद्ध का यही संकेत होगा इसलिए हम सात व्यक्ति ही मनुष्य रूप में शत्रु के साथ युद्ध करेंगे।'

यह रात्रि महाराज राम ने अनेक प्रकार की सम्पदाओं से सम्पन्न सुबेल पर्वत राज पर व्यतीत की।

लंकापुरी का सुबेल पर्वत शिखर से निरीक्षण करते हुए उन्होंने देखा कि भरी पूरी राक्षस नगरी ऐसी लग रही थी मानो आकाश में बनी हुई है, चारों तरफ दृष्टि दौड□ाते हुए उन्होंने देखा- सामने गोपुर की छत पर दुर्जेय राक्षस रावण बैठा है, जिसके दोनों ओर चंवर-डुलाए जा रहे हैं। काले मेघ के समान दिखलाई देने वाला उस राक्षस को देखकर सुग्रीव के मन में अकस्मात क्रोध भड□क उठा और उन्होंने आव देखा न ताव और वहां से सीधे गोपुर की छत पर छलांग लगा दी।

रावण इस अचानक होने वाले हमले से घबरा गया क्योंकि सुग्रीव एकदम उछलकर रावण के ऊपर जा कूदे और उसके मुकुट को खींचकर जमीन पर गिरा दिया।

रावण 'कौन है, कौन है' कहता हुआ चिल्लाता रह गया।

'मैं लोकनाथ भगवान श्रीराम का सखा और किष्किन्धा का राजा सुग्रीव हूं मूर्ख। आज तू मेरे हाथ से नहीं बच सकता।'

रावण ने उसे झटकते हुए नीचे गिराकर कहा, 'अबे चल बंदर की औलाद। जब तक तू मेरे सामने नहीं आया था, तभी तक सुग्रीव था, अब तू ग्रीवा हीन ही हो जा।' और यह कहकर रावण ने सुग्रीव को गोपुर की छत के फर्श पर पटक मारा। पर सुग्रीव भी अतुल बलशाली था, उसने रावण को गेंद की तरह उछालकर उसी तरह फर्श पर जोर से पटक दिया।'

फिर तो दोनों आपस में बुरी तरह गुंथ गए। शरीर पसीने से और खून से लथपथ हो गया। दोनों एक-दूसरे को हताश करने में लगे हुए थे। घूंसे, थप्पड□ और पंजों की मार से दोनों एक-दूसरे के खून के प्यासे हुए लड□ रहे थे।

सुग्रीव तो युद्ध में प्रवीण था, जब उस पर अपने बल का असर रावण ने न होते हुए देखा तो फिर माया से काम लिया। सुग्रीव उसकी यह चाल समझ गया और उसने रावण को अचम्भित कर दिया था, कपड□ फाड□ दिए थे, मुकुट गिरा दिया था और लहूलुहान कर दिया था, फिलहाल इतना काफी था। इसलिए उसकी माया की चाल से पहले ही सुग्रीव फिर छलांग लगाकर वहीं अपनी जगह उस पर्वत पर लौट आए।

अभी यहीं तो खड□ थे सुग्रीव, एकदम से कहां चले गये। राम देखते रह गए। पर जब सुग्रीव पस्त हालत में लौटे तो राम ने कहा, 'हे किष्किन्धा नरेश! तुम्हें यह क्या सूझी।'

'आपने देखा महाराज, उस अभिमानी की मैंने क्या गत बना दी। मैंने उसे गेंद की तरह उछाल दिया, वो देखिए सामने, वह अपने मुकुट अपने चाकरों से उठवा रहा है। उसका काला चेहरा मेरे नाखूनों की खरोंच से रक्तिम होकर कैसा भयानक लग रहा है।' राम ने सुग्रीव की पीठ थपथपाते हुए कहा, 'फिर भी हे वानर राज, तुम्हें यह दुस्साहस नहीं करना चाहिए था। देखो, अकेले इस तरह कभी शत्रु की मांद में नहीं घुसना चाहिए। राजा को ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए तुमने तो हम सबको संकट में डाल दिया था, आगे ऐसा दुस्साहस न करना।'

'महाराज, रावण को देखकर मैं अपने ऊपर नियंत्रण नहीं रख सका, वास्तव में मेरा वार जरा-सा ओछा पड□ गया, वरना मैं आज ही उस दुष्ट रावण को समुद्र में फेंक देता और सारा काम तमाम हो जाता।'

'खैर छोड□ा, इस समय हमें यह विचार करना है कि आगे किस प्रकार की व्यवस्था की जाए।' यह विचार करने के लिए सभी प्रमुख लोग मंत्रणा के लिए बैठ गए।

राम की सेना यथास्थान खड□ी थी और युद्ध के लिए केवल उसे मात्र आगे बढ□ने के आदेश की प्रतीक्षा थी।

राम ने सब प्रकार से यह विचार किया कि मैं अपराधियों को दंड देने वाला शासक हूं लेकिन सेना में जो बेचारे निरपराध मारे जायेंगे, उनके लिए मैं कैसे जल्दबाजी कर सकता हूं इसलिए हे वीरों, हमें यहां बैठकर यह भी विचार करना है कि युद्ध से पहले क्या क्या रावण को यह न कहलवा दिया जाय कि यदि वह चाहे तो अभी संधि का द्वार खुला है। इस पर विभीषण ने कहा,

'हे महाराज, आपका विचार तो बिलकुल उत्तम है? लेकिन वह दुष्ट रावण क्या इसे स्वीकार करेगा?'

राम ने कहा, 'हे लंकापति! यह मैं जानता हूं कि रावण मेरा यह प्रस्ताव कदापि स्वीकार नहीं करेगा क्योंकि यदि उसे स्वीकार करना ही होता तो वह सीता का अपहरण ही क्यों करता। वह दुष्ट तो पहले से ही दुराग्रही है, इसलिए उससे अपेक्षा के लिए हम यह नहीं कर रहे हैं कि वह हमारी शर्त स्वीकार करके युद्ध को टाल दे, बल्कि हम तो यह इसीलिए कह रहे हैं ताकि नीति संगत आचरण में हमें कल को कोई दोष न लगे। युद्ध से पूर्व इसीलिए हम एक बार यह अवश्य चाहते हैं कि रावण को इसकी विधिवत सूचना दें।

राम की सेना में सभी लोग नीति पर चलने वाले और धर्मज्ञ थे, इसीलिए जाम्बवान ने उसका समर्थन भी किया। यही राजधर्म भी है।

अत: सोच-समझकर योग्य व्यक्ति को रावण के पास भेजने का प्रश्न उठा। इसके लिए सबसे योग्य अंगद ही लगे।

राम ने अंगद से कहा, 'हे वत्स! तुम सर्वथा योग्य हो, बुद्धिमान और धैर्यवान हो, वाक्पटु और चपल भी हो। अत: तुम ही वहां जाकर रावण को यह संदेश दो कि ऐ राज्य लक्ष्मी से भ्रष्ट रावण! अब तेरे ऐश्वर्य के दिन समाप्त हो रहे हैं, तेरी विचार-शक्ति खत्म हो रही है, ब्रह्मा के वरदान से तुम्हें जो अभिमान हो गया है, उसके समाप्त होने के दिन आ गए हैं। यदि अब भी तुम अपने वंश, जाति और राज्य की रक्षा चाहते हो तो अपनी भूल का प्रायश्चित करते हुए विनीत होकर राम के सामने प्रस्तुत हो जाओ। इसी में तुम्हारी और तुम्हारे कुल की भलाई है। अन्यथा तुम्हारे इस सामूहिक वध पर कोई भी रोने वाला नहीं बचेगा।

'इसलिए तुम्हारी भलाई इसी में है कि तुम देवी सीता को सुरक्षित लौटा दो। याद रखो कि राम के प्रखर बाणों को तुम्हारा कोई भी वीर सह नहीं पाएगा, इसीलिए यदि तुम अब भी अपनी बात पर अडिग हो तो अपना श्राद्ध कर डालो। परलोक को सुधारने वाले दान-पुण्य कर लो और लंका को आखिरी बार जी भरकर देख लो।'

यह कहते हुए राम ने अंगद से कहा, 'हे प्रिय! कुशलता से यह समाचार तुम रावण को दे आओ।'

आदेश पाते ही अंगद परकोटे से छलांग लगाकर राजभवन में पहुंच गए जहां मंत्रियों सहित रावण मंत्रणा कर रहा था।

अकस्मात अपने सामने एक वानर को देखकर रावण की सभा के सभी सभासद उसके सम्मान में खड□ हो गये। जब रावण ने यह देखा तो वह क्रोध से भुनभुना गया। वास्तविकता तो यह थी कि वे यह जानकर ही डर गए थे कि वह बंदर फिर आ गया है क्योंकि इससे पहले हनुमान अपना परिचय भली-भांति दे चुके थे।

अंगद ने सभा में अपना परिचय देते हुए कहा, 'हे महाराज! हतप्रभ न हों, मैं यहां अकस्मात नहीं आया हूं। मैं बालि पुत्र अंगद हूं, आप मेरे नाम से परिचित होंगे।' 'हे महाराज! मुझे श्रीराम

ने यह संदेश दिया है, जो मैं आपके सामने रख रहा हूं- ऐ नृशंस रावण! जरा मर्द बनो और घर से बाहर निकलकर युद्ध में मेरा सामना करो। तुम देवता, दानव, यक्ष गन्धर्व, नाग आदि सभी के शत्रु हो, ऋषियों के लिए तो तुम कंटक रूप हो, मैं तुम्हें एक अवसर और देता हूं यदि तुम मेरे चरणों में गिरकर आदरपूर्वक कल के प्रात:काल से पूर्व सीता को नहीं लौटाओगे तो अरुण सूर्य की ताजी रश्मियों के साथ-साथ मेरे बाणों की अग्नि शलाकाओं को झेलना तुम्हारे लिए कठिन हो जाएगा। तुम्हारे अहंकार का मेरु पर्वत धरा पर गिरकर रेत के कणों में बदल जाएगा और जो आंधी बहेगी, वह तुम्हारे सारे ऐश्वर्य, वैभव और विलास को ले उड□गी। तुम सूनी आंखों से आकाश को देखोगे, लेकिन तुम्हें अपने सिर पर मुकुट नहीं मिलेगा और मुकुट ही क्या, तुम्हें अपने धड□ पर सिर भी नहीं मिलेगा। अब यदि वीर हो तो वीरतापूर्वक संधि करो और सीता को लौटा दो, अन्यथा अपने कुल, जाति और सैन्य-बल सहित मुझसे लड□कर परलोक गमन करो।'

'बस, बस, ऐ दुष्ट वानर! तू अपनी चपल बात बंद कर, बहुत सुन चुका हूं तेरे स्वामी राम की गाथा।' और यह कहते हुए रावण ने आदेश दिया कि इस वानर को पकड□ लो और मार डालो।'

'तुम मुझे मारोगे? हे लंकेश! जिसको बचपन में बालक सहस्रबाहु बालि कुमार ने अपनी घुड□साल में बंद करके उसे खूब छकाया हो, जिसे बालि ने छह महीने अपनी कांख में दबाकर रखा हो, तुम वही बलशाली रावण हो न? मैं तो तुमसे अपने पिता की पुरानी मित्रता के कारण तुम्हें समझाने आया था, पर यहां तो मुझे लगता है कि तुम शिष्टाचार की तो बात ही क्या, राजधर्म ही भुला बैठे हो। भला दूत से भी कोई ऐसा व्यवहार करता है! तुम तो राजा हो रावण, तुम तो राजधर्म जानते हो।'

लेकिन जब अंगद ने रावण के सैनिकों को अपनी ओर आते देखा तो वह यथावत खड□ा रहा, लेकिन जैसे ही उन्होंने अंगद को पकड□ने का प्रयास किया, वह तेजी से उछलकर राज्यसभा की बुर्ज पर बैठ गया और इस प्रकार उछला कि सारी सभा में खलबली मच गई और जो राक्षस उसे पकड□ने दौड□ थे, अपने बीच उसे न पाकर उनके सिर आपस में टकरा गए।

अंगद के उछलने से उस महल की छत फटकर गिर पड□ी और जिसके टुकड□ जब भीतर बैठे दरबारियों पर पड□ तो रावण भी अपने सिंहासन पर से गिर पड□ा। उस समय उसका मुकुट भी जमीन पर आ गया।

महाप्रतापी महाराज रावण, आपका मुकुट तो युद्ध से पहले ही आपका साथ छोड□ रहा है। आप अब अपने अहम की रक्षा क्या करेंगे। अब आपसे कल प्रात: काल युद्धभूमि में ही दर्शन होंगे, वैसे अभी मेरा प्रस्ताव समाप्त नहीं हुआ। हमें प्रात:काल से पूर्व तक आपके समर्पण की प्रतीक्षा रहेगी।

रावण क्रोध में भुनभुनाता रह गया और इससे पहले कि मेघनाथ या रावण के दल का कोई वीर उसे पकड□ने को उठता, वह छलांग लगाता हुआ आकाश मार्ग से राम-दल में आ गया।

अंगद की हंसी बंद नहीं हो रही थी। वह राम के चरणों का स्पर्श करके उछलता हुआ कभी

इधर बैठता, कभी उधर और सभी को हर्षमन करता हुआ वह कहने लगा, 'हे महाराज! आपकी कृपा से आज तो आनन्द आ गया। जब मैंने आपका संदेश उसे सुनाया, तो वह दुष्ट क्रोध में भर गया। जैसे ही उसके सैनिक मुझे पकड□ने को आए मैं उछलकर छत पर चढ□ गया, मुझे न पाकर उन सबके सिर आपस में टकराए और सबके मुकुट जमीन पर लोट गए।

'और हे श्रीराम। सबसे अधिक आनन्ददायक बात तो यह हुई कि वो मुझे वहां पहुंचा देख यह समझ बैठे कि वीर हनुमान दुबारा आ गया। और यह देखकर रावण की सभा में सारे सभासद मुझे देखकर खड□ हो गए। रावण भुनभुना उठा, उसने मुट्ठियां भींचकर अपने सभासदों की ओर घूरते हुए कहा तुम्हारी यह हिम्मत कैसे हुई कि एक छोटे से बंदर को देखकर सम्मान के लिए खड□ हो गए। तब अंगद ने रावण के क्रोध को शांत करते हुए कहा, महाराज! ये तो स्वागत में नहीं भय से डरकर खड□ हो गए।'

'हे राघव, जब मैं रावण की सभा की छत फाड□कर बाहर निकला तो उसकी हलचल से रावण अपने सिंहासन से गिर पड□ा और उसका मुकुट जमीन पर गिर गया, तब मालूम है मैंने उससे क्या कहा?'

राम ने हंसकर कहा, 'हां मालूम है तुमने उससे यही कहा होगा, अभी तो तुम्हारे सिर से केवल मुकुट गिरा है, अब भी संभल जा रावण, वरना तेरा सिर भी इस प्रकार कटकर कर गिर पड□गा।'

और फिर गंभीर होते हुए अंगद ने कहा, 'हे प्रभु! वह अहंकारी अब भी अपनी बात पर दृढ□ है।'

'मैं जानता हूं वीर अंगद। लेकिन राजधर्म का तकाजा यही था।'

इसके बाद राम हर्ष से भरकर गर्जना करते हुए युद्ध के लिए मोर्चे पर डट गए। उनके मुख से ऐसा लग रहा था मानो वे आज ही रावण का वध करके वैदेही को प्राप्त कर लेंगे।

वानरों के मुख्य महारथी वीर सुषेण ने अपने बहुसंख्यक वानरों के साथ लंका के उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम सभी दरवाजों को अपने नियंत्रण में ले लिया और बारी-बारी से उन पर विचरने लगे।

राम की सेना बानरों सहित लगभग सौ अक्षौहिणी थी।

इतनी विशाल समुद्र-सी फैली वानरों की सेना देखकर राक्षस भयभीत हो गए, जबकि लंका की चारदीवारी और खाइयां सभी वानरों से व्याप्त हो गईं।

यह देखकर किसी गुप्तचर ने रावण के दरबार में जाकर यह सूचना दी कि महाराज! बाहर से लंकापुरी को वानरों ने घेर लिया है, अब उसने नगर की रक्षा का पहले से भी दुगुना प्रबन्ध का आदेश दिया और वह अटारी पर चढ□ गया। अटारी पर चढ□कर उसने देखा, पर्वत, वन, कानन सब ओर लंगूर, वानर और भालू ही दिखाई दे रहे थे। वह अपने विचारों में दृढ□ था लेकिन इस महासमुद्र में वानरों की सेना को देखकर वह स्वयं को अजेय समझने वाला रावण भीतर-ही-भीतर घबराहट अनुभव करने लगा था। उसका मुख्य प्रश्न यही था कि वह इन सबका

विनाश कैसे करेगा?

विचारों में डूबा हुआ रावण सोच रहा था कि विजय होगी या पराजय, ये तो बाद की बात है लेकिन इन पर पार कैसे पाई जाएगी। ये वनवासी राम और लक्ष्मण इतनी बड□ी वानरों की सेना को खड□ी कर लेंगे, यह तो कभी सोचा भी नहीं था। इतनी बड□ी सेना को देखकर जब वह स्वयं घबरा रहा है तो उसके राक्षस दल का तो मनोबल ही टूट जाएगा। रावण ने अनुभव किया कि उसके पीछे कोई खड□ा था, सांसों की गरमाहट से उसे लगा कि यह तो कोई आत्मीय है। रावण ने पीछे मुड□कर देखा तो उसका उत्साही पुत्र मेघनाद खड□ा था।

'आपके मुखमंडल पर चिंता की रेखाएं पिताश्री।' 'मेरे मुखमंडल को छोड□ो, लंका के परकोटों के बाहर कीड□-मकोड□ों की पैदावार की तरह उपजे इन असंख्य पटबीजनों को देखो जो भुनगों की तरह भिनभिन कर रहे हैं। ये समुद्र-सा विशाल वानर समूह अगर एक साथ हमारे राक्षसों ने देख लिया तो उनका मनोबल इतनी भीड□ देखकर ही गिर जाएगा। लंका की सारी आबादी के बराबर की यह सेना, कैसे इन सबका विनाश होगा मेघनाद?'

'पिताश्री। आप तो विश्वविख्यात वीर हैं, आपको अपने भुजदण्डों पर तो बहुत भरोसा है तो आपकी बात तो नहीं कहता, पर मेरे तरकश से छोटे से बाण ही इन सबको जलाकर राख कर देंगे।'

एक तरफ रावण और मेघनाद इस विशाल वाहिनी को देखकर मुकाबला करने की हिम्मत जुटा रहे थे तो दूसरी ओर राम इतने बड□ विशाल समूह को उमंग में उछलते-कूदते देखकर प्रसन्न हो रहे थे।

अब वे अपनी सेना के साथ आगे बढ□ते हुए मन-ही-मन सीता का स्मरण कर रहे थे-

किस प्रकार दुष्ट ने मेरी प्राणप्रिया का अपहरण किया होगा? मेरे वियोग में वह कितनी दुर्बल हो गई होगी।

यह ध्यान आते ही राम ने एक साथ मानो अपनी क्रोधाग्नि की लपटें उगलते हुए आदेश दिया- 'आक्रमण!'

राम के आदेश देने की देर थी कि लंका के चारों दरवाजों पर भयानक मूसलों की दस्तक होने लगीं।

रावण के सैनिक इससे पहले कि दरवाजा खोलते, वानरों ने अपने मूसलों से और भयानक आघातों से रावण के किले के द्वार तोड□ डाले और देखते-ही-देखते वानर दल लंका में घुस गया।

जैसे सीधी खड□ी हुई ईंटों की कतार बच्चे खेल में पहले तो खड□ी करते हैं और फिर हलके से एक ईंट को दूसरों पर गिराते हैं तो जहां तक कतार जाती है, ईंटें अपने आप एक-दूसरे पर गिरती चली जाती हैं, उसी प्रकार वानर सेना के इस आक्रमण से राक्षस सैनिक एक के ऊपर एक गिरते हुए धराशायी हो गये।

क्या व्यवस्थित आक्रमण था राम का।

वानर सेनापति पर्वतों के बड□-बड□ शिखर उठाकर और वृक्षों को उखाड□कर प्रहार करने के लिए लंका के परकोटों पर चढ□ गये। वे तो वानर थे इसीलिए वृक्ष और पर्वत शिखरों से युद्ध करने लगे।

बड□-बड□ हाथियों के समान विशाल शरीर वाले ये वानर लंका के सोने के दरवाजों को धूल में मिलाते हुए जय राम की, जय लक्ष्मण की, जब राजा सुग्रीव की कहते हुए राक्षसों पर टूट पड□।

स्वयं राम, लक्षण और सुग्रीव के साथ उत्तरी द्वार पर मोर्चा संभाले थे। इनके साथ विशाल पराक्रमी एक करोड□ वानर थे। साथ ही ऋक्षराज एक करोड□ रीछों के साथ राम के दूसरी ओर खड□ थे, गदा लिए विभीषण उनके साथ खड□ थे।

यह देखकर रावण ने अपनी सेना को तुरंत बाहर निकलने की आज्ञा दी।

फिर तो राक्षस सेना भी गर्जना करती हुई भिड□ गई।

दोनों ओर से तलवारों की टकराहट से मानो चमकती हुई मिली और पदाघात से उठती हुई धूल से छाए बादल-ऐसा लगने लगा मानो आकाश काले बादलों से घिरा है और उसमें बिजली चमक रही है।

लक्ष्मण ने रावण की सेना के महारथी विरूपाक्ष को काफी छकाने के बाद एक मारक बाण मारकर वीरगति को पहुंचा दिया।

नील और निकुम्भ में भयानक मारक युद्ध छिड□ गया। वानर राज द्विविध पहले तो अशनिप्रभ से काफी घायल हो गया लेकिन फिर उसने क्रोध में एक शाल वृक्ष से चोट करते हुए अशनिप्रभ को मार गिराया। विद्युन्माली ने सुषेण को घायल करना शुरू कर दिया तब क्रोध में वीर सुषेण ने विद्युन्माली पर एक विशाल-पर्वत शिखर उठाकर फेंका और उसके टुकड□-टुकड□ कर दिए।

शाम होते-होते वानरों ने रावण की सेना का बहुत-सा भाग मार गिराया।

सूर्यास्त के बाद रात्रि प्राणों का संहार करने वाली बन उठी। दोनों ही पक्षों के योद्धा अंधकार में एक-दूसरे से पूछकर, क्या तुम राक्षस हो, अथवा क्या तुम वानर हो, ऐसा कहते हुए एक-दूसरे पर प्रहार करते रहे।

राक्षसों को तो अंधकार में विचरण का पूरा अभ्यास था जबकि वानर तो रात्रि में वृक्ष की शाखाओं पर विश्राम के अभ्यासी थे इसीलिए उन्हें रात्रि-युद्ध में थोड□ा-सा कष्ट हुआ लेकिन उनके साहस में कोई अंतर नहीं आया।

इस दारुण अंधकार में राक्षस हर्षित होकर बाण वर्षा करते हुए राम पर ही धावा बोलने लगे।

जब राम ने यह देखा तो उन्होंने अग्नि बाण छोड□कर चारों तरफ प्रकाश फैला दिया और उस प्रकाश के घेरे में जितने भी राक्षस आए वे मर्माहत होकर या तो प्राण त्याग गए या फिर भाग खड□ हुए।

रणभूमि में अंगद ने रावण के पुत्र इंद्रजीत को ही घायल कर दिया, उसके सारथी और घोड□ को मार गिराया।

अपनी को इस प्रकार परास्त होते देख इंद्रजीत वहां से भाग खड□ा हुआ।

अंगद की इस विजय पर सुग्रीव और विभीषण ने अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुए उसे साधुवाद दिया।

जैसे अधूरी मार खाया सांप फिर से लौटकर शत्रु पर घातक हमला करता है उसी प्रकार मेघनाद भी वानरों की चोट खाकर और अंगद से परास्त हुआ भयानक क्रोध करता हुआ अदृश्य रूप में ही बाण-वर्षा करने लगा।

मेघनाद ने अपने सर्पमय बाणों से राम और लक्ष्मण को भी घायल कर दिया और उस दुष्ट ने राम और लक्ष्मण को मोह में डालते हुए सर्प बाणों के बंधन में बांध लिया। मायावी राक्षस कुमार सामने युद्ध करने में तो समर्थ नहीं हो सका इसलिए उसने माया का प्रयोग किया।

सुषेण आदि को आज्ञा देते हुए राम ने कहा, 'देखो इस दुष्ट का पता लगाकर बताओ कि दुष्ट कहां है?' लेकिन इन्द्रजीत की माया के सामने उनकी एक न चली। अदृश्य रूप में ही उसने उन वानरों पर भीषण प्रहार करना प्रारम्भ कर दिया।

इधर राम और लक्षण भी उसके बाणों से बहुत बुरी तरह से घायल हो चुके थे और धीरे-धीरे उनकी ऐसी दिशा हो गई कि आंख उठाकर देखने की भी शक्ति नहीं रह गई और वे अपना कृश शरीर लिए हुए पृथ्वी पर गिर पड□।

सारा शरीर रक्त से नहा गया था, उनके पास ही लक्ष्मण भी राम की यह दशा देखकर शोक मग्न हो गए और व्याकुल होकर विलाप करने लगे। दोनों भाई इस समय नागपाश में बंधे पृथ्वी पर अचेत पड□ थे।

विभीषण को ढूंढ□ने गए हुए वानर वीर अंगद, सुषेण आदि जब लौटे और उन्होंने राम की यह दशा देखी तो सभी एक स्वर से चीत्कार कर उठे, लेकिन विभीषण को यह समझने में देर नहीं लगी कि यह मेघनाद की माया का प्रभाव है। विभीषण ने माया के द्वारा ही वरदान के प्रभाव से इंद्रजीत को देख लिया। वह राम और लक्ष्मण को किस प्रकार अपने पाश में बंधा देखकर प्रसन्न हो रहा था मानो कह रहा था, 'जिसके कारण मेरे पिता चिंता से सो नहीं पाते थे और लंका वर्षाकाल में लबालब भरी नदी की भांति व्याकुल हो रही थी, उस अनर्थ को आज मैंने शान्त कर दिया।'

उसकी सेना के राक्षस वीरों ने जब साक्षात अपने सम्मुख राम और लक्ष्मण को इस प्रकार बेसुध देखा तो वे भी उछल-कूद करते हुए अपना हर्ष प्रकट करने लगे।

मेघनाद आज के इस रात्रि-युद्ध में राम और लक्ष्मण को इस प्रकार मरा हुआ जानकर युद्ध विजयी उल्लास के साथ प्रसन्न होता हुआ लंकापुरी चला गया।

सुग्रीव आदि के मन में यह स्थिति देखकर भय व्याप्त हो गया।

'इस प्रकार दीन-हीन होने से कोई लाभ नहीं मित्र, अपने इन आंसुओं के वेग को रोको, युद्ध में तो ऐसी स्थिति होती ही है। वानर राज! स्वयं को संभालो क्योंकि तुम्हारे ही उत्साह पर ये सारी सेना टिकी हुई है।'

अपने हाथ में जल लेकर उसे मंत्रपूरति करके विभीषण ने सुग्रीव के नेत्रों पर लगाया और कहा, 'हे वानर सम्राट। यह समय घबराने का नहीं है, हमें साहस से काम लेना होगा। राम के लिए यह संकट कुछ भी नहीं है, चेत आने पर ये दोनों हमारा भय दूर कर देंगे।' विभीषण से इस प्रकार उत्साहवर्द्धक बात सुनते हुए जब सुग्रीव ने अपने निराश हतोत्साहित और भगदड□ की स्थिति में अपनी सेना को देखा तो उन्होंने गदा ऊपर उठाकर यह संकेत दिया कि-

'अभी हमारा उत्साह ठंडा नहीं पड□ा है।'

रावण के लिए तो यह बड□ा ही हर्ष पैदा करने वाला समाचार था। लंका के भवनों से फैला राम के अचेत होने का यह समाचार जब मिथिलेश कुमारी सीता के पास पहुंचा तो वह अत्यन्त विचलित हो गईं।

रावण के आदेश से ही वह पुष्पक विमान पर बैठकर श्रीराम को देखने युद्ध-भूमि में गईं।

सामने अचेत राम और लक्ष्मण पड□ थे किन्तु उनके चेहरे पर जो आभा थी वह उनके जीवित होने का संकेत थी। सीता को समझाते हुए उसके साथ आई, उसकी सदा हितैषी त्रिजटा ने कहा, 'मन को उदास मत करो मैथिली। यह दुष्ट राक्षसों की माया का प्रभाव है और शीघ्र ही समाप्त हो जाएगा। कई बार नारियां पुरुष की अंत:प्रेरणा का आधार होती हैं, संभवत: राम भी तुम्हें बहुत दिन से न देख पाने के कारण स्वयं को कमजोर अनुभव कर रहे थे। शायद इसीलिए उन्होंने यह सोचकर कि हमारे मरने की खबर पर रावण मैथिली को यह विश्वास दिलाने के लिए अवश्य ही रणभूमि में भेजेगा, मुझे लगता है कि राम अपनी आंतरिक आंखों से तुम्हें देखकर अपने व्याकुल मन को संतोष दे रहे हैं और मानो कह रहे हैं कि हे सीता, बस थोड□ ही समय में तुम इस बंधन से मुक्त हो जाओगी।' 'हे त्रिजटा तुम तो बहुत बुद्धिमान और गुणी हो, तुमने मुझे पग-पग पर सहयोग भी दिया है और बल भी दिया है।'

यह कहते हुए वह पुन: अशोकवाटिका लौट आई।

सीता के लौटते ही राम नागपाश से मुक्त हो गए और फिर से उसी शक्ति के साथ जाग उठे लेकिन जब उन्होंने लक्ष्मण को अपने पास अचेत देखा तो विलाप करने लगे किन्तु तभी सुग्रीव ने कहा, आप राम हैं भगवान! और रावण की कामना कभी नहीं पूरी हो पाएगी। तभी समुद्र में हलचल मचाने वाली, पर्वतों को कंपित करने वाली हवा चली और दो ही घड□ी में वहां महात्मा गरुड□ उपस्थित हो गए।

गरुड□जी को देखते ही वे महाबली नाग तनिक भी नहीं ठहर सके और कूच कर गये। गरुड□ के स्पर्श से दोनों ही भाइयों के घाव ठीक हो गए।

राम ने प्रसन्न होकर कहा, 'हे गरुड□ आपकी कृपा से हम यह संकट लांघ गए। आप बड□ गुणी हैं।'

श्रीराम और लक्ष्मण को इस प्रकार निरोग देखकर वानरों ने तुमुलनाद करना शुरू कर दिया और यह नाद जब रावण की सभा तक पहुंचा तो वह चौंक गया। खोज-खबर लगाने पर उसे मालूम हुआ कि राम और लक्ष्मण तो फिर से शक्तिवान होकर युद्धभूमि में उन्हें ललकार रहे हैं।

रावण की सेना फिर से वानरों के साथ युद्ध में जुट गई। अब तो धीरे-धीरे रावण के महारथी काल के गाल में जाने लगे। अंगद ने भयानक राक्षस वज्रदंष्ट को अपनी गदा से मार डाला। हनुमान ने अकंपन का वध कर दिया, जिस पर रावण को बड□ा गर्व था। नील ने रावण के कुशल सेनापति प्रहस्त को मार डाला।

यह सुनकर तो रावण बौखला उठा और स्वयं अग्नि के समान लपटें बिखेरता वह साक्षात यम के समान युद्धभूमि में आकर खड□ा हो गया।

लंकापुरी से बाहर आकर रावण ने देखा कि भयंकर गर्जना करने वाली वानर-सेना हाथों में पर्वत, शिखर और वृक्ष लिए युद्ध के लिए तैयार थी।

विभीषण ने रावण की सेना में उसके साथ आने वाले वीरों का परिचय कराया-इन्द्रजीत, हाश्री के महोदर, पिशाच, त्रिशिरा, कुम्भ, निकुम्भ, नरान्तक और स्वयं रावण ऐसे लग रहे थे मानो आज इस वानर सेना को वे धराशायी कर देंगे।

राक्षसराज रावण को युद्धस्थल में स्वयं आया जानकर सुग्रीव ने एक बड□ा पर्वत खण्ड रावण के सिर पर दे मारा लेकिन रावण ने अपने बाणों से उसके टुकड□-टुकड□ कर दिए। थोड□ी ही देर में सुग्रीव अचेत होकर भूमि पर गिर पड□। वानरों ने जब देखा तो वे सब मिलकर रावण पर टूट पड□ लेकिन रावण के बाण नहीं सह सके और भाग खड□ हुए। उत्साही लक्ष्मण रावण से युद्ध करने आए और उन्होंने अपने बलों का प्रहार रावण पर करना शुरू कर दिया। तभी हनुमान भी अपने प्रबल वेग से रावण पर टूट पड□। रावण के एक घूँसे ने उन्हें चक्कर घिन्नी कटा दी लेकिन इसके प्रत्युत्तर के बाद रावण स्वयं कांप उठा। लेकिन दूसरे ही वार में हनुमान फिर विचलित हो गए। रावण पूरी सेना पर भारी पड□ रहा था, वह अपने आग्नेय अस्त्र और दिव्यास्त्रों का प्रयोग करते हुए लक्ष्मण के सामने आ गया और उन पर भयानक प्रहार करने लगा। लक्ष्मण ने रावण के धनुष की प्रत्यंचा काट दी और उसे अचेत कर दिया। इस समय रावण का शरीर रक्त से नहा उठा था, तभी उसने ब्रह्माजी द्वारा दी हुई शक्ति उठा ली। लक्ष्मण ने वह शक्ति अपने वक्षस्थल पर झेल ली। वह उस शक्ति से आहत होकर पृथ्वी पर गिर पड□।

हनुमान ने जब यह देखा तो वे रावण पर टूट पड□ और उसे नीचे गिरा दिया। जब वह मूर्च्छित होकर अपने रथ के पिछले भाग में गिर पड□ा तभी उसकी वह शक्ति लक्ष्मण को अचेत करके पुन: रावण के रथ पर लौट आई, तब तक लक्ष्मण भी चेतना में आ चुके थे।

राम ने जब यह देखा तो अपने प्रखर बाणों से रावण को रथहीन करके उसकी छाती में भारी आघात किया। वह व्याकुल हो गया और मानो अपना प्रभाव खो बैठा-ऐसा लगने लगा। उसके माथे पर पसीना आ क्या था, हाथ कांप रहे थे और अब और कोई उपाय न देख रावण वापिस लंका में लौट आया।

राम का मुकाबला करने के लिए अब केवल कुंभकरण रह गया था।

रावण ने बड□ यत्न से कुंभकरण को उठाया और उसे सारी घटना से परिचित कराते हुए बताया कि इस समय वह किस संकट में आ गया है।

'तुम बहुत मूर्ख हो रावण। भला घर बैठे-बिठाए तुमने यह मुसीबत क्यों मोल ले ली? इसका सबक तो तुम्हें मिलना ही है। मन्दोदरी और विभीषण ने तुमसे जो कहा था, वह हित के लिए ही कहा था, लेकिन तुमने किसी की नहीं मानी।'

'यह समय भाषण का नहीं है कुंभकरण! मैं तुम्हारी सहायता चाहता हूं।'

कुंभकरण ने जब रावण को इस प्रकार निराश देखा तो भ्रातृ-स्नेहवश उसने कहा, 'मैं तुम्हारे लिए राम से लडूंगा और यदि विधाता ने चाहा तो निश्चय ही तुम्हारे शत्रुओं को परास्त करके उनके कटे सिर तुम्हारे चरणों में डाल दूंगा।'

कुंभकरण ऐसा कहते हुए बड□ उत्साह से युद्ध के लिए चला गया।

कुंभकरण लड□ने आया है, यह सुनकर निशाचरों में एक उत्साह की लहर फिर से दौड□ गई। उधर वानर भी अंगद के नेतृत्व में पूरी शक्ति से जूझ गये।

कुंभकरण तो भयानक राक्षस था इसलिए जब वह भयानक उत्पात मचाने लगा तो राम ने अपने एक तीखे बाण से कुंभकरण की एक बांह काट डाली और दूसरे बाण से दूसरी।

कटी हुई बांह लिए वह राक्षस ज्यों ही आर्तनाद करता हुआ राम पर टूटने के लिए आगे बढ□ा, राम ने उसके दोनों पैर भी काट डाले। अब वह एक मांसपिंड की तरह गतिहीन अंश होकर रह गया। और इसके बाद जैसे कभी इन्द्र ने वृत्तासुर का मस्तक काटा था, राम का बाण कुंभकरण का मस्तक ले उड□ा।

अपने सामने कुंभकरण का कटा मस्तक देखकर रावण तो शोक से मूर्च्छित हो गया। वास्तव में कुंभकरण का मरण लंका के लिए एक बड□ी हानि थी।

कुंभकरण के मरने के पश्चात, नरान्तक, अतिकाय, महोदर जैसे महावीरों की भी यही दशा हुई।

अब तो रावण को बहुत चिंता हुई और अपनी पराजय को सामने देखकर मानो उसकी आंखों में आंसू ही आ गये और चारों तरफ अंधकार-ही-अंधकार दिखाई देने लगा। पहली बार उसे लगा कि उसने किसी बड□ी शक्ति को अनायास ही अपना शत्रु बना लिया है।

पिता को इस प्रकार अधीर होता देखकर मेघनाद उन्हें सांत्वना देते हुए युद्धभूमि में आ डटा। आज वह प्रचण्ड सूर्य के समान अग्निबाण फेंक रहा था और ऐसा लग रहा था कि वह संध्या तक सारी वानर सेना को भस्म कर देगा।

वानरों का उस पर आज कोई प्रभाव नहीं हो रहा था। तब वीर लक्ष्मण ने इन्द्रजीत को ललकारते हुए अपने भीषण बाणों की चपेट में ले लिया लेकिन वह तो मानो आज काल का प्रतिबिम्ब बना हुआ था।

लक्ष्मण को उसने अपने शक्ति-प्रहार से मूर्च्छित कर दिया। रात्रि हो चुकी थी। इस मूर्छा का उपाय तो कुछ करना ही था। इन्द्रजीत आज भी विजयी होकर लौटा था।

लक्ष्मण को इस प्रकार मूर्च्छित देखकर सबके चेहरों पर चिंता की रेखाएं खिंच आई थीं, तभी जामवन्त ने हनुमान को बुलाया।

यह सुनते ही तुरन्त हनुमान उनके पास आए और बोले, 'कहिए मेरे लिए क्या आज्ञा है ऋक्षराज।'

'तुम्हें समुद्र के ऊपर-ऊपर उड□कर दूर का रास्ता तय करते हुए हिमालय तक जाना होगा और वहां से अत्यन्त दीप्तिमान औषधियों का एक पुंज लाना होगा। वहां पर मृत संजीवनी, विशल्यकरणी, सुवर्णकरणी, और संधानी नामक औषधियां विद्यमान हैं, तुम्हें उन सभी औषधियों को लेकर शीघ्र ही लौट आना होगा और वानरों को प्राणदान देकर आश्वस्त करना होगा।'

जामवन्त की बात सुनकर पवनपुत्र हनुमान उसी तरह असीम बल से भर गए जैसे महासागर वायु के वेग से व्याप्त हो जाता है।

वीर हनुमान एक पर्वत शिखर पर खड□ हो गए और उस उत्तम पर्वत को पैरों से दबाते हुए द्वितीय पर्वत के समान दिखाई देने लगे। उनके दबाते ही वह पर्वत शिखर हिलने लगा और पृथ्वी में हलचल पैदा हो गई। और इसके बाद वायु वेग के समान वे पर्वतराज हिमालय की ओर चल दिए।

कैलाश पर पहुंचकर जामवन्त के द्वारा निर्दिष्ट औषधियां देखते ही वे अत्यन्त प्रसन्न हो गये और फिर उन्होंने उस पर्वत खण्ड को ही उखाड□ लिया जिस पर वे औषधियां लगी थीं। और फिर वे राम के पास आ पहुंचे।

हनुमान को आया देखकर सब ओर प्रसन्नता की लहर दौड□ गई। राम और लक्ष्मण शीघ्र ही उस महा-औषधि को लेकर स्वस्थ हो गए। उनके शरीर से बाण निकल गए। लंका में जबसे वानरों और राक्षसों में लड□ाई शुरू हुई तभी से वानर वीरों द्वारा जो राक्षस मारे जाते, वे समुद्र में फेंके जाते थे। यह इसीलिए किया जाता था ताकि वानरों को यह मालूम ही न हो सके कि कितने राक्षस मरे।

हनुमान ने राम लक्ष्मण आदि के चेत हो जाने पर वह औषधि खण्ड फिर उसी स्थान पर पहुंचा दिया और लौटकर सेना में आ मिले।

कुंभकरण मारा गया। रावण के अनेक पुत्रों का संहार हो गया। अब रावण लंकापुरी की रक्षा का क्या प्रबन्ध कर सकता है, यह सोचकर सुग्रीव ने अपनी सेना को यह आदेश दिया कि वह मशाल लेकर लंकापुरी पर धावा बोल दें।

यह आज्ञा पाते ही वानर सेना कूच कर गई और देखते-ही-देखते लंका के बड□-बड□ पर्वताकार महल आग की चपेट में आकर धराशायी होने लगे। जो लोग घरों में थे, वे बाहर निकल आए। जो बाहर थे, वे बचने के लिए इधर-उधर भाग रहे थे। सोई हुई स्त्रियां आग से दग्ध व्याकुल होकर चीख-पुकार कर रही थीं। सारा वातावरण धुएं से आच्छादित हो गया था। जो

भीतर थे वे घुटन से मरने लगे और जो बाहर भागे, वे वानरों के आक्रमण से धराशायी हो गए।

अब राम ने अपने धनुष से महादेव शंकर की तरह कुपित होकर अपना बाण चला दिया। लंकापुरी का वह तोरण द्वार, जो कैलाश के समान ऊंचा था, टूटकर जमीन पर बिखर गया और इस प्रकार पूरी सेना लंका में घुस गई।

कुंभकरण के पुत्र कुम्भ और निकुम्भ भी मारे गए।

जब रावण ने यह देखा तो उसने मकराक्ष को भेजा और वह भी राम के बाण के आघात से यमपुरी प्रस्थान कर गया।

यह देखकर कुपित इन्द्रजीत युद्ध में आ डटा। उसने फिर से अपनी माया रचकर सीता के मृत शरीर को युद्ध में दर्शाकर राम को हतोत्साहित करने का प्रयास किया। राम विचलित भी हुए लेकिन-

'आप। इस प्रकार व्याकुल हो रहे हैं श्रीराम! यह सत्य नहीं है, यह केवल इस दुष्ट राक्षस की माया है, जो पहले आपको नागपाश में बांधकर छल गई थी और अब मायावी सीता के रूप में आपको विचलित कर रही है।'

विभीषण की यह बात सुनकर राम फिर व्यवस्थित हुए और अब इन्द्रजीत का वध करने के खयाल से स्वयं लक्ष्मण इन्द्रजीत पर भयानक वार करने लगे।

एक-दूसरे को जीतने की इच्छा रखनेवाले लक्ष्मण और इन्द्रजीत अब भयानक मारकाट मचाने लगे। एक-दूसरे पर प्रहार करते वे वीर थकते नहीं थे।

लक्ष्मण को थोड□ा विश्राम देने के खयाल से अब विभीषण भी अपने धनुष को खींचते हुए आग बरसाने लगे और अपने पास खड□ वानर वीरों को देखकर कहने लगे, 'इस युद्ध के मुहाने पर अब यह रावण का एकमात्र सहारा तुम्हारे सामने खड□ा है। गाय की खुर के बराबर यह छोटा-सा राक्षस है, यह मेरा भाई-पुत्र है अत: मेरे लिए इसका वध करना अनुचित है, इसका विनाश तो लक्ष्मण ही करेंगे। इसे तुम लोग चारों तरफ से घेरकर हतोत्साहित करो।'

और वानरों ने भय छोड□कर चारों तरफ से राक्षसों की सेना पर धावा बोल दिया। लक्ष्मण ने अपने तीक्ष्ण बाणों से इन्द्रजीत के सारथी को मार दिया और पैदल चलने को बाध्य इन्द्रजीत को देखकर लक्ष्मण भी रथ से उतर गए और अपने बाणों से उस पर प्रहार करने लगे। लक्ष्मण ने इन्द्रजीत का धनुष काट डाला।

अपने-आपको इस प्रकार हतोत्साहित देखकर वह दुष्ट राक्षस चकमा देकर लंकापुरी भाग गया और फिर एक सुन्दर रथ पर सवार होकर युद्ध के लिए आ डटा। लेकिन लक्ष्मण तो आज मानो साक्षात काल का रूप थे।

अपने सामने अकस्मात् विभीषण को आया देखकर इन्द्रजीत ने उनके मुख पर तीन बाण मारे और लोहे के फलों से उनके मुख को विदीर्ण कर दिया विभीषण ने क्रोध में मेघनाद के घोड□ों को मार दिया। सारथी पहले ही मर चुका था, फिर भी मेघनाथ ने अपने चाचा पर शक्ति का प्रहार किया।

लक्ष्मण यह सब देख रहे थे, उन्होंने शीघ्र ही वह शक्ति काट डाली और अपने पांच प्रलयंकारी बाणों से इंद्रजीत की छाती को बेध दिया और फिर देखते-ही-देखते वह महावीर इन्द्र को जीतने वाला क्रूरकर्मा राक्षस अपने कटे सर और भुजाओं से छिन्न-भिन्न होकर पृथ्वी पर गिर पड□ा।

अब क्या था बानर सेना में हर्ष की लहर दौड□ गयी क्योंकि रावण के तूणीर में केवल वह अकेला वह स्वयं ही वीर रह गया था। उसके शेष वीर मर गये थे।

इन्द्रजीत के वध का समाचार रावण के लिए स्वयं अपने वध का समाचार था, अपनी पराजय का समाचार था। उसे लगने लगा कि अब समस्त देवता, लोकपाल और विधाता भी मेरे विपरीत हो गये हैं और उसे अपनी पराजय सामने खड□ी दिखलाई देने लगी। वह सोच रहा था कि अब तो कोई मेरा प्रेत कर्म करने वाला भी नहीं बचा।

अपने पुत्र के वध से दु:खी हुआ वह रावण बहुत क्रोध में आ गया और उसने सोचा कि अब तो सीता को मार डालना ही अच्छा है।

उसके सामने कोई भी राक्षस आने का साहस नहीं कर पा रहा था। वह अब भी दंभ में यह सोच रहा था कि मेरे सामने ब्रह्मा का दिया हुआ कवच है। रणभूमि में इन्द्र भी मेरा सामना करने में समर्थ नहीं हैं, तभी उसे खयाल आया कि मेघनाद ने तो मायावी सीता का वध करके राम को विचलित करने का प्रयास किया था लेकिन मैं तो सत्य ही सीता का वध कर दूंगा।

लेकिन मूर्ख और अहंकारियों में भी कोई विवेकशील व्यक्ति होता ही है। रावण को यह संकल्प करते देख उसके एक बुद्धिमान मंत्री सुपार्श्व ने कहा- 'हे महाराज! जिस वीरता से आपने अब तक यह युद्ध लड□ा है, अब थोड□ी से समय के लिए आप कायर बनकर स्त्री-वध का कलंक अपने माथे पर क्यों ले रहे हैं? आप तो शूरवीर हैं, इस क्रोधाग्नि को राम पर उतारकर अपने मन को शान्त कीजिए और राम का वध करके सीता का वरण कीजिए।'

रावण के मन में यह बात घर कर गई और वह राम से युद्ध करने के लिए चल दिया।

रणभूमि में अब राम और रावण आमने-सामने थे। राम के तीक्ष्ण बाण रावण को आहत कर रहे थे। इस पर भी पुरुष सिंह काल के समान बाण-वर्षा कर रहा था।

अकस्मात रावण ने अपने सामने जब विभीषण को देखा तो उसने उस पर प्राणघातक हमला कर दिया लेकिन लक्ष्मण सचेत थे, उन्होंने उस शक्ति को बीच में ही काट डाला तो रावण ने कुपित लेकर विषधर सर्प के समान भयंकर शक्ति लक्ष्मण पर छोड□ दी और लक्ष्मण राम के देखते धराशायी हो गए। उधर रावण अपने-आपको अकेला घिरा हुआ जानकर भागा खड□ा हुआ।

राम ने जब भाई को इस प्रकार अचेत देखा तो एक बार फिर हनुमान को पुकारा गया। तब सुषेण ने राम को सांत्वना देते हुए बताया कि लक्ष्मण अभी जीवित हैं, केवल अचेत हैं।

सुषेण ने हनुमान से कहा, 'हे वीर! एक बार तुम्हें फिर हिमालय के शिखर पर जाना होगा और वहां-से वह अमृतकारी औषधि लानी होगी।'

कहने की देर थी, हनुमान फिर उस पर्वत शिखर को उठा लाए और कुछ देर में लक्ष्मण निरोग

होकर चेतन खड□ हो गए।

यद्यपि लक्ष्मण कुछ ही देर के लिए अचेत हुए थे, लेकिन इस थोड□ से काल में राम को ऐसा लगा कि मानो उनकी दोनों भुजाएं कटकर गिर पड□ी हों और शरीर प्राणहीन हो गया हो। ऐसे में सीता को पाकर भी वे अयोध्या कैसे लौट पायेंगे, मां सुमित्रा को क्या जवाब देंगे और कौशल्या मां ने तो चलते समय यह कहा था कि हे वीर पुत्र तुम लक्ष्मण के साथ ही शोभायमान हो, इसी तरह लौटोगे तो ही शोभा पा सकोगे। यदि ऐसे में मेरे प्रिय भाई को कुछ हो गया तो मैं क्या करूंगा?

लेकिन हनुमान के कुशल सेवा-भाव से अब लक्ष्मण स्वस्थ मन से भाई के कष्ट का निवारण कर चुके थे।

लक्ष्मण को इस प्रकार स्वस्थ और जीवित पाकर राम को मानो एक अमोल निधि मिल गई और वे भावावेश में लक्ष्मण से गले मिलने लगे और रो पड□।

वानर सेना ने लक्ष्मण को पुन: उठते देख लिया तो वे सभी खुश होकर उछल-कूद करने लगे।

सुग्रीव जामवंत, नल-नील सभी के चेहरे कुछ देर पहले तक लटके हुए थे लेकिन अब मानो सभी में पुन: प्राण का संचार हो रहा था।

'हे लक्ष्मण यदि तुम्हें कुछ हो जाता तो मैं कैसे जीवित रह पाता, इस विजय का क्या करता? तुम्हारे बिना तो मुझे सब ओर अंधकार-ही-अंधकार लग रहा था।' 'आप तो सब कुछ के जानने वाले हैं तात! आपके मुख से ये बातें शोभा नहीं देती। और फिर आपके रहते कोई मेरा बाल बांका कैसे कर सकता है। हे सत्यपराक्रमी। चलिए अपना धनुष उठाइए और रावण का वध करके अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण कीजिए। अभी तो आपको महाराज विभीषण को लंका का राज्य सौंपना है और देवी सीता को बंधन से मुक्त कराना है। आप इतने निराश न हों।'

'और ये जो सूर्य अभी-अभी पूर्व से उदय हुआ है, पश्चिम तक जाते-जाते रावण के रक्त से लाल हो जाएगा। हम सबकी यही अभिलाषा है कि आज हम युद्ध की इस अंतिम संध्या पर रक्तिम सूर्य का स्वागत करना चाहते हैं।'

'तुम ठीक कहते हो लक्ष्मण! आज मैं रावण को बहुत देर तक जीवित नहीं रहने दूंगा।' सामने लंका के मुख्य द्वार पर रावण रथ पर बैठा हुआ सेना का नेतृत्व करता युद्ध-भूमि की ओर बढ□ रहा था और इधर राम भूमि पर खड□ थे।

राम तो इस पृथ्वी से राक्षसों का वंश समूल नष्ट करने के लिए कृत संकल्प थे तो फिर दैवीय शक्तियां अपना सहयोग करने में कैसे पिछड□तीं। देवराज इन्द्र ने राम को भूमि पर खड□ देखा तो उन्होंने अपने सारथी को राम की सेवा में भेज दिया।

मातलि ने राम के सम्मुख प्रणाम करते हुए कहा, 'हे देव। महाराज इन्द्र ने आपकी सेवा में यह दिव्य और अजातशत्रु रथ भेजा है। इसमें इन्द्र ने अपना विशाल धनुष, अग्नि के समान तेजस्वी कवच और सूर्य के समान प्रखर प्रकाशवान बाण और शक्ति साथ में प्रस्तुत की है। मैं आपकी सेवा में सारथी के रूप में उपस्थित हूं। अब आप राक्षसों के इस अंतिम प्रकाशपुंज रावण को भी

ज्योतिहीन करके पृथ्वी के कष्ट का निवारण करें।' यह सुनते ही राम आकाश में हाथ जोड□कर प्रणाम की मुद्रा में देवराज इन्द्र के उस दिव्य रथ पर आरूढ□ हो गए।

अब तो राम और रावण के बीच प्रलयंकारी और रोंगटे खड□ कर देने वाला युद्ध प्रारम्भ हो गया। राम ने रावण के वासुकि नाग के समान असहाय बाणों को अपने गरुड□ास्त्र से काटते हुए रावण पर कठोर प्रहार किया।

रावण ने जब यह देखा तो वह जल-भुन गया। इन्द्र के रथ की ध्वजा को काट डाला और घोड□ों को भी आहत किया। राम भी कुछ क्षण के लिए व्यथित हो उठे। ऐसा लग रहा था मानो राम-रूपी चन्द्रमा रावण-रूपी राहु से ग्रस्त हो रहा है लेकिन फिर कुछ संभल कर राम ने कुपित होते हुए अपने दारुण अस्त्र का प्रहार किया।

जैसे ही रावण ने क्रोध में आकर राम के ऊपर एक शक्तिशाली वज्र का प्रहार किया तो ऐसा लगा मानो आकाश में चारों तरफ विद्युन्माला व्याप गई हो, पर राम उससे प्रभावहीन रहे और उसे चूर-चूर कर दिया और फिर रावण पर शक्ति का प्रहार किया और रावण की छाती बींध डाली, उसके ललाट को भी बाण से बेध दिया। यह देखकर भयभीत रावण अशोक वन की ओर भाग गया।

राक्षसों ने जब अपने स्वामी को इस प्रकार हताश देखा तो उनमें भगदड□ मच गई। लेकिन फिर कुछ साहस जुटकर रावण मैदान में आ गया।

राम आश्चर्यचकित थे कि इतने भीषण प्रहार करने पर भी यह अभी तक जीवित है, तभी अगस्त्य मुनि ने राम के पास आकर उन्हें सुझाया कि वह आदित्य का जाप करें। महामुनि अगस्त्य से इस प्रकार उपदेश पाकर राम ने शुद्ध चित्त से आदित्य का तीन बार जाप किया और फिर उत्साहपूर्वक रावण पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। मातलि ने राम को ब्रह्मास्त्र की याद दिलाते हुए कहा, 'हे प्रभु! इसके विनाश के लिए जो समय देवताओं ने बताया है, वह अब आ पहुंचा है, आप उसी का प्रयत्न कीजिए।' ब्रह्मास्त्र का संधान करने से सम्पूर्ण सृष्टि डगमगाने लगी और वह मर्मभेदी बाण रावण की छाती को विदीर्ण कर गया।

अब रावण का चेतनाहीन शरीर पृथ्वी पर पड□ा था और रावण की आत्मा को खींचकर लाने वाला वह बाण फिर से राम के तूणीर में आ गया था।

अंततोगत्वा रावण का वध हो ही गया। अब उसकी सेना में जो सैनिक रह गए थे, वे वानर सेना से डरकर भाग गए।

रावण को इस प्रकार भूमि पर मरा देख भाई के भाव से विभीषण के मन में शोक व्याप गया और वह विलाप करते हुए कहने लगा, जिसके भय से दिग-दिगन्त कांपते थे, पत्ते भी सांस लेने के लिए जिसकी आज्ञा लेते थे, समुद्र भी जिसके नित्य चरण पखारता था, वह महामानव, परम पंडित, ज्ञानी, शक्ति का पुजारी, लंकापति रावण आज इस धरा पर इस प्रकार अनाथ-सा पड□ा है। ऐसा लगता है, रावण के सो जाने से मेरा सारा अपमान आंख के पानी के रास्ते बह गया है। शायद कहीं मेरे मन में निश्चित ही लंका का राजा होने की अभिलाषा थी, तभी मैंने रावण के

विरोध में खड□ होकर उसकी जड□ कमजोर कर दी।

दोनों विशाल भुजाएं निश्चेष्ट थीं, माथे का मुकुट जमीन पर दूर पड□ा था, मानो आज उसके कारण करने वाले ने उसे त्याग दिया हो। वह भी शोभाहीन लग रहा था, यह मुकुट जब रावण के सिर पर था, सभी इसकी शोभा थी।

'भावुक हो रहे हो विभीषण, यह रावण समरभूमि में असमर्थ होकर लेकर नहीं मरा, इसने अंतिम क्षण तक न पराजय स्वीकार की, न सर झुकाया और न ही साहस छोड□ा। इसने प्रचण्ड पराक्रम प्रदर्शित किया है विभीषण! और फिर वीर की मृत्यु शय्या पर नहीं युद्ध भूमि में ही शोभा देती है।'

विभीषण को इस प्रकार सांत्वना देते हुए राम ने कहा, 'हे लंका के सम्राट। जिस बुद्धिमान ने इन्द्र सहित तीनों लोकों को युद्ध में भयभीत कर रखा था, वही यदि इस समय काल के अधीन होकर वीरगति को प्राप्त हुआ है तो उसके लिए शोक करके उसके शौर्य को अपमानित मत करो। युद्ध में एक पक्ष तो पराजित होता ही, है और सदैव जीतती एक ही पक्ष है और वीर पुरुष वही है जो संग्राम को संग्राम जानकर या तो शत्रु द्वारा मारा जाए या शत्रु को मार गिराए। देखो मित्र! रावण को जो गति प्राप्त हुई है, वह उत्तम गति है।'

'आप बिलकुल ठीक कह रहे हैं श्रीराम! किन्तु मैं हृदय रखता हूं न, इसलिए सहोदर होने के कारण जो भाई का विछोह मुझे हो रहा है, वह मुझे सालता है। मैं जानता हूं कि कारण मैं नहीं हूं कारण तो विधाता ने उन्हें स्वयं बनाया लेकिन अब प्रेत कर्म कर्म का दायित्व मेरा ही तो रह गया है।

'युद्धभूमि में जितने भी राक्षस सैनिक मरे हैं और मेरे परिवारजन मरे हैं, उन सबका तर्पण मुझे ही तो करना है श्रीराम! मुझे ही तो अंत्येष्टि करनी है। मेरे बड□ भाई होने के कारण प्रेत कर्म करूं, यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है लेकिन नरान्तक, देवान्तक, अतिकेय, मेघनाद आदि स्वजनों का, जो मेरे प्रिय रहे, उन सभी का प्रेत-कर्म मुझे करना होगा, क्या विपरीत गति है! मेघनाथ, ज्येष्ठ रावण पुत्र, उसे तो मेरा प्रेत-कर्म करना चाहिए था। हे श्रीराम! अब मेरा प्रेत-कर्म करने वाला कौन बचा है? राक्षस कुल का तो जड□ मूल से नाश ही हो गया है।'

और जब राक्षस कुल की स्त्रियों को यह सूचना मिली कि महापराक्रमी रावण मारा गया है तो वे तो मानो पछाड□ खाकर गिर पड□ी और अश्रुपूरित नेत्रों से बिलखती हुई असहाय-सी विलाप करती हुई मूर्च्छित हो गईं। मन्दोदरी रावण की सबसे प्रिय पत्नी और महारानी थी, वह जानती थी कि राम से बैर लेने का परिणाम यही होगा।

मन्दोदरी विलाप करते हुए कहने लगी, 'मैंने आपको पहले ही कहा था कि राम से बैर मत पालो परन्तु मेरी एक नहीं मानी। आज यह उसी का फल है। सीता के तिरस्कार का परिणाम तो आपको मिलना ही था प्राणनाथ! आपने अपने शूरवीर कर्म -को त्यागकर पराई स्त्री चुराने का यह नीच काम किया। पहले माया-मृग के बहाने राम को आश्रम से दूर भगाया। फिर लक्ष्मण को अलग कराया और फिर कायरता पूर्ण व्यवहार करते हुए स्वयं लज्जा का त्याग कर दिया और पराई स्त्री को हर लाए। आप तो अपनी बहन के दोष को जानते थे फिर भी उस पिशाचिनी के

कारण आपने अपनी मर्यादा का ख्याल नहीं रखा।

'मैं आज शोक से पीडि□त हो रही हूं और आप गहरी नींद में सो रहे हैं।'

'आपने तो कभी जीते जी मेरी बातों पर कान नहीं दिए, मैं तो आपके सामने भी निरर्थक प्रलाप करती रही और अब भी कर रही हूं- 'और वह पाषाण-सी हो गई। यह देख राम ने कहा, 'विभीषण इन स्त्रियों को धैर्य बंधाओ और दाह-संस्कार का प्रबंध करो।'

और इसके बाद रावण का विधिपूर्वक दाह-संस्कार कर दिया गया। अब राम भी लक्ष्मण सुग्रीव आदि के साथ प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे।

राम द्वारा स्त्री को चुराने वाले का वध करने का प्रण पूरा हो चुका था।

राम का अयोध्या आगमन और राज्याभिषेक

रावण पर विजय पाने के बाद अब उनके और सीता के मिलन में कोई बाधा नहीं रह गई थी। स्वयं हनुमान राम की आज्ञा से उन्हें यह समाचार दे आए कि सीता के पतिव्रत धर्म के प्रभाव से ही राम ने युद्ध में विजय प्राप्त की है। रावण मारा जा चुका है। अब लंका राम के अधीन है, इसीलिए अब वह चिंता छोड□ दें और स्वस्थ हो जाएं।

राम ने यह संदेश भी भिजवाया- 'हे देवी! मैंने तुम्हारे उद्धार के लिए जो प्रतिज्ञा की थी, वह अब पूर्ण हो गई है। अब तुम स्वाधीन हो। अत: अपने मन से सभी क्लेश समाप्त कर दो।'

यह संदेश सीता के लिए निश्चय ही अपूर्व हर्ष का था फिर भी उसने का, 'हे कपि श्रेष्ठ! अवश्य ही यह मेरे पूर्व किए कर्म का ही फल रहा होगा, जो मुझे श्रेष्ठ पति से वियोग का समय दुरात्मा रावण के आश्रय में इस वृक्ष के नीचे काटना पड□ा लेकिन अब वह समाप्त हो गया है, अब मैं अपने स्वामी के दर्शन करना चाहती हूं।'

हनुमान से जब श्रीराम ने सीता की यह विरह आकुल दशा सुनी तो राम भी विचलित हो गये और बोले, 'हे श्रेष्ठ विभीषण! जाओ, देवी सीता को शीघ्र ही मेरे सम्मुख ले आओ।'

और सीता अब राम के सामने उपस्थित थीं।

राम को और सीता को भी मानो विश्वास नहीं हो रहा था कि ये बीच की अवधि उन दोनों ने ही एक-दूसरे से बिना मिले बिता दी। उनके हृदय की दशा को इस समय केवल वही जानते थे।

'हे वैदेही आज तुम्हें अपने सम्मुख पाकर निश्चय ही मुझे अपने श्रम की सफलता का आभास हो रहा है। तुम्हारा कल्याण हो। यह इतना बड□ा युद्ध मैंने अपने वंश पर लगे हुए कलंक को धोने के लिए ही जीता है। परन्तु अकस्मात मर्यादा का प्रश्न उठ खड□ा हुआ है। तुम्हारे रावण के यहां रहने के कारण चरित्र पर संदेह का ग्रहण लग गया है। रावण ने तुम्हें दोनों जंघाओं के बीच उठाकर अपने अंक से लगाकर तुम्हारा अपहरण किया था, ऐसी दशा में उसकी दूषित दृष्टि से जिस प्रकार तुम दोष-ग्रस्त हो गई हो, कौन कुलीन पुरुष तुम्हें स्वीकार करेगा। अत: मेरा यही परामर्श है कि- तुम, जहां तुम्हें सुख मिले, जाने के लिए स्वतंत्र हो।

सीता ने जब यह सुना तो उनके मुख से कोई शब्द नहीं निकला, वह स्तब्ध रह गई, केवल आंखों से जो आंसू बहे, वह उनकी व्यथा-कथा कहने लगे।

यह मेरा दुर्भाग्य ही तो है, वह सोच रही थीं। अशोक वृक्ष के नीचे सर्दी, गर्मी, बरसात सहते हुए इन्हीं वाक्यों को सुनने के लिए वह जीवित रही, इससे तो अच्छा था कि अपहरण के समय ही अपने प्राणों का त्याग कर देतीं। इस प्रकार भरी सभा में अपमान का दंश तो नहीं सहती।

इधर सीता आत्मग्लानि से गड□ी जा रही थीं, कितना उत्साह था उन्हें आज की प्रात: उसके लिए मिलन का सुख संदेश लाई थी, लेकिन कैसा स्वप्न-सा छल इसके साथ हो गया। वह सोच भी नहीं पा रही थीं।

दूसरी ओर हनुमान, सुग्रीव, जामवन्त, विभीषण और अंगद आदि के साथ लक्ष्मण भी अवाक्

रह गये।

'यह आपने क्या कह दिया भैया?'

'इन्होंने जो कहा है, वह तुम सुन चुके हो लक्ष्मण। अब मेरी बात सुनो। तुमने वन में मेरे कटु शब्द भी सुने हैं, शायद तुम्हारे ऊपर किया गया मेरा अविश्वास ही मेरे में कर्मफल के रूप में इस समय उपस्थित हुआ है। अब तुम संकोच छोड□कर मेरा एक अंतिम कार्य और करो, तुम मुझे पूज्य मानते हो न, मेरे लिए चिता तैयार कर दो।' राम केवल सिर झुकाए खड□ रहे, सीता ने दूर से ही उनकी परिक्रमा करके उन्हें प्रणाम किया और फिर पूर्व स्थान पर आकर खड□ी हो गईं और कहने लगीं- 'यदि मेरा हृदय कभी एक क्षण के लिए भी श्री रघुनाथ जी से दूर न हुआ हो तो हे अग्निदेव। आप मेरे ऊपर लगे हुए कलंक का प्रक्षालन कर मेरी रक्षा करें।' और यह कहते हुए वह त्यागमयी मूर्ति सीता अपने देवर द्वारा निर्मित चिता की ओर बढ□ गयी।

इस समय सारा समूह त्राहि-त्राहि कर उठा।

आग धधक उठी, लपटें निकलने लगीं और वैदेही अग्नि में और अधिक स्वर्णमयी होती गयी, मानो अग्नि में तपकर वह स्वर्ण की तरह आभामयी हो गईं।

चिता की आग धीरे-धीरे ठंडी हो गई और ऐसा लगा मानो स्वयं अग्निदेव सीता के साथ खड□ राम से कह रहे थे कि हे श्रीराम! यह आपकी-धर्मपत्नी विदेह राजकुमारी त्याग में, सच्चरित्रता में और पवित्रता में खरी उतरी हैं, ये पूर्णतया निर्दोष हैं, आप इन्हें स्वीकार करें।

और मानो राम कह रहे थे- 'यदि मैं सीता की शुद्धि के विषय में परीक्षा न लेता तो लोग उसकी पवित्रता के प्रति परिचित कैसे हो पाते। मैं जानता हूं कि सीता मन, वचन, कर्म से पूरी तरह शुद्ध और पवित्र हैं। मैं यह भी जानता हूं कि जिस प्रकार महासागर अपनी सीमाओं को नहीं लांघ सकता उसी प्रकार रावण भी सीता पर अत्याचार नहीं कर सकता था।'

सीता को अग्नि में प्रवेश करते हुए मैं केवल देखता रहा, उसके बाहर उठती हुई लपटों को मैंने ही नहीं सबने देखा, लेकिन वे लपटें मेरे भीतर उपजी थीं, जिनके केन्द्र में सीता थीं, अग्नि-परीक्षा में तपकर मेरा अभिन्न अंग बनी थीं। जिस प्रकार सूर्य से उसकी आभा अभिन्न है, उसी प्रकार सीता मुझसे अभिन्न हैं।'

और धीरे-धीरे अग्नि से सुरक्षित बाहर सीता के पास आगे बढ□ते हुए राम ने अपनी आकुलता को बिना और छिपाए देवी सीता को अपने अंक में समेट लिया।

अपने पति की चरण रज लेकर सीता ने सुहाग सिंदूर की तरह माथे पर सजाते हुए जो अमूर्त सुख का अनुभव किया, राम उसे देखकर और अधिक उसके प्रति सम्मान से झुक गये। भावुक होकर राम ने अस्फुट शब्दों में केवल इतना कहा, 'तुम्हें आज अपने समीप पाकर मेरे अधूरेपन का समय पूर्ण हो गया। यह समय पिता के द्वारा दिये वनवास से कहीं अधिक त्रासदायक रहा। हे जनकसुता यह अग्निपरीक्षा मैंने अपने लिए नहीं समाज की मर्यादा के लिए ली थी। मैं जानता था कि तुम इसमें खरी उतरोगी।'

मिलन के इस मधुर क्षण में एक स्वप्निल सुख का आभास करते हुए राम को अचानक लगा कि आकाश से मानो स्वयं दशरथ उनके दिवंगत पिता दोनों के इस परम मिलन को देखकर अपना अपूर्व आशीर्वाद दे रहे हैं।

स्वप्न में ही सही, पिता को अपने सम्मुख पाकर अकस्मात् राम ने मानो उनसे यही कहा- 'हे पिता। आप कृपया मां कैकेयी को अपने शाप से मुक्त कर दें। क्योंकि अब मैं वनवास की अवधि पूरी करके अयोध्या लौट रहा हूं। भाई भरत ने त्याग और तपस्या से जो व्रत धारण किया था, उसका भी समय पूर्ण हुआ जाता है और मां मेरे वनवास के कारण बहुत मानसिक कष्ट सहन कर चुकी हैं इसलिए आप मां कैकेयी को अपने क्रोध से मुक्त कर दें।'

और ऐसा लगा कि मानो दशरथ कह रहे थे- 'हे राम तुम वास्तव में महान हो, रघुकुल को तुम पर गर्व है। जिस मां ने तुम्हें राज्य सुख से वंचित करके वनवास का जीवन भेंट किया तुम उसी के लिए शाप मुक्ति की याचना कर रहे हो।'

'मैंने अपने इस वनवास को कर्मवास जानकर पूरा किया है। पृथ्वी के बोझ को राक्षसों से हलका किया है और यह सब मैं केवल वनवास ग्रहण के बाद ही कर पाया हूं इसलिए जब मेरा यह वनवास जन समाज के लिए वरदान बना है तो फिर मां कैकेयी के लिए यह अभिशाप क्यों रहे?'

'मैं धन्य हो गया राम। तुम-सा उदार पुत्र पाकर। मैं तुम्हारा पिता होने का गौरव पा सका, यह मेरे लिए परम सुख का विषय है। इतिहास सदा मुझे मर्यादा पुरुषोत्तम राम के पिता के रूप में याद रखेगा। तुमने तो स्वयं अपने कर्त्तव्य से कैकेयी को भी अमर कर दिया राम!'

'आप मौन क्यों हैं स्वामी! क्या अभी भी आपने मुझे क्षमा नहीं किया?' राम को विचारपूर्ण मुद्रा में देखकर सीता ने कहा।

'ऐसा मत कहो सीते। अचानक मुझे ऐसा लगा कि देवलोक से हमारे पिता हमारे इस सुख की बेला में हमें आशीर्वाद दे रहे थे। आज पहली बार इस मिलन की बेला में उनके दर्शन पाकर मैं अभिभूत हो गया तो मुझे अचानक माता कैकेयी पर पिता के क्रोध का खयाल आ गया। मैं इस स्वप्न मुद्रा में पिता से यही संवाद कर रहा था कि वे मां को अपने शाप से मुक्त कर दें।'

भावाकुल होकर अपने महान पति के चरणों को एक बार फिर सीता ने स्पर्श करते हुए कहा, 'संसार में मेरे जैसी सौभाग्यशाली नारी और कौन हो सकती है, जिसे आपके चरणों की रज साक्षात मांग के सिंदूर के रूप में मिली है।'

और फिर विभीषण को संकेत से बुलाते हुए राम ने उनसे विदा लेने की बात की। समुद्र के किनारे एक बार युद्ध से पहले विभीषण के आगमन पर राम ने उनका समुद्र के जल से अभिषेक किया था लेकिन आज समुद्र के इस पार लंका की ही जमीन पर विधि-विधान पूर्वक ब्राह्मणों के मंत्रोच्चार के बीच राम ने रावण का वह धूल-धूसरित किरीट समुद्र के जल से अपने हाथों से प्रक्षालित करके चंदन तिलक लगाते हुए समस्त वानर सेना की उपस्थिति में विभीषण के मस्तक पर सुशोभित किया।

अपनी गरिमा खोई हुई, युद्ध से विनष्ट हुई, उबड□-खाबड□ पथरीली शिलाओं, और टूटे उखड□ हुए वृक्षों से दबी लंका मानो युद्ध की अग्नि में तपकर वैभव विलास के विध्वंस होने के बाद भी एक कुमारी स्वर्णमुखी कन्या के समान मुंह उठाती दिखाई पड□ी। जो पुरवासी अब शेष रह गये थे मानो फिर से अपनी इस उजाड□ हुई नगरी के प्रति आश्वस्त हो गये थे। विभीषण के राजा बनने पर स्वागत करते हुए चारों ओर से तुमुल नाद होने लगा, आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी।

विभीषण को उसकी लंका सौंपते हुए राम ने अपना यह दायित्व भी पूरा कर दिया और कहा, 'हे लंकेश। अब हमें अपनी अयोध्या लौटना है, यह मार्ग बहुत दुर्गम है और यदि संध्या तक अयोध्या नहीं पहुंच पाया तो मेरा छोटा भाई भरत मुझे जीवित नहीं मिलेगा। उसकी यही प्रतिज्ञा थी कि अवधि की समाप्ति के बाद वह एक भी दिन की प्रतीक्षा नहीं करना चाहता। यदि मैं आज नहीं लौटा तो वह भावुक भक्त मेरे वियोग में प्राण त्याग देगा। अब तो तुम वह साधन जुटाओ जिससे मैं शीघ्र ही अयोध्या लौट सकूं।

हे राम। कितना दु:खदायी होता है विरह का क्षण! मेरी इच्छा यही थी कि आप, भाई लक्ष्मण और देवी सीता सहित कुछ काल तो इस लंका नगरी को उपकृत करते किन्तु मैं अपने स्वार्थ के लिए कोई अनिष्ट नहीं चाहूंगा और पलक झपकते ही विभीषण ने राम की सेवा में वह पुष्पक विमान प्रस्तुत कर दिया जिसे महाबली रावण ने अपने भाई कुबेर से संग्राम में लंका के साथ छीन लिया था।

'लेकिन हे देव। एक विनती मेरी अवश्य ही स्वीकार करें, मुझे अयोध्या की चरण रज लेने का अवसर दें, मैं आपको स्वयं वहां छोड□कर आऊंगा और भाई भरत से मिलकर अपना जीवन सफल बनाऊंगा। कितना सुखदाई होता है भरत जैसे भाई को पाना।' और फिर राम, लक्ष्मण और सीता, हनुमान, सुग्रीव आदि के साथ विभीषण विमान पर सवार होकर अयोध्या की ओर चल दिए।

मार्ग में चलते हुए सीता सोच रही थीं, दण्डक वन से यहां तक आने की यात्रा कितनी भयानक, यातनामयी थी जैसे कोई राह से भटका राही अंधकार में छटपटा रहा हो लेकिन अब वही दमकते हुए सूर्य के प्रकाश में उस मार्ग से अपने प्रिय राम के साथ सवार होकर गौरवमयी अनुभव कर रही थीं। कितना परिवर्तन था इन दोनों यात्राओं में। यातना में और सुख में। किष्किन्धा दण्डक वन आदि से होता हुआ यह विमान चित्रकूट पर्वत पर से गुजरने लगा।

अयोध्या से वन को आते हुए भी राम महर्षि भारद्वाज के यहां आशीर्वाद लेने को रुके थे और लौटते हुए भी वे फिर वहां मुनि का आशीर्वाद लेने को रुके। इस समय स्थितियां बदली हुई थीं, राम सफल मनोरथ अपने मित्रों और बंधुओं के साथ लौट रहे थे। ब्राह्मणों और ऋषि-मुनियों के लिए जो काम राम ने किया वह कोई अन्य नहीं कर सकता था। यह जानते हुए महर्षि भारद्वाज ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए उनका फल-मूल से आतिथ्य किया। राम तो मुनि का आशीर्वाद लेने के लिए कुछ क्षण के लिए भारद्वाज मुनि के आश्रम में रुक गये थे। किन्तु उन्होंने हनुमान को अयोध्या के कुशल के लिए पहले ही भेज दिया और उन्हें यह संकेत दे दिया था श्रृंगवेरपुर में

निषाद राज गुह मेरे मित्र हैं, वे तुम्हें अयोध्या का मार्ग और भरत का समाचार अवश्य देंगे।

इधर राम कुछ क्षण विश्राम कर रहे थे, उधर हनुमान तीव्र गति से दौड□ते हुए पहले निषाद राज से मिले और उन्हें बताया कि महाराज राम प्रयाग में आ चुके हैं और भारद्वाज मुनि के आश्रम में वनवास काल की अंतिम रात्रि व्यतीत कर रहे हैं। कल प्रात: ही वे अयोध्या के लिए प्रस्थान कर देंगे।

गुह ने यह सुना तो वह हर्ष से पुलकित हो उठा। गुह से ही हनुमान को यह ज्ञात हुआ कि महातपस्वी भरत अयोध्या से बाहर ही नंदी ग्राम में राम की भांति ही वनवासी जीवन बिता रहे हैं।

हनुमान गुह को यह समाचार देने के तुरन्त बाद भरत जी की सेवा में उपस्थित होने के लिए चल पड□ और अनेक प्रदेश पार करते हुए नंदीग्राम के समीप खिले हुए वृक्षों के पास पहुंच गए।

पीत वस्त्र और काला मृगचर्म धारण किए एक दु:खी और दुर्बल तपस्वी सिर पर जटाएं बढ□ाए वहीं तपस्या में लीन था और उनके समक्ष महाराज राम की चरण पादुका रखी हुई थीं।

'महाराज भरत को प्रणाम हो। मैं आपको बड□ा प्रिय समाचार सुनाने आया हूं, आप शीघ्र ही अपने बड□ भाई राम से मिलेंगे।'

राम का नाम कानों में पड□ते ही भरत का मन आनन्द विभोर हो गया।

और कुछ देर बाद जब उन्हें होश आया तो उन्होंने समाचार वाहक महाबली हनुमान को अपने अंक से लगाते हुए कहा, 'आज तुम मेरे घर, मेरी कुटिया में जो सुखद समाचार लाए हो, मुझे लगता है, साक्षात देव रूप में मेरा उपकार करने के लिए तुम पधारे हो।' भरत के मन में राम से मिलने की उत्कट इच्छा जाग उठी थी।

धीरे-धीरे हनुमान ने अयोध्या के सारे समाचार पूछते हुए श्री भरत जी को राम-वनवास काल की प्रमुख घटनाओं से परिचित कराते हुए बताया कि किस प्रकार राम और लक्ष्मण मायावी रावण के दुष्प्रभाव में फंसकर सीता से बिछुड□ गए थे। और तब वानरों की विशाल सेना के साथ सुग्रीव आदि के सहयोग से समुद्र पर पुल बनाकर उन्होंने दुर्दमनीय राक्षस कुल का समूल नाश किया।

'मैं वानर राज सुग्रीव का मंत्री हनुमान हूं। ऋष्यमूक पर्वत पर ही पहले-पहल हमारी श्रीराम से भेंट हुई।'

कितने कष्ट भोगे हैं भाई तुमने, केवल मेरी मां की स्वार्थ-वृत्ति के कारण, यह सोचते हुए भरत एक बार फिर भाव-विह्वल होकर रो पड□। और फिर कुछ संयत होकर प्रहरी को आदेश दिया।

आदेश पाते ही शत्रुघ्न वहां उपस्थित हो गए। 'हे भाई! मिलो इनसे, ये श्रीराम के दूत महाबली हनुमान हैं। यह सूचना लाए हैं कि कल प्रात: का सूर्य अयोध्या में नए सिरे के साथ उदय होगा।'

'भैया श्रीराम आ रहे हैं, मैं जानता था कि एक दिन भी हमारा वियोग वह नहीं सह सकेंगे।

आज वनवास की अवधि का अंतिम दिन है, वे कल आयेंगे ना भैया?' 'हां, कल आयेंगे।'

'यह आज की रात किस प्रकार कटेगी?'

'देखो शत्रुघ्न, तुम अब काम पर जुट जाओ, हमें बहुत काम हैं। अयोध्या से नंदीग्राम तक का सारा मार्ग साफ करवा दो, ठंडे सुगंधित जल का छिड□काव करवा दो और लोगों से कह दो कि वह सारे रास्ते में फूल बिखेर दें, सड□कों के किनारे पर ऊंची पताका फहरा दी जाएं, सारे मकानों को पुष्प मालाओं, फूलों के गजरों और पंचरंग अलंकारों से सजा दिया जाए। सारी ऊंची-नीची गलियों को समतल बना दिया और एक स्वर्ण जटित रथ जो राम को वनवास काल के लिए विदा करने आया था, उसे पूरी तरह सज्जित करा के मंगवाओ, राम उसी रथ पर लौटकर अयोध्या जायेंगे।'

क्या कमाल की फुर्ती थी, इधर शत्रुघ्न को आदेश मिलता था और इससे पहले शत्रुघ्न लोगों को आदेश प्रसारित करें, पूरा जनसमुदाय राम की अगवानी के लिए मानो इस समय प्रतीक्षा कर रहा था। आज पंचमी है, हर व्यक्ति को यह ज्ञात था और यह विश्वास था कि राम सुबह आ जायेंगे। कुछ ही लम्हों में उदास, सुनसान और दुखियारी-सी विधवा हुई नगरी, जिसका प्रिय चौदह साल से प्रवास में हो, वह अयोध्या केवल राम के इस आगमन के स्पन्दन मात्र से ही सूर्य के आगमन की सूचना पाए मुर्गे की तरह बांग देने लगी। जैसे पौ फटते ही पक्षी चहचहाने लगते हैं उसी प्रकार राम के आने की गंध पाए सभी नर-नारी अयोध्या को दुल्हन की तरह सजाने में जुट गए।

हनुमान तो यह देखकर ही हैरान थे, अभी वे जब आए थे तो ऐसा लगता था, इस गली से कभी कोई खुशी नहीं गुजरी और अब ऐसा लग रहा था मानो यहां कभी काले बादल छाए ही नहीं। हर, जन की आंखें बता रही थीं कि सब काम करते हुए उनके हाथ जिस तेजी से चल रहे थे, चोर आंखें उतनी ही तेजी से उस रास्ते की ओर बार-बार उठ रही थीं। तीनों माताओं को जब यह समाचार मिला कि राम कल आ रहे हैं तो उनकी प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। वो तीनों भी महामंत्री सुमंत के साथ पहले से ही नंदीग्राम में अपने पुत्रों का स्वागत करने आ गयीं। महामुनि वसिष्ठ आदि भी नंदीग्राम में पधार गये।

समय कब बीता, रात कैसे आंखों में कटी, किसी को भी इसका पता नहीं चल पाया। और फिर दूर से ही चन्द्रमा के समान प्रकाशवान पुष्पक विमान अयोध्या के आकाश पर दिखलाई देने लगा।

हनुमान ने जब पुष्पक विमान को अपने सिर पर मंडराते देखा तो वे खुशी से झूम उठे और बोलो, 'अहा, आ गए महाराज श्रीराम।'

भरत को मानो अपनी आंखों पर विश्वास ही नहीं हुआ। ऐसा लगने लगा, अभी कल ही तो वह चित्रकूट से निराश लौटा था। मन की भी क्या गति थी? राम के ध्यान में मग्न भरत को कभी लगता कि समय राम के वियोग में और ठहर गया है बीते नहीं बीत रहा है और कभी लगता राम की भक्ति करते उसे ध्यान ही नहीं रहा और समय बीत गया।

विमान से ही राम पर दृष्टि डालकर मानो भरत अभिवादन की मुद्रा में जमीन पर धंस गए।

जैसे ही विमान रुक कर खड□ा हुआ, भरत को राम ने चरणों में झुकने से पूर्व ही का उठाकर अपने अंक से लगा लिया।

'देखो, अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार मैंने आने में विलंब नहीं किया है भाई।' 'आपने तो जाने में भी संकोच नहीं किया था भैया। मेरे राजतिलक की भी प्रतीक्षा नहीं कर पाए थे आप।'

राम ने कहा, 'इसीलिए तो मैं बिना विलंब किये आया हूं। मुझे मालूम था कि तुम अधीर हो रहे होगे।'

और फिर भरत ने लक्ष्मण का प्रणाम ग्रहण किया और फिर सीता को चरण-स्पर्श किया।

अब राम और भरत पुष्पक विमान से नीचे उत्तर आए। राम ने सुग्रीव आदि से- भरत का परिचय कराया तो भरत ने सुग्रीव से कहा, 'तुम हमारे पांचवें भाई हो, सुग्रीव, क्योंकि स्नेहपूर्वक उपकार करने से ही कोई मित्र होता है और मित्र ही अपना भाई होता है।'

इसके बाद भरत ने महाराज विभीषण को सांत्वना देते हुए कहा, 'हे राक्षसराज, आपकी सहायता पाकर ही रघुनाथ जी ने अत्यन्त दुष्कर कार्य पूरा किया। यह आप ही की स्नेह मैत्री का फल है कि आज बिना विलंब के हम भाइयों का मिलन हो गया।'

और फिर भाइयों से हटते ही राम की दृष्टि दूर भीड□ से अलग एक परछाई पर पड□ी और राम द्रुतगति से उधर दौड□ पड□।

माता कैकेयी के चरण स्पर्श करते हुए राम ने कहा- 'मां, अब तो मैं तुम्हारे वचनानुसार चौदह वर्ष वन में व्यतीत करके अयोध्या लौट आया हूं, अब तो मुझे आप अपना आशीर्वाद देंगी ही।'

'हे वत्स! मैं तो चित्रकूट में भी तुमसे अपने पाप का प्रायश्चित कर चुकी हूं, अब तो मुझ हत्यारिन को और उलाहने मत दो। तुम्हें नहीं मालूम कि तुम्हें, खोकर मैंने भरत को भी खो दिया है राम, और अगर मैं यह जानती कि भरत की आत्मा तुममें बसती है तो यह अनिष्टकारी विचार मेरे मन में कभी नहीं आता।'

राम ने पीछे मुड□कर देखा कि भरत भी उनके समीप खड□ थे।

'माता के चरण छुओ भरत! जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी महान होती है। इनकी कृपा के बिना कोई भी कार्य अधूरा है।'

और जैसे ही भरत ने राम की प्रेरणा से मां कैकेयी के चरण छुए, चौदह वर्ष से संचित मां की ममता में आयी ठंडापन उफन पड□ा और आंसुओं के तेज प्रवाह में बहने लगा। अंक में भरकर कैकेयी ने कहा, 'क्या अब भी तुम अपनी दुखयारी मां को क्षमा नहीं करोगे भरत। यह जन्म-जन्म की दुखियारी, क्या इसका एक अपराध इतना अक्षम्य है?'

वास्तव में आज भरत की आंखों में भी आंसू आ गये क्योंकि पश्चाताप से बड□ा कोई भी दंड नहीं होता।

आंसुओं का इतना बड□ा सोता फूट पड□ा कि सारा दोष और सारे पाप मानो पुण्य सलिला अश्रु गंगा में स्नान कर मिट गए हों।

और फिर, कैकेयी मां को सांत्वना देने के पश्चात राम आदि माता कौशल्या और माता सुमित्रा से मिलने चले गए।

सीता, को अपने अंक से लगाती हुई कौशल्या अपने आंसू नहीं थाम पा रही थीं। महर्षि वसिष्ठ से आशीर्वाद लेने के बाद मां कौशल्या ने कहा, प्रिय लक्ष्मण, देखो भीतर कुटिया में कोई एक केवल तुम्हें अपना अर्घ्य जल समर्पित करने के लिए चौदह वर्ष से स्वाति की बूंद की तरह तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है।'

एक क्षण के लिए लक्ष्मण ने माता सुमित्रा की ओर देखा, वह असमंजस में थे, इतने सारे नेत्रों को झेलते हुए वह कैसे जा पाएंगे भीतर प्रकोष्ठ में ?

राम तो अन्तर्यामी थे, वह लक्ष्मण की समस्या समझ गए और उन्होंने तुरंत आकाश की ओर देखा। सुंदर आकाश यकायक बादलों से घिर गया और छोटी-छोटी बूंदें बरसने लगीं। खुले आसमान के नीचे खड□ा जनसमूह छाया के लिए वृक्षों के नीचे आसरा तलाशने लगा। थोड□ी-सी भगदड□ भी मची और लक्ष्मण को प्रकोष्ठ में प्रवेश करने के लिए इतना समय काफी था। सब व्यस्त थे, मुनि वसिष्ठ ने भक्तवत्सल राम की यह गति पहचान कर हलकी-सी मुस्कराहट के साथ उन्हें सराहा।

अब लक्ष्मण अपनी प्राणप्रिया उर्मिला के सम्मुख खड□ थे। ठीक चौदह वर्ष बाद एक हिलती-डुलती परछाई-सी लक्ष्मण के सामने पतली लौ की तरह टिमटिमाती हुई उनके चरणों में सिमट गई।

लक्ष्मण ने बीच में ही उसे उठाते हुए अपने अंक में समेट लिया और बरसों से बिछुड□ हृदयों की धड□कन भाप बनकर आंख से बह निकली। बहुत देर तक कोई कुछ नहीं बोल सका।

लक्ष्मण के हाथ की दाईं हथेली पर सिर टिका हुआ था उर्मिला का, आंखें बंद, कांपते अधर, भावुक चेहरा रोमांच अनुभव करता शरीर भीगी लक्ष्मण की पलकों से गर्म-गर्म बूंद टप टप करती उर्मिला के चेहरे पर, कपोलों पर पड□कर तपते लोहे पर छन्न की तरह आवाजें कर रही थीं। कितनी ही देर उन्होंने इसी मुद्रा में व्यथित मन को सांत्वना देते हुए बिता दीं। बाहर राम के अयोध्या जाने का शोर प्रारम्भ हो गया था। तभी सीता की आवाज उन्हें द्वार पर सुनाई दी। और लक्ष्मण उर्मिला को साथ लिए द्वार तक आए।

बहन से मिलकर उर्मिला मानो अपने आंसुओं को और प्रवाह से बहाने लगी। राम ने उर्मिला के सिर पर हाथ रखते हुए केवल इतना कहा, 'दिशाएं जानती हैं उर्मिला। चौदह वर्ष तक अयोध्या के भाग्याकाश पर राहु का साम्राज्य ही रहा था। कितना लंबा था यह ग्रहण जिसने तुम्हें, लक्ष्मण को, मुझे, सीता को, भरत-माण्डवी को, शत्रुघ्न और तीनों माताओं और अयोध्या के पुरवासियों, किस-किस को नहीं डसा बड□ा व्यापक था यह। अब अमावस्या की काली रात समाप्त हो गयी है। सौभाग्यशालिनी अब इस आगमन का अभिनंदन करो, तुम्हारे वनवास के दिन भी समाप्त हो गए हैं।'

और इस प्रकार सारा समूह राजसी रथ पर सवार होकर धीरे-धीरे अयोध्या की ओर चलने लगा।

वही कक्ष था, वही दीवारें, लेकिन केन्द्र में केवल महाराज दशरथ नहीं थे। उनका चित्र पितामह

अज के साथ आदमकद रूप में मूर्तिमान था।

राम ने सभी पूर्वजों को राजभवन में जाकर प्रणाम किया और फिर तीनों माताओं और महर्षि वसिष्ठ के आदेश पर राज्य के सिंहासन पर विराजने की स्वीकृति दी। अप्सराएं नृत्य करने लगी, गंधर्व, किन्नर गायन करने लगे। महात्मा वसिष्ठ ने अन्य ब्राह्मणों के साथ वह किरीट, जो चौदह वर्ष पहले राम के लिए निर्मित हुआ था, राज्याभिषेक करते हुए राम के मस्तक पर स्थापित कर दिया।

चारों तरफ महाराज राम की जय हो, का भैरवनाद गूंज उठा।

अब राम विधिवत रूप से अयोध्या के राजा हो गए थे। उनके चरणों में भक्त हनुमान सुशोभित थे, बाएं सिंहासन पर देवी सीता, पीछे चंवर डुलाते शत्रुघ्न और उनके दोनों ओर भरत और लक्ष्मण विद्यमान थे।

राजमुकुट पहनने के पश्चात राम ने सर्वप्रथम महामना वसिष्ठ का अभिवादन किया और कहा, 'हे कुलगुरु! पिता के राज्य के समान ही मुझे भी आप अपना कृपापात्र ही जानें और हर प्रकार से निर्देशित करें ताकि मैं प्रजा के प्रति न्याय कर सकूं।'

और फिर राम ने क्रमशः तीनों माताओं से आशीर्वाद लिया। ढूंढ□ने पर राम को कहीं मंथरा नहीं दिखाई दी।

राम ने आश्चर्य से मां कैकेयी से पूछा, 'मां! मंथरा माई नहीं दिखाई दे रहीं।' 'वत्स! वह तो उस दिन के बाद केवल एक अंधकारपूर्ण कोठरी में अपने जीवन का शेष भाग पश्चात्ताप की आग में जलकर बिता रही है।'

और फिर तेजी से चलते हुए राजा राम उस कक्ष में पहुंच गए जहां कभी प्रकाश नहीं था। बड□ी कठिनाई से पहचान पाए राम उस मंथरा को। और फिर उसके चरणों की ओर झुककर प्रणाम करते हुए कहा, 'माई उठो! तुम्हारा प्रिय राम आ गया है।'

'मुझे मारो, फांसी पर चढ□ा दो, कुत्ते-बिल्लियों के आगे मेरा मांस डाल दो, मैंने बड□ पाप किए हैं राम, मैंने तुम देवता समान को अपनी मोह-ममता के सामने वन जाने के लिए विवश कर दिया, मैं पापिनी हूं हत्यारिन हूं दुष्टा हूं।'

'नहीं, ऐसा मत कहो माई! तुमने मुझे वन भेजकर पता नहीं कितने बड□ समुदाय का लाभ किया है। आज समूचा आर्यावर्त राक्षसों के आतंक से मुक्त हो गया है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक सारा जनस्थान ऋषि-मुनियों के यज्ञ के धुएं से सुगंधित है।'

इस प्रकार मंथरा को भी सांत्वना देते हुए राम पुनः अपने कक्ष में लौट आए। इसके पश्चात राम शंख ध्वनियों के बीच अयोध्या नगरी की ओर चले। सभी नागरिकों का अभिनंदन जो उन्हें स्वीकार करना था। सभी नगरवासियों ने उनका हार्दिक अभिनंदन किया। इस समय राम नक्षत्रों में चन्द्रमा के समान सुशोभित हो रहे थे, पीछे अपने मंत्रियों से वे सुग्रीव की मित्रता, विभीषण का सहयोग और हनुमान की क्षमता और वानरों के अद्भुत पराक्रम की चर्चा करते जा रहे थे। यह सुनते हुए अयोध्यावासियों को बड□ा विस्मय हो रहा था। इस सबके बाद राम अपने पिता के

रमणीय भवन में आ गए।

यहां उन्होंने तीनों माताओं को पुन: प्रणाम किया और फिर कुछ समय के लिए वे अपने कार्य में लग गए।

ब्राह्मणों को गौ और मुद्राएं दान करने के बाद महाराज राम ने सुग्रीव, अंगद, विभीषण, जामवन्त को अपनी अनुपम भेंट प्रदान की।

सीता ने राम की ओर देखकर पवनपुत्र हनुमान को कुछ भेंट देने का विचार किया। राम से आदेश पाकर उन्होंने अपने गले का हार उन्हें प्रदान किया। हनुमान यह भेंट पाकर गदगद हो गए।

राम के राज्याभिषेक के बाद एक दिन अयोध्या में वास करके महाराज सुग्रीव, विभीषण आदि दल के साथ पुन: अपने-अपने स्थान को लौट गए।

राम चाहते थे कि लक्ष्मण युवराज पद पर प्रतिष्ठित हों लेकिन लक्ष्मण ने उसे किसी भी प्रकार स्वीकार नहीं किया। तब अपने अनुज भरत को उन्होंने अयोध्या के युवराज पद पर प्रतिष्ठित किया।

अब अयोध्या में एक बार फिर से परस्पर विश्वास, सुख और आनन्द की गंगा प्रवाहित होने लगी। सभी लोग प्रसन्न रहने लगे। राम की दृष्टि केवल इसी बात पर विशेष रहती थी कि किसी को एक-दूसरे से कोई कष्ट न हो। माताओं को पूरा सम्मान मिलता था, कहीं भी कोई संशय अथवा शंका नहीं थी। सारी प्रजा धर्म में तत्पर थी, उनके लिए तो मानो बहुत समय के बाद ये बसंत ऋतु आयी थी, जहां सुगंधित वायु ही सबको मोहित करती थी। न अपराध थे, न भय, न आतंक। सब लोभ रहित होकर अपने कर्म-पालन में लग गए। चारों तरफ राम की महिमा का गुणगान होने लगा।

राम का सीता-त्याग

चन्द्रमा की धवल चांदनी कितनी भी शीतल क्यों न हो, किन्तु जब लोग आकाश की ओर नजर उठाकर देखते हैं तो ये चांदनी की धवलता भूलकर चांद में उभरे काले धब्बे को देखने लगते हैं और इसे चांद का दाग समझकर चंद्रमा को कलंकयुक्त मान बैठते हैं। राम के साथ भी यही घटना चरितार्थ हुई।

कितने सुखी थे राम। रावण का वध करके अयोध्या में राज्य-कार्य संभालते हुए अपने बंधु-बांधवों, गुरुजनों, माताओं और सेवकों आदि के साथ हर प्रातः सुख का नया संदेश लाती और हर रात्रि मधुर सपनों को लेकर आती। लेकिन बिजली को तो गिरना था वह गिरी।

महाराज राम के पास उनके कितने ही मित्र हास्य-विनोद करके उनका मन बहलाते थे और उन्हें हर प्रकार से सुख पहुंचाने का प्रयत्न करते थे।

ऐसे ही एक दिन राम अपने दरबार में मित्रों से घिरे बैठे थे कि अचानक किसी प्रसंग में अपने एक मित्र से पूछ बैठे, 'कहो मित्र। आजकल नगर और राज्य में कौन-सी विशेष चर्चा चल रही है? लोग राजमहल और परिवारजनों के बारे में क्या विचार रखते हैं?'

'हे राजन! लोगों का क्या है, संतुष्ट होते हैं तो शुभ बात कहते हैं और यदि नहीं होते हैं तो अशुभ बात कहने लगते हैं।'

'और उनकी असंतुष्टि का कारण हमें ज्ञात होना चाहिए, तुम निडर होकर-कहो कि हमारे नगरवासी हमारे बारे में क्या विचार रखते हैं?'

'आपने समुद्र पर पुल बांधकर जो राक्षस का वध किया था, इसकी सभी प्रशंसा करते हैं पर उन्हें एक बात खटकती है कि रावण के घर में रही सीता को महाराज ने कैसे स्वीकार कर लिया? क्या सीता-चरित्र पर उन्हें संदेह नहीं हुआ क्योंकि जिस-प्रकार रावण उन्हें हरण कर ले गया और वे रावण के चंगुल में रहीं, उसके अंतःपुर के अशोक वन में, तब भी राम उनसे घृणा नहीं करते। यदि हमारे घर की स्त्रियां भी ऐसा ही करने लगें तो हम तो यह सहन नहीं कर पायेंगे।'

राम को मानो यह सुनकर अपने पैरों के नीचे से धरती खिसकती महसूस होने लगी। राम ने अपने उन मित्रों को तो विदा किया लेकिन यह सवाल उन्हें बार-बार मथने लगा कि आखिर अयोध्यावासियों को सीता की सच्चरित्रता का क्या परिचय दिया जाए। वन की अग्नि-परीक्षा वनवासियों के सामने हुई थी उसका ये लोग विश्वास करेंगे।

बहुत सोचने के बाद राम ने अपने तीनों भाइयों को बुलवाया। पहले उन्हें सारी बातें बता दी गई और फिर उनसे, समाज में राजपरिवार के बारे में जो प्रवाद फैला हुआ था, उसका क्या समाधान होगा, यह पूछा और कहा 'पुरवासियों के यहां मेरे और सीता के बारे में जो चर्चा चल रही है, सीता के संबंध में जो महाअपवाद पैदा हुआ है, उसे-लेकर मेरे प्रति भी उनका बहुत घृणास्पद भाव है। पुरवासियों और जनपद के लोगों की यह घृणा मेरे मर्म को बेध रही है प्रिय

अनुजो।'

'मैं इक्ष्वाकु वंशी महात्मा, राजाओं के कुल में उत्पन्न हुआ। सीता भी विदेहराज महाराज जनक के उत्तम कुल में जन्मी हैं। सौम्य लक्ष्मण तुम तो जानते हो कि किस प्रकार रावण निर्जन दण्डकारण्य से छलपूर्वक देवी सीता को हर कर ले गया और हमने कितना पुरुषार्थ करके उसका वध किया। रावण को पराजित करके जब सीता को मैंने प्रथम बार देखा था तो मेरे मन में भी इसी लोकोपवाद का खटका हुआ था। यही सोचकर मैंने सीता के लिए अग्नि-परीक्षा की बात कही थी। तुम साक्षी हो, देवताओं के समक्ष स्वयं अग्निदेव ने उन्हें निर्दोष बताया था और मुझे सौंपा था।

'परन्तु यह महान अपवाद यहां इस प्रकार फैलेगा, यह तो मैंने सोचा भी नहीं था। मेरे लिए सीता की यह निंदा बड□ा भारी शोक का कारण बन गई। मैं तो लोकनिंदा के कारण अपने प्राण भी त्याग सकता हूं, फिर सीता को त्यागना कौन बड□ी बात है। अत: हे लक्ष्मण! तुम कल सवेरे ही सुमंत सारथी को लेकर सीता को राज्य की सीमा से बाहर छोड□ आओ।'

'सीता के विषय में मुझसे किसी तरह तुम्हें दूसरी बात कहनी चाहिए। बार-बार मुझे ही अग्नि-परीक्षा देनी पड□ती है भैया! विवादास्पद विषयों में जब भी मैंने कोई परामर्श दिया है, आपने उसे कभी स्वीकार नहीं किया और कष्ट भोगा। क्या मुझे अपना पक्ष रखने के लिए कुछ भी कहने का अधिकार नहीं है।'

लक्ष्मण से यह सुनकर राम भावुक हो गए और बिना कुछ कहे कक्ष से बाहर चले गये। राम के दोनों नेत्र आंसुओं से भर गए वे उस समय लंबी-लंबी सांस ले रहे थे। राम यह अच्छी तरह जाते थे कि सीता निर्दोष हैं, निष्पाप हैं, निष्कलंक हैं, लेकिन मैं उसका पति ही नहीं हूं अयोध्या का राजा भी हूं। और राजा के लिए सामाजिक संबंध के स्तर पर व्यक्तिगत संबंध का कोई महत्त्व नहीं होता।

राम जब अपने कक्ष में पहुंचे तो वहां सीता को अपनी प्रतीक्षा में पाया। उनकी आंखें भीगी देखकर सीता ने पूछा, 'आप जैसा दृढ□ और मर्यादाशील राजपुरुष इतना उद्विग्न क्यों दिखाई दे रहा है?'

'सामाजिक दायित्व कई बार व्यक्ति को कठिन परीक्षा में डाल देता हैं, वैदेही। तब जब मन के भावों को कोई भी रास्ता बाहर निकलने का नहीं मिलता, वे प्रतिबंधित होते हैं तब केवल वे वाष्प रूप में ही आंखों के रास्ते झांकने लगते हैं, शायद इसकी कोई भाषा समझ ले।

राजधर्म इतना निर्मोही क्यों होता है सीता! जहां व्यक्ति स्वयं कुछ भी नहीं रहता, उसकी अपनी निजता बड□ समूह में बंट जाती है कि वह बेबस होकर केवल मर्यादा का पालक भर होकर रह जाता है।'

'आज आपकी दार्शनिक बातें मेरी समझ से बाहर हैं। मैं तो यही जानती हूं कि राजधर्म सर्वोपरि है। यदि एक व्यक्ति का सुख समूह में बंट कर सभी घरों में सुख और शांति का प्रकाश फैला दे तो यह बलिदान बड□ा महत्त्वपूर्ण हो जाता है स्वामी। और फिर आप तो सदा से ही

मर्यादा पुरुषोत्तम रहे हैं। आपका हृदय आज क्यों विचलित हो रहा है?'

'तुम शायद बात की गंभीरता को नहीं समझ पाई।'

'मैं तो इतना समझती हूं स्वामी कि यदि राजसिंहासन पर बैठना है तो निजी सुखों का सहर्ष त्याग करना होगा। यदि इसमें क्लेश अनुभव किया तो त्याग का मूल्य समाप्त हो जाएगा। पत्नी, भाई, पुत्र, ममता, धन-संपत्ति राजा का अपना तो कुछ नहीं होता। राजा स्वयं भी राज्य का प्रतिनिधि होता है, उसकी अपनी सांस भी राजनीति को समर्पित होती है। इसलिए लगता है कि आज आप बहुत थके हुए हैं, तनिक विश्राम कर लीजिए।' 'हे सीता! तुमने वास्तव में मेरे मन का बहुत बड□ा बोझ हलका कर दिया, अब मैं शांति से सो सकूंगा।'

प्रात:काल जब भ्रमण के बहाने लक्ष्मण सीता को रथ पर बैठाकर दूर वन तक ले गए और उन्हें बताया कि हे विदेहनंदिनी नगर और जनपद में रावण के यहां रहने के कारण आपके विषय में जो अपवाद फैला हुआ है, उसे राज्यसभा में सुनकर महाराज ने लोकापवाद के भय से आपको त्याग दिया है और यह कठोर कर्म करने के लिए मुझे आज्ञा दी है कि मैं आपको गंगा तट के ब्रह्मर्षियों के परम तपोवन में छोड□ आऊं।

यह सुनकर सीता अवाक् खड□ी रह गईं और उनके नेत्रों से अश्रुजल ढुलक पड□। 'अच्छा, तो महाराज राम कल रात्रि में इसीलिए व्याकुल और बेचैन थे। यदि वे मुझसे स्वयं बातें कह देते, तो उन्हें यह नाटक न करना पड□ता।'

'तुमसे जैसा कहा गया है, तुम वैसा ही करो लक्ष्मण। मैं अब रथ से उतर रही हूं। तुम महाराज को मेरी सूचना के साथ-साथ मेरा प्रणाम भी पहुंचा देना और उनका खयाल रखना। मैं जानती हूं कि उनका यह आदेश उन्हें स्वयं कितना पीडि□त कर रहा है, रात्रि में भी वे शैया के आसपास टहलते रहे थे, सोए नहीं थे।'

'कल मुझे क्षण भर के लिए संदेह तो हुआ था क्योंकि उनका मेरे प्रति स्नेह भाव जिस प्रकार उमड□ा था ऐसा लग रहा था मानो जीवन-दीप के बुझने से पहले लौ बहुत तेजी से भड□कती है। कल के प्रेम की चिनगारी फिर न मिलने का प्रतीक बन गयी।' और इस प्रकार सीता बिना लक्ष्मण की ओर देखे पगडंडी पर आगे बढ□ गयी।

बहुत देर तक उस परछाई को देखने के बाद लक्ष्मण उदास मन होकर लौट गये। जब राम को यह ज्ञात हुआ कि लक्ष्मण लौट आए हैं तो वे यह प्रतीक्षा करते रहे कि लक्ष्मण उनके पास उन्हें सूचना देने स्वयं अवश्य आयेंगे। लेकिन लक्ष्मण ने सुमंत के माध्यम से यह कहलवा दिया कि महाराज से कहना, आपके आदेश का पालन हो चुका है, अब आपको किसी लोकापवाद का डर नहीं रहेगा।

'हे सुमंत!' राम ने सुमंत से समाचार पाते हुए कहा, 'मैं लक्ष्मण से बात करना चाहता हूं, उसे मेरे पास भेजो।'

सुमंत चले गए।

राम का अभिवादन करके लक्षण उनके पास में खड□ हो गये। राम ने कुछ पूछा नहीं और

लक्ष्मण स्वयं बोले नहीं। बहुत देर तक दोनों मौन-मुद्रा में ही खड□ रहे।

तब मौन तोड□ते हुए लक्ष्मण ने कहा, 'आपने मुझे बुलाया?'

'हां, तो तुम सीता को सकुशल छोड□ आए हो?'

'मैं कुशलता का अभिप्राय नहीं समझा राजन!'

'मेरा अभिप्राय यह है कि सीता को तुम ऋषि आश्रम तक पहुंचा आए हो?'

'मैंने उन्हें गंगा के तट पर, जहां यह संदर्भ बताया था, वे रथ से वहीं उतरकर मुझे लौट जाने का आदेश-देकर एक पगडंडी के सहारे आगे बढ□ गई।'

'लेकिन मैंने तुम्हें आदेश दिया था कि उन्हें किसी आश्रम में छोड□कर आओगे।' 'मैं आपका अपराधी हूं राजन! लेकिन जब उन्होंने मुझसे यह कहा-तुम्हारे राजा ने जब मुझे त्याग दिया है, उन्होंने ही मेरा सहारा बनना अस्वीकार कर दिया है तो फिर यह रथ क्यों और मैं तुम्हारा सहारा क्यों लूं। धरती से पैदा हुई हूं मैं, अपनी मां के आंचल में अपने पैरों चलकर ही क्यों न स्थान बनाऊं।'

'लेकिन मेरा आदेश...'

'तुमने यहां तक लाकर महाराज का आदेश पूरा कर दिया है। अब मेरा आदेश है कि मुझे एकान्त में यहीं छोड□ दो और यहां से लौट जाओ।'

और फिर अश्रुपूरित नेत्रों से उन्होंने मुझसे कहा, 'अब मुझे आगे अकेले ही जाने दो लक्ष्मण। कम-से-कम बड□ा मानते हो तो इतना कहना तो मेरा भी मान लो। और मैं लाचार हो गया भैया!'

यह कहते-कहते लक्ष्मण बहुत भावुक हो गए।

राम ने आगे बढ□ते हुए अपने हृदय से उन्हें लगाते हुए कहा, 'हे सौमित्र! तुम जैसा भाई मिलना कितना कठिन है।'

'सीता जैसी भाभी मिलना भी तो कठिन है।'

'जानता हूं सौमित्र! जानता हूं।'

'अब मुझे आज्ञा दें राजन! मैं एकान्त में अपने इस कठोर कर्म पर कुछ देर आंसू बहाना चाहता हूं।'

बड□ बोझिल मन से राम ने कहा, 'जैसी तुम्हारी इच्छा।'

और लक्ष्मण लौट गए।

कितने ही प्रात: और कितनी ही संध्याएं बीत गईं, राम की सभा अपने वैभव में इन्द्र की सभा के समान, यम और वरुण की सभा के समान शोभा पाने लगी और समय बीतता रहा। राम का न्याय चारों तरफ अपनी ख्याति पाने लगा।

राज्य में ऋषि-मुनियों का आगमन, सत्संगति और शुभ प्रवचन का आदान-प्रदान होता रहा।

राक्षस लवण का वध करके राम ने उसके संहारक शत्रुघ्न को मधुपुरी का राजा बना दिया।

एक ब्राह्मण-पुत्र की मृत्यु के दोष-रूप में यह पाकर कि शुद्रमनि शम्बूक की तपस्या का यह दुष्फल है, राम ने शम्बूक का वध किया। राम समय-समय पर अगस्त्य मुनि से उपदेश ग्रहण करने भी जाते रहे।

इस समय महाराज राम सम्पूर्ण पृथ्वी के राजाओं द्वारा सम्मानित हो गए थे, सारा जगत उनके वश था। इसलिए गुरुजनों और भाइयों का यह परामर्श हुआ कि अब समय आ गया है कि अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान किया जाए क्योंकि यह यज्ञ ही समस्त पापों को दूर करने वाला और परम पवित्र है।

राम ने यह सुनकर प्रसन्नतापूर्वक इसकी स्वीकृति दी और कहा, 'हे लक्ष्मण! मैं अश्वमेध यज्ञ कराने वाले ब्राह्मणों में अग्रगण्य वसिष्ठ, वामदेव, जाबालि और कश्यप आदि सभी गुरु श्रेष्ठ को बुलाकर उनसे परामर्श लेकर पूरी सावधानी के साथ शुभ लक्षणों से सम्पन्न घोड□ा छोड़ूंगा।

यह प्रस्ताव सुनकर लक्ष्मण ने सभी अग्रगण्य ऋषियों को आमंत्रित किया।

उन ऋषियों के सत्परामर्श पर ही वानर राज सुग्रीव, लंका पति विभीषण और अन्य अनेक मित्रों और श्रेष्ठ राजाओं को यज्ञ के लिए आमंत्रित किया और साथ ही यज्ञ की निर्विघ्न समाप्ति के लिए शान्ति विधान प्रारम्भ करा दिये गए ताकि नैमिषारण्य में सैकड□ों पुरुष उस महायज्ञ को देखकर कृतार्थ हों। और नैमिषारण्य में गोमती के तट पर यज्ञ-मंडप बनाने की आज्ञा दें क्योंकि वह वन बहुत ही उत्तम और पवित्र स्थान है।

प्रश्न था कि अश्वमेध यज्ञ में महाराज राम के साथ उनकी पत्नी का होना। राम दूसरा विवाह नहीं करने का प्रण ले चुके थे इसलिए सीता की स्वर्णमयी प्रतिमा को सीता के स्थान पर स्थापित करने का प्रावधान किया गया।

इस प्रकार सब सामग्री पूर्ण रूप से भेजकर श्रीराम ने कृष्णसार मृग के समान काले रंग वाले घोड□ को छोड□ा। लक्ष्मण इस अश्व की रक्षा के लिए नियुक्त किये गये और राम सेना के साथ नैमिषारण्य चले गए।

राम के उस यज्ञ में दूर देश के अनेक राजागण अपनी-अपनी अनुपम भेंट के साथ वहां उपस्थित थे। राम ने उन सबका स्वागत किया। सुग्रीव और विभीषण भी राम का संदेश पाकर अपनी अनुपम भेंट के साथ वहां उपस्थित हुए।

अब यज्ञ नियमित रूप से सम्पन्न होने लगा। यज्ञ का घोड□ा पूरे भू-मंडल में भ्रमण करके भली भांति लौट आया।

उस यज्ञ में केवल एक ही बात सब ओर सुनाई पड□ती थी, जब तक याचक संतुष्ट न हो, तब तक उनकी इच्छा के अनुसार उन्हें वस्तु दिए जाओ। इस तरह सब लोग ही तो संतुष्ट हो गए थे। वहां कोई भी दीन-मलीन या दुर्बल नहीं दिखाई दे रहा था, जिसकी इच्छा पूर्ण न हुई हो।

इस यज्ञ में कितने ही ऐसे वयोवृद्ध महात्मा पधारे थे जिन्हें ऐसे किसी भी यज्ञ का स्मरण नहीं था जैसा यह यज्ञ अपने दान-दक्षिणा के कारण ख्याति पा रहा था।

राम के इस यज्ञ में एक महत्त्वपूर्ण बात यह भी हुई कि महर्षि वाल्मीकि भी इस यज्ञ में पधारे। वाल्मीकि के साथ दो सुंदर बालक भी थे। ये बालक जितने चपल थे उतने ही अनुशासित भी।

वाल्मीकि का विश्राम-स्थल अनेक ऋषि-मुनियों के साथ बड□ सुंदर ढंग, से सजा हुआ था।

मुनि के साथ आए ये बालक महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचे रामायण काव्य का गायन बड□ी सुंदर आवाज में और लय में करते थे।

इन बालकों ने ऋषि और मुनियों के पवित्र स्थानों पर, गलियों और राजमार्ग पर भी यह काव्य गाया।

जब राम ने यह गान सुना तो उन्हें बड□ा कौतूहल हुआ और फिर तो उन्होंने पूरी विद्वत् सभा में उन बालकों को बुलाकर बिठाया और सामूहिक रूप से उनसे रामायण-गायन का अनुरोध किया।

इन बालकों की आकृति राम से बहुत कुछ मिलती थी और ऐसा लगता था कि ये दोनों भाई एक दूसरे के बिम्ब-प्रतिबिम्ब हैं।

राम ने जब यह गान सुना तो प्रसन्न होकर इन बालकों को स्वर्ण मुद्राएं देने का विचार किया।

यह देखकर ज्येष्ठ बालक कुश ने कहा, 'इस धन की क्या आवश्यकता है महाराज! हम वनवासी हैं, हम इस चांदी-सोने का क्या करेंगे?'

राम ने जब यह सुना तो उन्हें बड□ा आश्चर्य हुआ।

'अच्छा बताओ, मुनि कुमारों इस महाकाव्य की श्लोक संख्या कितनी है और इसके रचयिता कौन हैं।'

कुश ने उन्हें बताया कि इसके रचयिता महर्षि वाल्मीकि हैं और वे इस यज्ञ-स्थल में पधारे हैं। उन्होंने इस महाकाव्य में चौबीस हजार श्लोक और एक सौ उपाख्यान कहे हैं। यह पूरा काव्य छह काण्डों और पांच सौ सर्गों का है।

'हे महाराज! महर्षि वाल्मीकि ने आपके चरित्र को महाकाव्य का रूप दिया है। यदि आप इसे सुनने का विचार करते हैं तो यज्ञ से अवकाश मिलने पर हम आपको यह अवश्य ही सुनायेंगे।'

दोनों बालक कुश और लव राम को प्रणाम करके महर्षि के पास आ गए।

महर्षि ने उन बच्चों से कहा, 'देखो, यज्ञ के बाद तुम उनको नित्य ही यह राम-कथा सुनाओ।'

और राम ऋषियों, राजाओं और वानरों के साथ कई दिन तक उत्तर रामायण गान सुनते रहे।

इस कथा से राम को यह स्पष्ट हो गया कि कुश और लव दोनों कुमार सीता के ही पुत्र हैं। यह जानकर उन्होंने अपने विशेष दूत से महर्षि वाल्मीकि के लिए यह संदेश भेजा-कि यदि सीता सच्चरित्र और शुद्ध मना है तो वह आपकी अनुमति लेकर जनसमुदाय में अपनी शुद्धता प्रमाणित करे। और यदि यह सही है तो कल प्रात: ही सीता सभा में आकर मेरा कलंक दूर करने लिए शपथ ले।'

महर्षि वाल्मीकि बड□ तेजस्वी थे, उन्होंने राम के अभिप्राय को समझकर कहा- 'ऐसा ही

होगा।'

दूतों ने राम को मुनि का समाचार दिया और उन्होंने घोषणा की कि सभी मुनि शिष्यों सहित कल सभा में पधारें और राजा लोग भी उपस्थिति हों और जो भी चाहता हो वह आए और सीता-शपथ-ग्रहण देखे।

राम का यह उत्साह और साहस देखकर सभी लोगों ने उनकी प्रशंसा करते हुए कहा, 'हे नरश्रेष्ठ। इस पृथ्वी पर सभी उत्तम बातें केवल आप में संभव हैं, किसी और में नहीं।' रात बीत गई। सवेरा हुआ। राम यज्ञशाला में पधारे। वसिष्ठ, वामदेव, दुर्वासा, मार्कण्डेय, शतानन्द, भारद्वाज, गौतम आदि अनेक कठोर व्रती, तपस्वी, महर्षि और उनके शिष्यगण यज्ञशाला में पधारे। अनेक ज्ञाननिष्ठ और कर्मनिष्ठ लोग वहां पधारे और सभी ने देखा कि महर्षि वाल्मीकि के पीछे एक तपस्विनी हाथ जोड□, नेत्रों में आंसू भरे, उनका अनुगमन करती हुई चली आ रही थी। उसके नेत्र संकोच के कारण उठ नहीं पा रहे थे।

जन समुदाय के बीच सीता सहित प्रवेश करके मुनि वाल्मीकि ने कहा-

'हे दशरथ नंदन! यह देवी सीता उत्तम व्रत का पालन करने वाली, धर्म परायणा जिसे आपने लोकापवाद के डर से मेरे आश्रम के समीप त्याग दिया था।

'ये दोनों कुमार कुश और लव सीता के गर्भ से उत्पन्न जुड□वा भाई, आप ही की संतानें हैं। मैं प्रचेता वरुण का दसवां पुत्र हूं, मेरे मुंह से कभी भी झूठ बात नहीं निकलती? मैंने कई हजार वर्ष तक जो तपस्या का फल प्राप्त किया है, यदि सीता में कोई दोष हो तो मुझे उस तपस्या का फल न मिले।'

'मैंने मन, वाणी और क्रिया द्वारा पहले कोई पाप नहीं किया, अपनी पांचों इन्द्रियों और मन, बुद्धि के द्वारा सीता की पवित्रता का भली-भांति निश्चय करके ही इसे अपने संरक्षण में लिया और आप स्वयं भी जानते हैं कि सीता सर्वथा शुद्ध, पवित्र हैं, फिर भी आपने लोकापवाद से कलुषित चित्त होकर इसे त्याग दिया। इसलिए मैं यह कहता हूं कि जिस प्रकार आपने इसे त्यागा था, आज उसी प्रकार सम्मानपूर्वक इसको ग्रहण कीजिए।' यह सुनकर राम ने कहा, 'हे महाभाग! आप धर्म के ज्ञाता हैं, जो आप कह रहे हैं, मैं स्वयं जानता हूं। यह भी जानता हूं कि ये कुश और लव मेरे ही पुत्र हैं, लेकिन यह शुद्ध पवित्रता सीता को स्वयं अपने मुख से भरे समुदाय के सामने प्रमाणित करनी होगी।' सीता यह सुनकर जमीन में गड□ गई। उसकी आंखों से बहते अश्रुओं की धारा तीव्र हो गई। तभी उसके कंधे पर हाथ रखकर महर्षि ने कहा, 'साहस से काम लो पुत्री! और दृष्टि उठाकर सबके सामने यह सत्य तो तुम्हें कहना ही होगा।'

गेरुआ वस्त्र धारण किए वह तपस्विनी आत्माभिमान से युक्त विनम्र भाव से दृष्टि और मुख नीचा किए हुए सभा के बीच आई और बोली, 'मैं श्री रघुनाथ के सिवा दूसरे किसी पुरुष का मन से विचार भी नहीं करती। हे भगवती पृथ्वी! यदि यह सत्य है तो तुम मुझे अपनी गोद में स्थान दो।'

'यदि मैं मन, वाणी और क्रिया से राम की ही आराधना करती हूं, यदि राम को छोड□कर

किसी दूसरे पुरुष को न जानती हूं और न मन में ध्यान किया है तो हे भगवती पृथ्वी। ओ मेरी जन्मदात्री मां। मुझे आज तुम अपनी शरण में लेकर अपनी गोदी में स्थान दो। आज नारी की मर्यादा संकट में है।'

सीता की यह पुकार पृथ्वी ने सुनी। सभा भवन के बीच का भाग भयानक गर्जना के साथ फट गया और उसमें से एक अद्भुत सिंहासन प्रकट हुआ और उस सिंहासन पर पृथ्वी की अधिष्ठात्री देवी विराजमान थीं।

धीरे-धीरे सिंहासन से उतरकर वह दिव्य देवी सीता के समीप आईं। भावाकुल सीता ने जैसे ही बांहें फैलाई, मां स्वरूपा उस देवी ने सीता को अपने अंक में ले लिया और अपने साथ उस सिंहासन पर बिठा लिया।

और फिर धीरे-धीरे वह सिंहासन जिस गर्त से आया था, उसी में समा गया। सीता का रसातल में यह प्रवेश देखकर यज्ञ-मंडप में पधारे सभी ऋषि-मुनि और लोग आश्चर्यचकित रह गए। उस समय जितने भी दर्शक थे और अयोध्या के नागरिक थे, वे सभी हक्के-बक्के से होकर कभी राम को देख रहे थे और कभी पृथ्वी में समाई सीता को।

राम ने जो सोचा था, वह नहीं हुआ। उन्होंने तो रात्रि इस स्वप्निल सुख में बिताई थी कि प्रात:काल मुनि के प्रभाव से सीता अपने निष्कलंक होने को प्रमाणित करेंगी और राम के जीवन में जो रिक्तता आई थी, वह एक बार फिर बसंतमय हो जाएगी। और जो कुछ यह हुआ इसकी तो राम ने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

क्षण भर के लिए राम वहां सीता को न पाकर निश्चेष्ट से हो गए। अनेक ऋषि-मुनि यह कहते सुनाई पड□ रहे थे-

'साध्वी तुम धन्य हो, तुमने आज नारी की मर्यादा की जो रक्षा की है उसे युग-युगान्तर तक याद रखा जाएगा।'

कवि गौतम ने कहा, 'एक राजा का धर्म है प्रजा का पालन और उसे तुष्ट करना, प्रजा का अपमान करना नहीं।'

महर्षि गौतम ने राम से कहा, 'हे राजन! तुमने सीता का अपमान किया, वह भी तुम्हारी प्रजा समान थी, इसके लिए तुमने इतना बड□ा निर्णय कुलगुरु वसिष्ठ से बिना परामर्श के लिया। यदि तुम परामर्श लेते तो वे ऐसा अनर्थकारी निर्णय तुम्हें नहीं लेने देते। तुम भूल गए कि तुम्हारे राजधर्म की मर्यादा में सेवा लिखी है या दंड, अपमान नहीं लिखा और निरपराध का जब तक अपराध सिद्ध न हो जाए तब तक तो उसके लिए राजा को दंड देने का अधिकार है ही नहीं।'

राम तो स्वयं ही इस आकस्मिक भयावह दुर्घटना पर स्वयं दुखी थे, अब वे विलाप करते हुए कहने लगे, आज मेरे दु:खों को कोई अंत नहीं है। पहली बार सीता मेरी आंखों से ओझल हुई थी तो मुझे विश्वास था कि मैं उसे लौटा लाऊंगा लेकिन आज... और राम ने लगभग गरजते हुए कहा, 'पूजनीय भगवती वसुन्धरा! मुझे सीता को लौटा दो। तुम मेरी सास हो, तुम सीता की मां हो। अत: अपने इस जामाता को उसकी पत्नी लौटा दो मां! पाताल हो या स्वर्ग, मैं सीता के साथ

ही रहूंगा।'

'इससे पहले कि मैं क्रोध करूं, मुझे सीता लौटा दो। यदि तुमने ऐसा नहीं किया तो मैं पर्वत और वन सहित तुम्हारी स्थिति को नष्ट कर दूंगा। सारी भूमि का विनाश कर डालूंगा, फिर चाहे सब कुछ जलमग्न ही क्यों न हो जाए।'

राम का क्रोध देखकर आकाश में भयानक बिजली चमकी। अश्वमेध यज्ञ के लिए बनाए गए तंबू-डेरे भयानक आधी में उखड□ कर गिरने लगे। ऐसा लगने लगा कि मानो समुद्र और वनों में बड□वानल और दावानल दोनों ही अपना उग्र रूप धारण कर लेंगे।

तभी आकाश से एक दिव्य पुरुष उदित होता दिखाई दिया। राम आकाश की ओर देख रहे थे मानो वह दिव्य पुरुष राम से कह रहा था- 'हे राम। अब यह क्रोध निरर्थक है। तुमने तीसरी बार सीता का अपमान किया था जिसका तुम्हें कोई अधिकार नहीं था। तुम जानते थे कि वह मृग मायावी है फिर भी तुम सीता को छोड□कर चले गए। लक्ष्मण को सीता ने अपनी पति-भक्ति के कारण तुम्हारी रक्षा के लिए भेजा था, उसने अपने ऊपर आने वाले संकट की परवाह नहीं की, तुम्हें संकट में पड□ा जानकर तुम्हारे प्राणों की रक्षा के लिए उसने अपना बलिदान करना स्वीकार किया।

रावण के घर सीता अपनी इच्छा से नहीं गई। तुम भूल गए, कितना कलपे थे तुम, व्याकुल हुए थे और विलाप किया था सीता के वियोग में, जब तक तुमने रावण का वध नहीं किया तुम बार-बार सीता के लिए विचलित हुए।

स्मरण करो राम। जब सुग्रीव राज्य पाकर प्रमाद में अपना दायित्व भूल गया था, तब तुम्हें कितना क्रोध आया था और जब तुमने रावण का वध करके समूची- लंका को जीत लिया तब तुम्हारा राजधर्म जागा, तुम्हारा निजी अहंकार जागा। तुमने अपनी मर्यादा के पालन के कारण उन सभी जनों की भावना की उपेक्षा कर दी, जो केवल तुम्हारे साथ, तुम्हारे लिए सीता को लौटा लाने में सहायक हुए।'

'हे राम! यह सारा वानर दल और सभी समर्पित तुम्हारे साथी सैनिक तुम्हारे राज धर्म के लिए तुम्हारे साथ नहीं हुए थे, एक राक्षस के द्वारा अबला नारी के अपहरण के विरोध में खड□ हुए थे।

'पहली बार तुमने सीता का अपमान तब किया था, जब वह तुम्हारी लंका पर विजय के बाद रावण की बंदिनी बनी हुई अशोक वृक्ष के नीचे तुम्हारे लिए तपस्या करती हुई, लंबे समय के बाद तुमसे मिलन की अपेक्षा लेकर तुम्हारे सम्मुख आई थी। तब अग्नि ने उसकी रक्षा की थी और सीता अपना यह अपमान अपनी पति-भक्ति में सह गयी।' अयोध्या में आकर तुम राजा हो गए तुम्हारे लिए राजधर्म प्रमुख हो गया और जिस महिला ने केवल तुम्हारे प्रेम के आधार पर चौदह वर्ष राजसी सुख त्यागकर जंगलों की खाक खानी, जब अपढ□ गंवार कुछ निम्न जाति के लोगों ने अपनी कुंठा के वशीभूत होकर और अपने अज्ञान के कारण सीता का अपमान किया तो तुमने बजाए इसके कि भरी सभा में उस प्रश्न को उठाकर इसका जड□-मूल से निराकरण करते, अपनी अहमन्धता में अपने आज्ञाकारी भाई को संवाद के लिए प्रतिबंधित

करके सीता को आश्रम में छोड□ आने का आदेश दे दिया। तब तुमने एक गर्भवती सम्भावित मां का अपमान किया। और सीता पुत्रों की ममता में वह भी सह गई। लेकिन हे राम! आज इस भरी सभा में केवल एक राजा ने नहीं बल्कि एक पुरुष ने नारी की पवित्रता का प्रमाण-पत्र मांगकर समूची नारी जाति का अपमान किया है, इसे पृथ्वी भी सहन नहीं करती। इसलिए तुम्हें यह वियोग सहना ही होगा। तुम क्रोध करके विश्व का कुछ नहीं बिगाड□ पाओगे क्योंकि इसका तो नियम है कि सृष्टि होती है तो प्रलय भी आती है लेकिन प्रतिशोध की अग्नि में जो प्रलय होगी उसका समस्त पाप तुम्हें भोगना होगा। इसलिए हे मर्यादा पुरुषोत्तम! अब भलाई इसी में है कि तुम उसके इस गमन को सहज स्वीकार करो। तुम्हारी उससे भेंट अवश्य ही साकेत धाम में होगी।'

ऐसा लगा मानो राम को आत्म-ज्ञान हो रहा था, उनकी भंगिमा जो अभी कुछ देर पहले बिगड□ी हुई थी, अब धीरे-धीरे सामान्य होती जा रही थी।

सारा प्रकोप जो कुछ देर पहले महानाश का संकेत लेकर आया था, वह रुक गया था, राम संयत हो गए थे। यह देखते हुए महर्षि वाल्मीकि ने कहा-

'हे राम। तुम बहुत उदार चित्त हो, सर्वोत्कृष्ट राजर्षि हो, अब सीता की पहचान आपके ये दोनों पुत्र आपके सम्मुख हैं। आप इन्हें स्वीकार कर अपने वंश की शोभा बढ□ाएं।' धीरे-धीरे जनसमुदाय विदा हो गया।

राम को सीता के बिना यह सारा ही संसार सूना-सूना लगने लगा, फिर भी उन्होंने उसी मन से सभी राजाओं, ऋषिराज, वानरों, राक्षसों और मुख्य-मुख्य ब्राह्मणों को यथानुसार धन देकर विदा किया और फिर राम ने लव-कुश के साथ अयोध्या में प्रवेश किया।

राम का स्वर्ग गमन

अब राम अपने दोनों पुत्रों के साथ एक संन्यासी की तरह अयोध्या नगरी में रहने लगे। राज्य करते हुए राम का अधिकांश समय अब धर्म कार्य में ही बीतने लगा। सीता के अभाव के अतिरिक्त पूरे आर्यावर्त में कहीं कोई कष्ट, व्याधि या असंतोष नहीं था। धीरे-धीरे समय बीतता गया। फिर एक समय आया राम की माता कौशल्या यह शरीर छोड□कर स्वर्ग सिधार गई। कुछ ही काल बीता होगा कि सुमित्रा और कैकेयी ने भी उन्हीं का अनुसरण किया।

माताओं का वरदहस्त सिर पर से उठने पर राम स्वयं को अकेला अनुभव करने लगे। अब उनका अधिकांश समय यज्ञ और दान-दक्षिणा में ही बीतता था।

भरत के मामा युधाजित के भेजे हुए महर्षि गार्ग्य ने यह बताया कि सिंधु नदी के दोनों तटों पर जो रमणीय गन्धर्व देश बसा हुआ है, उसको गन्धर्वराज शैलूष की संतानें उसे अपने अधीन किए हुए हैं। युधाजित की इच्छा यह है कि यदि आप हस्तक्षेप करें तो इस प्रदेश को जीतकर भरत कुमार, तक्ष और पुष्कल को यहां इन सुंदर नगरों का राजा बना दिया जाए। ये मामा से सुरक्षित रहकर निश्चय ही एक स्वस्थ शासन दे सकेंगे।

ऋषि गार्ग्य के अनुसार भरत एक बड□ी सेना के साथ गन्धर्व देश गए और वहां तक्षशिला का राजा तक्ष को बना दिया और पुष्पलावत पुष्कल को सौंप दिया।

इसके बाद भरत अयोध्या लौट आए तो राम ने लक्ष्मण को उनके पुत्रों अंगद और चन्द्रकेतु के लिए भी अलग राज्य की स्थापना की।

राम इस समय सत्ता के विकेन्द्रीकरण में रुचि ले रहे थे। कोशल सम्राट राम का राज्य पूरे भारत वर्ष पर फैला हुआ था। उसकी समूची व्यवस्था करने के लिए उप केन्द्रों की स्थापना आवश्यक थी, जो स्वायत्त भी रहे और बड□ी समस्या के लिए अयोध्या से परामर्श करके उसका समाधान करे।

यही सोचकर अंगद को जो कि लक्ष्मण के ज्येष्ठ पुत्र थे, कारुपथ का राजा नियुक्त किया और उसके अनुज चन्द्रकेतु के लिए एक सुंदर चन्द्रकांत नगर बसाया।

राम ने उन दोनों राजकुमारों की अत्यन्त रमणीय और सुंदर पुरी आवास के लिए तैयार कराई और उनका राज्याभिषेक करके अंगद को पश्चिम और चन्द्रकेतु को उत्तर दिशा में भेज दिया।

अब राम अपने दायित्वों से मुक्त हो रहे थे।

एक दिन द्वार पर खड□ एक देवपुरुष ने लक्ष्मण के द्वारा राम को यह सूचना भिजवाई कि एक तपस्वी आपसे भेंट करना चाहता है।

राम ने मुनि का अभिवादन करते हुए राज्योचित स्वागत किया और कहा-

'कहिए देव! मेरे लिए क्या आज्ञा है?'

'पहले तो यह प्रतिबंध सुनें कि जो मनुष्य हमारी बातचीत सुनेगा अथवा बीच में व्यवधान

डालेगा या बिना आज्ञा इस कक्ष में प्रवेश करेगा, आप उसका तत्काल वध करेंगे तभी मैं आपसे वह गुप्त संदेश कह सकूंगा।'

'ऐसा ही होगा देव!' यह कहते हुए राम ने द्वारपाल के स्थान पर स्वयं लक्ष्मण को नियत कर दिया और भीतर एकान्त प्रकोष्ठ में प्रवेश किया।

सब तरफ से एकान्त जानकर उस देव पुरुष ने कहा, 'हे महामना! पूर्व अवस्था में हिरण्यगर्भ की उत्पत्ति के समय माया द्वारा आपसे उत्पन्न मैं आप ही का पुत्र हूं और मुझे काल कहते हैं।'

'आपने लोकों की रक्षा के लिए जो प्रतिज्ञा की थी, वह पूरी हो चुकी है।'

'हे राम! अब आप अपने अवतार काल का समय पूरा कर चुके हैं इसलिए अपने लोक में लौट चलें। प्रजापति ब्रह्मा ने यही संदेश कहने के लिए मुझे आपके पास भेजा है।

राम ने कहा, 'ऐसा ही होगा।'

अभी बातचीत चल ही रही थी कि कक्ष में बाहर महामुनि दुर्वासा पधार गए और उन्होंने तत्काल राम से भेंट के लिए प्रस्ताव किया।

लक्ष्मण ने उन्हें कुछ देर प्रतीक्षा के लिए कहा तो वे क्रोध में समूचे राज्य सहित प्राणियों को, वन-सम्पदा को अपने शाप से नष्ट करने का संकल्प लेने लगे।

लक्ष्मण यह क्रोध देखकर घबरा गए। प्रतिज्ञा के अनुसार अगर वे कक्ष में जाते हैं तो मृत्यु के पात्र बनते हैं और मुनि का कथन टालते हैं तो एक बहुत बड□ा विनाश होने का संकट उनके सामने है।

ऐसे में लक्ष्मण अकेले अपनी मृत्यु को सहज जानकर कक्ष में प्रविष्ट हो गये और राम को महर्षि दुर्वासा के आगमन का समाचार दिया।

राम ने काल को विदा किया और कक्ष से निकलकर महर्षि का भरपूर आतिथ्य सत्कार किया।

लेकिन प्रतिबंध तोड□कर लक्ष्मण ने जो अपराध किया, इसका दंड देने की सोचकर ही राम राहु ग्रस्त चन्द्रमा के समान दिखलाई देने लगे।

चतुर लक्ष्मण उनका यह कष्ट समझ गए और बोले, 'हे तात। इसे कालगति मानकर सहर्ष स्वीकार कीजिए।' महर्षि वसिष्ठ ने भी यही कहा, 'हे वत्स! यही होना था। काल बड□ा प्रबल है।'

'हे राम! साधु पुरुषों का त्याग किया जाए अथवा वध, दोनों ही समान हैं।' मुनि वसिष्ठ से यह सुनकर अश्रुपूरित नेत्रों से बड□ी कठिनाई से राम के मुंह से यह निकला- 'हे लक्ष्मण! मैं तुम्हारा परित्याग करता हूं।'

सरयू नदी के किनारे शीतल जल का आचमन करते हुए- प्राणवायु को रोककर लक्ष्मण ने सांस लेना बंद कर दिया और वे यह लोक छोड□कर दिव्य लोक को प्रस्थान कर गये। अब राम के लिए यह अयोध्या पराई लगने लगी। उन्होंने राज्य को त्याग कर भरत को राज्य सौंपने

का विचार किया और स्वयं को लक्ष्मण के मार्ग पर जाने के लिए तैयार किया।

भरत ने जब राम के राज्य त्याग का विचार जाना तो वह कहने लगे, 'हे रघुनंदन! आपकी सौगंध, आपके बिना यह राज्य तो क्या मैं स्वर्ग भी स्वीकार नहीं करूंगा।'

'आप दक्षिण कोशल कुश को और उत्तर में लव को राजा बनाएं।'

महर्षि वशिष्ठ के परामर्श पर अपने दोनों पुत्रों को राज्य सौंपते हुए राम ने उन्हें अपनी-अपनी राजधानी में भेज दिया।

जब यह समाचार मधुपुरी में शत्रुघ्न को ज्ञात हुआ कि अब श्रीराम यह शरीर छोड□ना चाहते हैं तो शत्रुघ्न ने अपने भाई के साथ स्वयं भी परलोक की यात्रा के लिए मन बनाते हुए शीघ्र ही अपने पुरोहित कांचन को बुला लिया।

मथुरा का राज्य शत्रुघ्न ने अपने ज्येष्ठ पुत्र सुबाहु को सौंप दिया और उसके दूसरे भाग विदिशा का राज्य शत्रुघाती को दे दिया और शत्रुघ्न तीव्रता से राम के पास पहुंच गए और उन्हें अपने इस राज्य विभाजन का समाचार दिया।

अब राम सब प्रकार से मुक्त होकर परम धाम जाने के लिए तैयार हो गए। भरत और शत्रुघ्न भी उनके साथ ही यह शरीर छोड□कर परम धाम जाने के लिए प्रस्तुत थे। राम की महायात्रा के समय सुग्रीव, विभीषण, अंगद, हनुमान, जाम्बवंत आदि और वानर समूह भी एकत्रित हो गया।

और एक प्रात: राम ने सरयू के किनारे भरत और शत्रुघ्न के साथ पहुंचकर एक बार फिर सबसे विदा ली और अयोध्या को अपना प्रणाम करते हुए सरयू में प्रवेश किया। कितने महान थे राम और कितना उदात्त था उनका चरित्र। राम आज भी हमारे बीच मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में विद्यमान हैं। वास्तव में राम अमर हैं।

* * *